युद्ध-यात्रा

युद्ध-यात्रा

जुलाई १९४० ई०

डा० सत्यनारायण

मूल्य

युद्ध-जनित
बढ़ा हुआ
मूल्य
चार रुपए

Published by
K. Mittra,
at The Indian Press, Ltd.
Allahabad.

Printed by
A. Bose,
at The Indian Press, Ltd.,
Benares-Branch.

रूसी-भारतीय मातुश्का

एलेना इवानोवना रोरिक को—

दो शब्द

उमंग भरी गङ्गा से कहीं तेज़ जीवन-धारा का प्रवाह होता है। 'यूरोप-यात्रा' और 'रोमांचक रूस'* के बाद वह मुझे 'युद्ध-यात्रा' की ओर बहा लायगी इसकी मैंने कल्पना भी नहीं की थी। पर यदि क्षितिज-पार के जीवन का पहले से पता ही रहता तो फिर वह जीवनधारा ही कैसी?

सन् १९३५-३६ में आर्कटिक तट से नीचे उतरता हुआ इटली आया। वहाँ से मिस्र और सूडान होता हुआ अबीसीनिया के युद्ध-क्षेत्र में जा पहुँचा। यह सारी यात्रा असाधारण ढंग की हुई। शायद इसी लिए इस पुस्तक के बहुत से पात्र अनोखे दिखाई देंगे। पर वास्तव में इसके कोई भी पात्र कल्पित नहीं हैं। हाँ, उनके नाम अवश्य ही विशेष कारणों से बदल दिये गये हैं।

---

* 'आवारे की यूरोप यात्रा' पुस्तक-भंडार लहेरियासराय और 'रोमांचक रूस में' हिन्दी ग्रंथ-रत्नाकर-कार्यालय, बम्बई से निकली है।

हिन्दी संसार को यह यात्रा-वर्णन कैसा जँचेगा मैं नहीं जानता। इतना स्पष्ट है कि जिन देशों में ये यात्राएँ की गई हैं उनसे हिन्दी पाठक बहुत कम परिचित हैं और वास्तविक युद्ध जिन लोगों ने अपनी आँखों देखा है उनके द्वारा लिखे वर्णन हमारे साहित्य में और भी कम हैं। इसलिए इस युद्ध-यात्रा की उपयोगिता का निर्णय हम पाठकों के ही ऊपर छोड़ते हैं।

इस पुस्तक का प्रूफ़ आद्योपान्त देख डालने तथा उपयोगी सलाह देते रहने का कष्ट मेरे एक बड़े भाई श्री सुमंगल प्रकाश जी ने उठाया है। उनके इस स्नेह का मूल्य मैं नहीं चुका सकता।

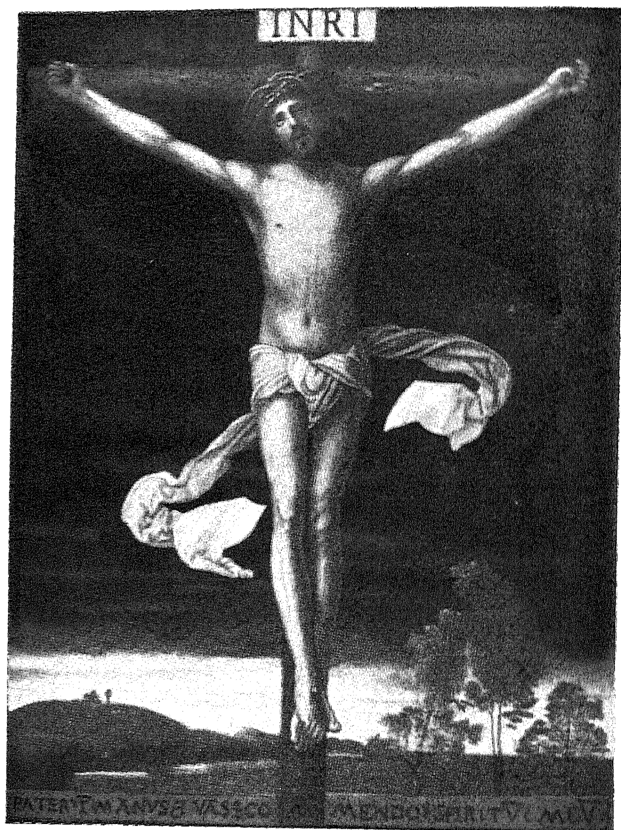
पुस्तक की छपाई के सिलसिले में मैं श्री श्रीनारायण जी चतुर्वेदी तथा पटल बाबू का आभारी हूँ।

हिमालय,
जून १९४०

सत्यनारायण

विषय-सूची

प्रथम खण्ड



इटालियनों की क्राइस्ट आराधना

(ड्यूरर)

युद्ध-यात्रा

ब्रेनेरो

१

धूएँ से घिरे मटमैले शिखर। मेरे बिलकुल पास। यदि मैं लम्बा होता तो शायद उनकी चोटी छू लेता।

वे थे जीवित। प्राण भरे। नीली चादर से ढके इस समय शायद स्वप्न देख रहे थे। वे बहुत कुछ परिचित से मालूम पड़े। उन्हें भली भाँति पहचान पाने के लिए मैंने अपनी आँखें मलीं। उत्तरी इटली के आल्प्स। टीरोल।

पहचान लेने पर मेरे पाँव थर्राने लगे। दो साल पहले इनसे चुपके-चुपके बिदा लेकर निकल भागा था। अब किस मुँह से इन्हें नमस्कार करता?

सबेरा हो रहा था। उत्तर से आने वाली ट्रेन सिस-

कारती, फुँफकारती, थर्राती, हाँफती लम्बी गुफा को पार कर आई।

तुरत ही उसने ब्रेनर पहुँचने की सूचना दी।

२

वह मुझे लेने स्टेशन आई थी। पिछली यात्रा के समय उसके घर टिका था। टीरोल के पहाड़ और झरनों से उसी ने मेरा परिचय कराया था।

गाड़ी रुकने के पहले ही मेरी आँखें उस पर गड़ गईं। अब वह बड़ी हो गई थी। अवस्था लगभग बीस की दीखती थी। मुझे आश्चर्य हुआ। हिसाब लगाया। वह मुझसे सात साल छोटी थी। मेरा पचीसवाँ चढ़ा था। तब? उसके एक कोड़ी लगने में अब भी दो साल की देर थी।

वह खड़ी थी। क़द का अंदाज़ लगाया। मेरे कंधों के बराबर पहुँच जाती। मुँह का आकार अंडे जैसा। उस पर सुनहले लहरदार बाल। उत्तरी जातियों जैसी खड़ी नाक। बड़ी बड़ी नीली टिमटिमाती आँखें। बाहरी दुनिया के प्रति उदासीन। सदा अर्धस्वप्न की अवस्था में। स्पष्ट नीले रङ्ग की होने पर भी अपने भीतर के भावों को ज़बर्दस्ती ढक रखने की चेष्टा में वे सदा लगी रहतीं।

गाल चिकने। गोल। खिले हुए। कुलू के नाग

जैसी चुभती ठोढ़ी। छाती की गठन इटालियन ललनाओं जैसी नुकीली। पर स्वभाव दिखावटी भावुकता का विरोधी।

भीतर के विद्रोही भावों की लगाम विवेचक बुद्धि हमेशा जकड़ कर ताने खड़ी रहती। छिपाने की हज़ार चेष्टा करने पर भी इन दोनों का संग्राम बहुधा शीशे की तरह चमकते हुए सफ़ेद चेहरे पर झलक जाया करता। जवानी की चपलता, उच्छृङ्खलता, मस्ती पर्याप्त मात्रा में वर्तमान थी पर अब गंभीरता भी अपनी छाप डालते रहने की कोशिश से बाज़ नहीं आ रही थी।

नटखटी टीरोली पोशाक। लकधकी। छकलिया। चुस्त। बहुत फबती। वह शरीर की प्रत्येक गठन को भली भाँति प्रकट करती रहती। उत्तरी इटालियन आल्प्स की टीरोली कन्या के पहचाने जाने में भूल नहीं की जा सकती।

'लूसी—' मैंने पुकारा।

वह मुसकराती, लपकती, उछलती मेरे डब्बे में आई। मिली। साँपों के से सुनहले बाल पकड़ कर मैंने खींच दिये।

'ग्रासी—(धन्यवाद)' उसने अपने स्वाभाविक सुरीले स्वर में कहा। यह अब तक पंचम पर ही था। इसमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ था।

हम मुसाफ़िरों के बीच अपना रास्ता बनाते और एक दूसरे को धक्का देते, खींचते इतराते स्टेशन के बाहर निकले।

३

यहाँ का तो सारा दृश्य ही बदल गया था।

'धप्...धप्......ठप्...ढप्...'

दूसरी ओर से—'मच...मच...हुमच...हुमच...'

कहीं कहीं से—'मार्च ! मार्च !' बीच-बीच में कर्कश स्वर में—'लेफ़्ट...राइट...! दाँयें घूम ! आगे...'

ब्रेनेरो की पहाड़ियों में चारों तरफ़ से यही आवाज़। जितने लोग दिखलाई पड़ते सबकी देह पर वर्दी। यदि किसी को पूरी वर्दी न मिली रहती तो उसने आधी, चौथाई वा नाम के लिए उसका एक टुकड़ा ही पहन लिया था। बहुतेरों ने अपनी साधारण पोशाक ही इस ढंग से पहनी थी कि वह दूर से ठीक वर्दी जैसी दीखती।

उनके कंधों से राईफल झूला करते। दूर से ही, पर ज़रा ध्यान से देखने पर यह भी स्पष्ट हो जाता कि उनमें कितने राईफल नक़ली वा पिछली शताब्दियों में बने थे। किसी किसी के पास तो वे निरे काठ के थे।

आठ वर्ष के बच्चे से पचास वर्ष के बूढ़े तक इस क़वायद में शामिल थे। ये अलग-अलग टुकड़ियों में मार्च करते पर कभी-कभी एक साथ हो जाते और चार-चार की क़तार में मुख्य सड़क पर आते।

औरतें, छोटे बच्चे और बूढ़े, जो पैरेड में भाग नहीं ले सकते थे, रास्ते के किनारे खड़े हो ताली पीटते, पीछे मुँह फेर कर हँसते और सामने गंभीर हो 'डूच—डूच—डूच' की आवाज़ लगाते। जब कभी कोई क़वायद कराने वाला बड़ा अफ़सर सामने से गुज़रता, वे उसे हाथ ऊँचा कर फ़ैसिस्ट ढंग की सलामी दे देते और राष्ट्रीय गीत—गियोवानेज्ञा—गाते।

दर्शक और क़वायदी दोनों के चेहरों से झलक जाता कि वे सिर्फ़ हुक्म तामील करने में लगे हैं। कितने अपना मजबूर होना न छिपा सकने के कारण बार-बार जम्हाई वा अँगड़ाई लिया करते। युवतियाँ और लोगों की दृष्टि बचा अपने साथी का ध्यान अपनी ओर खींच फ़ौजी अफ़सरों को अपनी पूरी जीभ बाहर निकाल दूस दिया करतीं।

फ़ौजी 'कमांड' के कारण हवा में सख़्ती और रूखापन भरता आ रहा था। अपनी इच्छा के ख़िलाफ़ कवायदियों को अपने में फुर्ती और चुस्ती की अतिरिक्तता दिखलानी पड़ती।

पहली झलक में मुझे विश्वास नहीं हुआ कि ये इटालियन हैं। अभी दो साल पहले इनकी सिफ़त भावुकता में प्रकट होते देखी थी। ये गीत गाते और स्वप्न देखा करते थे। इनकी याद आने पर ये मुझे अपनी कल्पना में अभी भी प्रसिद्ध संगीतज्ञ गूनो का 'आवे मारिया' गाते हुए दिखलाई देते।

मैंने अपनी आँखें मलीं। सामने ज़रा ऊपर की ओर देखा। वे ही धूँएँ से घिरे मटमैले शिखर। ये इस समय भी सोये स्वप्न देख रहे थे। पर इनका रंग फ़ौजी ख़ाकी क्योंकर होता जा रहा था?

उनकी चुटिया पर दृष्टि गई। एक जगह पर वह ऊँची थी। ठीक मुसोलिनी के चौड़े मुँह सी दीखी। इस समय वह विकराल रूप में खुला था। सारे संसार का ग्रास कर लेने पर भी वह शायद ही शांत होता।

चारों तरफ़ दृष्टि घुमाई। आल्प्स पहाड़ भी आज वर्दी पहने दिखलाई दिया। उसके भी शीघ्र ही 'घड़ाम्...धुड़ुम...' कर पाँव पटकने को आशंका होने लगी।

मैं चुपचाप अपनी संगिनी के घर चला।

४

'वहशी? वहशी तो ये ख़ुद हैं!' झुँझलाये हुए स्वर में लूसी ने कहा—'वहशी मुसोलिनी, उसकी फ़ैसिस्ट पार्टी, उसकी जमात में चलने वाले इटालियन हैं।'

बाहर से फिर आवाज़ आई—

'वहशी अबीसीनिया को सभ्य बनाने अफ़्रिका चलो। अडुआ का बदला लो। इटालियन फ़ौज में भर्ती हो। वीर

मुसोलिनी के सैनिक बनो।' 'विव इल डूच'—'मुसोलिनी ज़िन्दाबाद!' डुगडुगी पिटती जा रही थी।

इस बार लूसी से न रहा गया। जिधर से आवाज़ आ रही थी उधर की खिड़की उसने बंद कर ली और कहा—

'मैं इन जानवरों को देखना नहीं चाहती। वर्दी पहन लेने पर तो इनमें फ़क़त दुम की कसर रह जाती है। इटालियन भी क्या कभी सैनिक बन सकते हैं?'

रास्ते से घर्र घर्र करती हुई एक मोटर पर लदी तोप निकल गई। हम लोगों के घर की पतली दीवारें हिलने लगीं।

'ये सब पागल हो गये हैं! लड़ाई के सिवा इन्हें और कुछ सूझता ही नहीं। और तो और, अपने साथ-साथ अब ये हमें भी खींच ले जाना चाहते हैं। मेरी तो तबियत ऊब गई।'

'अभी तो तैयारी ही हो रही है।'—मैंने कहा।

'तैयारी क्या? इटली की सीमा में प्रवेश करते ही तुम्हें दिखलाई नहीं देता कि लड़ाई छिड़ चुकी है?'

'हाँ, नवीनता तो ज़रूर है।'

'इसे तुम नवीनता कहते हो? मालूम नहीं, हम टीरोली अभी ही कितना झेल चुके। यहाँ के किसी काफ़े वा नाचघर में 'मार्चिङ्ग' और 'युद्धनृत्य' के सिवा और कुछ दिखलाई देता है? कितने दिनों से मेरी तबीयत कर रही है कि—'री मत-

वाली वियेना—' सुनूँ और उसके तर्ज़ पर नाचूँ; पर यह तो अब सारे इटली में हमें कहीं मिलता ही नहीं। यह सब नष्ट कर दिया गया। कहो तो—तुम्हें ये इटालियन जंगली नहीं दिखलाई देते?'

'लेकिन तू भी तो इटालियन है?'

'मैं? तुम टीरोलियों का अपमान कर रहे हो।'

'टीरोल भी तो इटली के अधीन है।'

'ज़बर्दस्ती दख़ल किये रहने का कोई मतलब नहीं होता। इटालियन लोगों को हम टीरोली जितनी घृणा की दृष्टि से देखते हैं उतना नीच उन्हें शायद ही और कोई समझता होगा।'

'इटालियन लोगों को घृणा करती हो—फिर तुम्हारा दोस्त एनरिको भी तो इटालियन ही है!'

'अरे—वह दूसरी चीज़ है। दूसरे, एनरिको भी बहुत अंश में टीरोली बन गया है। किसी बात को तुम इतना अक्षरशः नहीं ले सकते।'

'वह आजकल भी टीरोली ही है?'

'अवश्य—'

'यह क्योंकर?'

'इसकी मैं तुम्हें क्या वजह बतलाऊँ?'

'शायद तुम्हारी ख़ूबसूरती—'

'ग्रासी (शुभेच्छा के लिए धन्यवाद)! पर तुम्हें यह सूझ बड़ी देर कर आई।' उसने रूखी हँसी दिखलाते हुए कहा।

मैं उस हँसी का ठीक तात्पर्य नहीं समझ सका।

५

तीसरे पहर वह मुझे अपने बग़ीचे में मिली। इस समय उसके शरीर पर काले रंग का चुस्त गाउन था जिस कारण वह कुछ अधिक लंबी दिखलाई दे रही थी। आँखें कुछ और बड़ी हो गई सी दीखती थीं। बातचीत के ढंग में पहले की स्वाभाविक चपलता दब रही थी और उसके स्थान पर विपरीत परिस्थिति के साथ आई गम्भीरता उग्र बनती जा रही थी।

उसने देर तक कस कर मेरा हाथ दबाये रखा। कुछ गड़ने लगा। मैंने देखा उसकी विवाह वाली उँगली में अँगूठी है।

'यह क्या?' मैंने पूछा।

'कुछ भी नहीं। एक खिलौना। जिस दिन हमारी शादी होने वाली थी उसी दिन वह अफ़्रिका भेजे जाने वाले रिकरूटों में भर्ती किया गया। आजकल वह इन सामने की पहाड़ियों में पैरेड किया करता है।'

'अभागा हो रहा। शादी की बात बहुत पहले से चल रही थी?'

'एक साल से। मैं ही इन्कार करती जा रही थी।'

'इन्कार ?'

'हाँ, हाँ, मैं ही अभागी इन्कार करती गई। उसके पास रुपये नहीं थे और उसके बिना तो रोमांचक जीवन शुरू नहीं किया जा सकता।'

हम दोनों एक बेंच पर बैठ गये। हवा में ठंढक थी।

'तुम थके तो नहीं ?' उसने पूछा।

'नहीं।'

वह सट कर बैठी। मेरे कंधे पर अपना सर रखा और अपने अंग से मेरा हाथ लपेटते हुए कहा—

'यहाँ से हाथ हटाना नहीं—मुझे सर्दी लग रही है।'

वह आँखें मूँदे रही।

'यह जीवन छोड़ कर लड़ाई में हिस्सा लेने वाले युवक मूर्ख हैं।'

मैंने हुँकारी दी।

'अभागे एनरिको के लिए मुझे बड़ा दुख है—लेकिन इससे फ़ायदा ही क्या ? मैं उसे भूल जाना चाहती हूँ।'

सामने के पहाड़ से सर्चलाइट फेंका जा रहा था। हमारी आँखें चकाचौंध में पड़ गईं। दूर पर घर्र-घर्र की सी आवाज़ सुनाई दी। गोलियाँ चलीं।

'ये बेवकूफ़ रात को भी चुप नहीं बैठते। इस तरह रोज़ ही रात के हमले की हिकमत सीखते हैं और हमारा सारा मज़ा किरकिरा कर दिया करते हैं।'

'और मान लो, अगर यह असली लड़ाई होती ?'

'मैं तो उस वक्त भी ऐसे ही तुम्हारा गला पकड़ कर झूला करती। लड़ाई को मैं सख्त नफ़रत की नज़र से देखती हूँ—उसका ख़याल भी मन में नहीं लाना चाहती।'

हम लोगों के सामने की नक़ली लड़ाई का रुख़ दूसरी ओर फिर गया। हमारी ओर और सर्चलाइट नहीं घुमाई गई। अंधकार घना हो आया। हम दोनों अँधेरे में ही एक दूसरे का मुँह देख पाने की कोशिश कर रहे थे।

एक-ब-एक वह मुझ से दूर खिसक कहने लगी—

'तुम इतनी सारी दुनिया छान आये लेकिन रह गये बेवकूफ़ ही बने। तुम्हें लड़कियों के साथ बात करने, मिलने जुलने की तमीज़ नहीं आई। हमारे यहाँ आये भी तो लगे लड़ाई की धुन रटने।' निकट आ कानों में कहा—'अजी, अब भी तो कहो—तेरे बाल कैसे सुन्दर हैं, अँधेरे में कैसी चमक है, और अंत में कहो—मैं तुझे—'

मैं चुप रहा।

'क्या मैं पहले की तरह ख़ूबसूरत नहीं ?'

'पहले से कहीं अधिक—'

'आ हा...' कह फिर पहले की तरह चिपट कर कहने लगी—

'तुम्हारा शरीर कितना गरम है ! मैं गरमी पसन्द करती हूँ। चलो हम दोनों रोम चले चलें, नहीं नैपल्स चलें—आज ही चलो, रोम चले चलें और वहाँ से फिर कभी न लौटें।' पहले की तरह आँखें मूँद स्वप्न देखती हुई कहने लगी—'मैं होटल में रोज़ाना बारह बजे तक लेटी स्वप्न देखा करूँगी, प्रत्येक दिन की संध्या के लिए अलग-अलग कार्य-क्रम तैयार करूँगी। ट्वायलेट करते-करते ही तो पाँच बज जायँगे। फिर हम लोग विया-मञ्जोनी में निकलेंगे। सेंट पिटर्स के गुम्बज की अपेक्षा मेरा मुखड़ा देखना लोग अधिक पसंद करेंगे। मैं बारह बजे रात तक नाच करूँगी, फिर तुम्हारे हाथ में हाथ डाल होटल लौटूँगी। सोने के पहले हम लोग ड्राइंग रूम में बैठ कर और एक बार हुक्म देंगे—'शराब लाओ—काप्री—' सफ़ेद चकचक करते बरफ़ के भीतर से गिलास निकाल कर हमारे सामने रखे जायँगे। मैं उसे लेकर फिर एक बार खड़ी हो जाऊँगी और गाऊँगी 'त-रा-ला-ला...ला...ला...आ-'

'अः अः' करते-करते वह बेंच से लुढ़क गई। 'तुमने मुझे पकड़ क्यों नहीं रखा ?' गुस्से में आकर उसने मुझसे पूछा।

'तुम्हारा अलाप बिगड़ जाता और स्वप्न-संगीत जो भंग हो जाता।' उसकी धूल झाड़ते हुए मैंने उत्तर दिया।

६

सिर्फ़ लूसी ही नहीं, सारा टीरोल इस प्रकार का स्वप्न देख रहा था। मुसोलिनी की अफ़्रिका दख़ल की तैयारी सबको अखर रही थी। लोग इसे फ़ुज़ूल की तबाही, बरबादी और ख़ूनख़राबी मानते। लोगों को बेगार के तरीक़े पर जितनी ही कवायद कराई जाती वे उतना ही इसे अपने स्वतंत्र जीवन में अड़ंगा मानते और भीतर ही भीतर जला करते। टीरोलियों को इस समय इटली के अधीन रहना बहुत अधिक खटकने लगा था। ऐसे लोगों की भी संख्या दिनोंदिन बढ़ती जा रही थी जो इस मौक़े से लाभ उठा कर अपने प्रान्त को स्वतंत्र कर लेना चाहते थे।

पर दैनिक जीवन के हेर-फेर जितनी और कोई भी बात उन्हें नहीं खटका करती। उनका अब पहले जैसा जीवन नहीं रह गया था। अब वे छुट्टी का समय शान्ति और चैन से नाच-गाने में नहीं बिता सकते थे—इसके बदले उन्हें कवायद में भाग लेना पड़ता था। इसी कारण जो लोग राजनीति में भाग नहीं भी लिया करते वे भी इस समय मुसोलिनी की नीति का विरोध करने लगे थे। उन्हें अपना वर्तमान जीवन

अस्वाभाविक तरीक़े से कर्कश बना दिया गया दीखता। इसी लिए स्वाभाविक समय की अपेक्षा कहीं अधिक रफ़्तार से शांति और सुख की ओर उनका मन दौड़ा करता।

जब से कवायद सिखलाई गई, लोगों के अफ्रिका भेजे जाने की चर्चा शुरू हुई, उनका असंतोष और भी अधिक बढ़ने लगा। कितने इसका खुल कर विरोध करने लगे।

उन दिनों मैं प्रायः लूसी के साथ चौक जाया करता। वहीं एक मकान में वह लकड़ी के खिलौने बनाया करती थी। यह इस शहर का बहुत पुराना व्यवसाय था और इसी से वहाँ के बाशिंदों की आजीविका चला करती। पर इस क्षेत्र में भी तैयार की जाने वाली चीज़ें बिलकुल भिन्न हो गई थीं। अब खिलौनों में फलवाले, सौदागर, मिठाईवाले, किसान, मज़दूर आदि नहीं बनाये जाते। वहाँ तैयार किये जाते थे सैनिक। इन दिनों शायद ही वैसा कोई खिलौना बनता होगा जिसे वर्दी न पहनाई गई हो। लड़ाई के टैंक, तोप, मेशीनगन जैसे हथियार भी खिलौनों के रूप में दिखलाये जाते। सबसे ज़्यादा संख्या में इटालियन और अबीसीनियन सैनिकों की लड़ाई वाले खिलौनों की माँग रहती। इनमें इटालियन सैनिक हब्शियों की छाती पर रौंदते होते। इस खिलौने का आर्डर ख़ास इटालियन सरकार द्वारा दिया जाता।

बोलने की मुद्रा में काठ के मुसोलिनी भी बहुत अधिक संख्या में तैयार किये जाते। एक काठ की बहुत बड़ी मूर्ति शहर के मुसोलिनी चौक पर भी स्थापित की गई थी।

जब से टीरोली सैनिकों के अफ्रिका भेजे जाने की बात चली थी, मूर्ति बनाने वाले मुसोलिनी के वास्तविक चेहरे से मिलती-जुलती उसकी मूर्ति बनाने के बदले उसकी व्यंग-मूर्ति बनाया करते। लूसी हमेशा मुसोलिनी को फूटी आँख वाला दिखलाने की चेष्टा किया करती। फिर भी इटालियन पुलिस का आतंक और डर इस समय भी उस हद पर था कि लोग अपने भाव बिना गोली से उड़ा दिये जाने का भय छोड़े खुल कर व्यक्त नहीं कर सकते थे। यदि कभी आपस में मुसोलिनी की नीति का कानाफूसी के रूप में वे विरोध भी करते होते तो ज़रा सी आहट पाते ही चेहरे का रुख़ बदल 'डूच, डूच' उत्साह दिखलाने की चेष्टा करते हुए कह उठते।

७

खिलौनों के कारख़ाने की खिड़की से शहर के मुख्य चौक का पूरा-पूरा दृश्य दिखलाई देता। बीच चौराहे पर नई स्थापित की गई काठ की मुसोलिनी की बड़ी मूर्ति थी। इस मूर्ति का रुख कारख़ाने की ओर था। शहर की आम सभा जब कभी बुलाई जाती, यहीं पर हुआ करती और वक्ताओं का

स्थान मुसोलिनी के दाहिने पाँव के पास रहता। कवायद सीखने वाले रिकरूट अथवा अफ्रिकन युद्ध के लिए प्रचार करने वालों का दल सामने की सड़क से आता और ये कारख़ाने की खिड़की से बहुत दूर से ही दीख जाते। इन दिनों कारख़ाने में एक नया नियम जारी किया गया था कि इटालियन प्रचारकों के चौक पर आने पर कारख़ाने में काम करने वाले काम छोड़ बरामदे में खड़े हो 'डूच-डूच' चिल्ला कर उनकी अभ्यर्थना किया करें। इस मौक़े पर खड़े होने और चिल्लाने वालों की हाज़िरी ली जाती थी। जो इसमें एक बार भी चूक जाते उन्हें अपनी उस दिन भर की मज़दूरी से बाज़ आना पड़ता। लोग यह क़ानून यंत्रवत् पालन करते।

एक दिन दूर से एक नई प्रकार की आवाज़ सुनाई दी। यह आवाज़ और बार की अपेक्षा अधिक बुलन्द, गम्भीर और स्वाभाविक जान पड़ती थी। थोड़ी देर में आवाज़ लगाने वाले भी दिखलाई दिये। ये बेतरतीब कवायद करते आ रहे थे। न तो उनकी क़तार का ही कोई सिलसिला था और न उनके पाँव ही ठीक टैक्ट में पड़ रहे थे। सबके आगे एक साधारण सैनिक हाथ में लाल झंडा लिये झटकारता और उसके पीछे सारी जमात उसी वेग में हाथ ऊँचा कर नारे लगाती आ रही थी।

'आज़ाद टीरोल ज़िंदाबाद!' वे चिल्ला रहे थे। मुसोलिनी की मूर्ति के निकट आने पर उन्होंने नारा लगाया—'मुसोलिनी मुर्दाबाद—'

उन्हें इतने से ही संतोष नहीं हुआ। किसी ने मूर्ति के ध्वंस कर देने का प्रस्ताव किया। पलक मारते-मारते ही मूर्ति गिरा कर उसमें आग लगा दी गई। उसकी लपटें ख़ूब ऊँची उठने लगीं। उसे घेर कर कवायदी खड़े हो गये और अपना आगे का कार्यक्रम तय करने लगे। सबने एकमत से तय किया कि उनमें से प्राण रहते कोई भी अफ़्रिका के लिए रवाना नहीं होगा। इटालियन फ़ौज का सामना खुली लड़ाई में कर सकना उनके लिए असंभव था इसलिए कितने इस विचार के थे कि उन्हें आस्ट्रिया और जर्मनी जाकर भरपूर रूप से हथियार इकट्ठा करना चाहिए और मुसोलिनी के अफ़्रिकन युद्ध में जम कर पड़ जाने के वक़्त धावा बोल कर टीरोल को आज़ाद कर लेना चाहिए।

चौक से प्रस्थान करने के पहले उनमें से एक ने नारा लगाया—'पाँचवीं आलपीनी रेजिमेंट ज़िंदाबाद।'

इस नारा लगाने वाले की ओर लूसी देखती और आवेग न रोक सकने के कारण एनरिको एनरिको पुकार उठती। मेरा हाथ पकड़ कर मुझे भी उसने उसी की ओर देखने के लिए

बाध्य किया। मझोले क़द, गोल सर, काले बाल वाला दक्षिणी इटालियन। टीरोलियों से भिन्न चेहरा होने के कारण वह शीघ्र ही लोगों के ध्यान में आ जाता।

लूसी ने उसका ध्यान अपनी ओर खींचने की कई बार चेष्टा की; एक बार वह खिड़की पर भी जा खड़ी हुई, पर असफल रही। एनरिको इस समय आवेश में था—उसका ऊपरी वीर-रस उसके स्वाभाविक रोमांच-पसंद स्वभाव को ढक रहा था। चौक से टलते समय उसने झण्डा अपने हाथ में ले लिया और सबके आगे-आगे वहाँ से चला।

कुछ ही देर में इटालियन फौज भी उस विद्रोही पाँचवीं आलपीनी रेजिमेण्ट का पीछा करती आ पहुँची। इनके पास बड़ी मेशीनगन थी जिसे पहाड़ी घोड़े खींचे लिये जा रहे थे। ये भी मुसोलिनी चौक पर रुके। मूर्ति इस समय भी जल रही थी, पर इसके लिए इनके चेहरों पर क्रोध नहीं आया। शायद इन दिनों सैनिकों को क्रोध भी प्रचार-मन्त्री की आज्ञा पाने पर ही दिखलाना पड़ता था।

इन्हें इस समय सभा करने और लोगों को समझाने का काम दिया गया था। इस कम्पनी के प्रचार-विभाग का नायक एक ऊँचे स्थान पर जा खड़ा हुआ। शहर के बाशिंदे इन्हें भी घेर कर खड़े हो गये। अभी कुछ देर पहले क्रान्ति-

कारी फौज के लिए तालियाँ दी थीं, अब इनके लिए देने लगे। बिना किसी आवेश के कम्पनी का नायक कह रहा था—

'टीरोल की दरिद्रता दूर करने के लिए ही मुसोलिनी ने अफ्रिका दख़ल करने का हुक्म दिया है। अभी यहाँ आप लोग दो लीरा (चार आने) भी मुश्किल से कमा पाते होंगे, पर यदि साधारण मज़दूर की हैसियत से फ़ौज में भर्ती हो जायँ तो कल से आपको बत्तीस लीरा रोज़ाना मिलने लगें।'

इसके बाद उसने लोगों से रिकरूटों में अपना नाम लिखाने की अपील की। लोग चुपचाप खड़े सुनते रहे।

८

उस दिन आधी रात तक इटालियन फ़ौज के शहर में आने का ताँता लगा रहा। नगर निवासियों की अपेक्षा सैनिकों की ही संख्या अधिक हो गई। सबेरा होने के पहले ही विद्रोही सैनिकों की गिरफ़ारी आरम्भ हुई। उन्हें सशस्त्र सैनिकों के पहरे में स्टेशन पहुँचाया गया। वहाँ पहले से ही एक ख़ास ट्रेन समुद्र-किनारे तक जाने के लिए तैयार रखी गई थी।

गिरफ़ारी शहर के हर एक कोने में हुई थी और खाना-तलाशी से शायद ही कोई घर बचा होगा। प्रत्येक परिवार का कोई न कोई परिचित पकड़ा गया था, इसी लिए सबेरा

होते न होते शहर वालों की अच्छी ख़ासी भीड़ स्टेशन पर जम गई थी।

हम लोग जिस समय वहाँ पहुँचे, स्टेशन के चारों तरफ़ सशस्त्र सैनिकों का पहरा बैठ चुका था। प्लैटफ़ार्म पर सिर्फ़ अफ़सरों और उनके सशस्त्र शरीर-रक्षकों के जाने की इजाज़त थी। पकड़ कर लाये गये विद्रोही सैनिक गाड़ी के खिड़की-बन्द डब्बों में बैठा रखे गये थे। ध्यान से देखने पर प्लैटफ़ार्म के दोनों सिरों पर दो मेशीनगन भी फ़ायर करने की हालत में तैयार कर रखे दिखलाई दिये। गोली लगाने और घोड़ा दबाने के लिए अफ़सर तैनात किये गये थे।

चारों तरफ़ स्तब्धता छाई थी। ट्रेन में एंजिन भी आकर जुड़ गया। हम लोग जहाँ पर खड़े थे वहाँ से उसके भाप निकालने की आवाज़ सुनाई दे रही थी। शायद अब वह चलने ही वाला था।

'इन्हें कहाँ ले जायँगे?' मेरे पास खड़े एक व्यक्ति ने मुझसे पूछा।

'कसाईखाने में—' लूसी ने मेरे बदले उत्तर दिया—'इन सबकी अफ़्रिका में बलि चढ़ाई जायगी।'

'और ये सब—'

'हाँ, सब के सब टीरोली हैं।'

'इटालियन लोगों के जैसे जल्लाद दुनिया में और कहीं शायद ही मिलेंगे !'

पास खड़े एक सैनिक के कानों तक ये बातें पहुँचीं। वह घुड़क कर हमारी ओर देखने लगा। 'घर्र-घर्र' की आवाज़ होने के कारण हमारा ध्यान ट्रेन की ओर गया। वह धीरे-धीरे सरकने लगी थी। एकाएक कई डब्बों की खिड़कियाँ टूटती हुई दिखलाई दीं और उनसे कूद-कूद कर हथकड़ी से जकड़े सैनिक बाहर आने लगे। गाड़ी खड़ी कर दी गई।

प्लैटफ़ार्म पर खड़े सेनानायक ने सैनिकों को फिर से गाड़ी में सवार होने का हुक्म दिया। पर वे कब सुनने वाले थे !

'आज़ाद टीरोल ज़िन्दाबाद—' 'अफ़्रिका की लड़ाई को लानत—' 'मुसोलिनी मुर्दाबाद—' 'अफ़सरों को मार डालो—' चिल्लाते हुए वे सेनानायक की ओर लपके। ठीक इसी समय बड़े ज़ोरों की 'तक···तक···तक···तक···तक···' आवाज़ होने लगी। प्लैटफ़ार्म के दोनों सिरों के मेशीनगन आग उगल रहे थे। विद्रोही सैनिक प्लैटफ़ार्म पर बिना सहारे के काठ के खम्भों की तरह पटापट गिरने लगे। कितनों की मृत्यु मुँह से चीख़ निकलने के पहले ही हो गई। कितने घायल हो छटपट करने लगे।

शहर के बाशिन्दे, जो आधा मिनट पहले विद्रोहियों के साथ नारा लगाने जा रहे थे, प्लैटफार्म का दृश्य देख तितर-बितर हो गये। दो-तीन झूठी आवाज़ें इनकी ओर भी कर दी गईं जिनसे भगदड़ मच गई। लूसी मेरा हाथ पकड़े ज़मीन पर बैठ गई। मैंने उसे ऊपर उठाने की कोशिश की पर सफल न हुआ। उसकी आँखों के सामने अँधेरा छा गया था।

सेनानायक ने शहर वालों को टल जाने के लिए कहा। आपत्ति करने की तो बात दूर रही, यदि किसी ने चूँ तक भी की तो बन्दूक़ के कुन्दों से उसका सर तोड़ देने की धमकी दी। स्टेशन के चारों तरफ़ का, सशस्त्र सैनिकों का, पहरा दोहरा कर दिया गया। थोड़ी देर में शहर की ओर से दो ख़ाकी रङ्ग की फ़ौजी मोटर-लारियाँ आईं। उनसे काली वर्दी पहने सैनिक झटपट उतर पड़े और एक मिनट के भीतर ही प्लैटफ़ार्म पर क़तार लगा ली। इन्हें मरे और घायल, चीखते-छटपटाते सब सैनिकों को फिर से ट्रेन के डब्बों में भर देने का हुक्म दिया गया। हुक्म भर मिलने की देर थी। ये ज़िन्दे, अधमरे और मरे सैनिकों को एक-सा ही घसीट कर डब्बों में भरने लगे। अपनी काली पोशाक में ये पूरे जल्लाद दीखते थे और इनका नायक तो इस समय साक्षात् यमराज बन रहा

था। इस बीभत्स दृश्य की ओर देख सकना भी कठिन हो रहा था। लूसी को मूर्च्छा आ गई थी।

गाड़ी खुल जाने पर भी पहरा हटाया नहीं गया। शहर-वालों में जो अज्ञान होकर गिर गये थे उन्हें मोटरलारियों में भर कर अस्पताल भेज दिया गया। लूसी को मैंने घोड़ागाड़ी पर सवार कराया। रास्ते में मुँह पर पानी छिड़कने पर उसे थोड़ा होश आया। आँखें खोलने के पहले ही उसने प्रश्न किया—

'उसे ले गये ?'

६

जड़ मज़बूत न रहने के कारण टीरोलियों का विद्रोह शीघ्र ही ठण्ढा पड़ गया। गोलीकाण्ड के ही दिन मार्शल-ला भी सारे शहर में जारी कर दिया गया और फ़ौजी सिपाहियों के आतङ्क ने लोगों के भाव को बुरी तरह पीस डाला। दो दिनों के बाद सब मामला शान्त हो गया। बिरले लोग ही उसकी चर्चा फिर से उठाया करते।

लूसी तो इसे बिल्कुल ही भूल जाना चाहती थी। 'बहुत भयानक दृश्य था—' जैसे ही मेरे मुँह से निकलता, वह मुझसे कहती —'बस रहने भी दो। और क्या बातचीत का कोई विषय तुम्हारे पास नहीं !'

मनुष्यों की स्मृति बड़ी ही क्षणिक होती है। स्वभाव के विपरीत की कोई भी छाप गहरी नहीं बैठती। आवेश शान्त हो जाने पर मन फिर अपनी पुरानी रफ़्तार से चलने लगता है।

अगले सप्ताह के आरम्भ में लूसी ने कहा—

'मैं बहुत बड़े रोमाञ्च का स्वप्न देख रही हूँ। चलो हम लोग आज ही रोम चले चलें—'

'कौन सा रोमाञ्च ? वही ट्वालेट करने, घूमने निकलने और त-रा-ला-ला-ला वाला न !'

'अजी नहीं ! वह तो मैं कब की भूल गई। अब मैं अफ्रिका जाऊँगी।'

'वह तो रोमाञ्च का कोई सुन्दर स्थान नहीं।'

'हमारे लिए बन जायगा। तुम चलो तो सही, मैं रोम से अपने पासपोर्ट और यात्रा की अन्य बातों की तैयारी तो कर लूँ।'

'सचमुच में तुम अफ्रिका जाओगी ?'

'हाँ—मैंने यही ठान लिया है। मैं नर्स का काम करूँगी—रेडक्रास में भर्ती होऊँगी। बहुत से घायल सैनिक हमारे पास आया करेंगे जिनके घावों पर मैं मलहम लगाया करूँगी। वैसे ही घायलों में एक दिन हठात् एनरिको भी आ हाज़िर होगा। बतलाओ तो वह मिलन कैसा सुन्दर होगा ? मुझे तो उसकी कल्पना कर अभी ही रोमाञ्च हो रहा है। एक-ब-एक मुझे देख

कर वह अवाक् रह जायगा। वह मूर्च्छित अवस्था में अस्पताल में दाख़िल होगा—मैं अपनी गोद में उसका सर ले उसे होश में लाऊँगी। वह आँखें खोलेगा—मैं उससे लिपट जाऊँगी।'

आख़िरी वाक्य पूरा करते न करते वह मुझसे लिपट गई और बोली—

'और फिर जन्म-जन्म हम लोगों का वियोग नहीं होगा।'

———

रोम

१

रोम में सबेरा हुआ। हम तीबर नदी के किनारे निकल आये। शायद वह रविवार का दिन था। आस-पास के गिर्जाघरों का घण्टा सुनाई दे रहा था। बहुत से लोग आँखें मींजते उसी ओर दौड़े जा रहे थे—कुछ अन्यमनस्क हो तीबर पर एक दृष्टि फेर दिया करते।

उस पार दूर पर शान्त, एकान्त, सर उठाये, सेंट पीतर का गुम्बज दिखलाई दिया। मिखाएलेंगेलो की यह कीर्ति आज भी सारे रोम को अपनी छत्रछाया में रखने की चेष्टा कर रही थी। उस गिर्जे के भीतर की चित्रकारी से प्रभावित हो अब भी बहुतेरे यात्री मादोना जैसे सुन्दर चेहरे रोम में ढूँढ़ने की कोशिश करते। मैं स्वयं लियोनार्दो की कल्पना जैसी अर्धस्वप्न अर्धमुसकान वाली 'मोना-लीज़ा' की खोज में था।

पर हमें हताश होना पड़ा। नया रोम उस पार के पुराने रोम को चुनौती दे रहा था, उसकी पुरानी सभ्यता का मख़ौल उड़ा रहा था। इस पार का मुसोलिनी चौक लगभग तैयार हो चुका था। संगमरमर की एक विशाल मूर्ति, जिस पर 'डूच' का नाम खुदा है, बड़े अहंकार से सीना तान कर दूर पर दिखलाई देने वाले सेंट पीतर पर कटाक्ष करती रहती है। इस चौक की सजावट 'क्लासिक' ढंग से की गई है—आस-पास नई रोमन सभ्यता की द्योतक मूर्तियाँ स्थापित की गई हैं। ये इस समय सारे संसार का ध्यान अपनी ओर खींच लाने की फ़िराक में दिखलाई दीं—पर था सुनसान।

थोड़ी देर में एक सड़क से मार्च करते जाते सैनिक दिखलाई दिये। पूछने पर पता चला, वे सीज़र-चौक जा रहे थे। फासीटी मिलिशिया की वर्दी में मोटा नाटा सा मुसोलिनी वहीं पर अपनी फ़ौज की सलामी लिया करता है।

रास्तों पर काफ़ी चहल-पहल होने लगी। अपनी कल्पना में मैं अभी भी अपने को पुराने रोम में घूमता हुआ देख रहा था—पर अपने सामने के लोगों को देख कर अपनी वह सुन्दर कल्पना मुझे भंग करनी ही पड़ी। यहाँ भी बिना किसी प्रकार की वर्दी पहने व्यक्ति बिरले दिखलाई देते। बहुत से नौजवान सादी पोशाक पर ही राइफल झुलाते चलते। इस दृश्य से मैं ऊबने लगा था।

'लियोनादेर्ी!' एक तरफ़ से आवाज़ आई। ज़बान इटालियन थी पर इसकी स्वाभाविक मधुरता का नामोनिशान नहीं। मैंने उस ओर सर घुमा कर देखा। एक विशाल-काय गोटी के दाग़ से भरे लाल रंग के मुँह वाले फ़ौजी अफ़सर के लिए यह आवाज़ दी गई थी। लियोनादेर्ी की कला में दिखलाये गये सृष्टिकारक भाव का जितना कुछ भी ठीक प्रति-कूल संहारक भाव हो सकता था वह इस अफ़सर के चेहरे से झलक जाता था। मुझे बड़ी निराशा हुई। मैं इसे व्यक्त करने से भी अपने को नहीं रोक सका। लूसी मेरा भाव समझ हँस पड़ी। उसकी ओर देख उस अफ़सर ने कहा—

'आप हँसती क्यों हैं सिनियोरिता (कुमारी)?'

लूसी ने उस ओर से अपना मुँह फेर लिया।

'क्या मैं आपके उपयुक्त नहीं? मैं इटालियन सेना में कर्नेलो हूँ। महासमर में बहादुरी के कितने ही तमग़े पा चुका हूँ। इटालियन सेना को संसार में सबसे बहादुर साबित करने में मेरा भी हाथ है। मेरे दर्शन से तो आपको अपना अहो-भाग्य मानना चाहिए!'

हम लोगों का चुपचाप रास्ता चलना असंभव हो गया। कर्नेलो की बातों की ओर ध्यान न दे हम यदि आपस में कुछ और बातें करने लग जाते वा दूसरी ओर देखने लगते तब भी

उसे अपनी अवहेला महसूस नहीं होती। वह अपनी बहादुरी की गाथा ख़ासकर हमें सुनाने का बड़ा इच्छुक था।

'मैं जन्मना सैनिक हूँ —' वह कहता गया— 'वैसे तो हर एक इटालियन साहसी सैनिक होने का गर्व कर सकता है—पर मैं उन सब के लिए आदर्श नायक हूँ। कई बार 'इलडूच' ने स्वयं अपने हाथ से हमारे सीने पर तमग़ा लगा दिया है। उनके साथ रोम पर धावा बोलने वालों में मैं सबसे आगे था।'

'हमें अकेले इतना सब सुनाने की अपेक्षा यदि आप अपनी वीरगाथा की एक पोथी प्रकाशित करायें तो अधिक उपयोगी होगा।' एक गली की ओर मुड़ते हुए लूसी ने कहा। उसका अभिप्राय किसी प्रकार पीछा छुड़ाना था पर नतीजा उल्टा निकला।

'पोपोलो द इतालिया ने अनेकों बार हमारी तस्वीर अपने मुख्य पृष्ठ पर छापी है।' कर्नेलो हमें पहले की अपेक्षा अधिक आश्चर्य में डालने और प्रभावित करने की दृष्टि से कहने लगे— 'एक तस्वीर तो हमारे महान् डूच से शेकहैण्ड करते वक्त की है।'

'सच ?' मैंने उन्हें टोका।

'आपको यदि विश्वास न हो तो मैं उन अख़बारों के कटिंग दिखलाऊँ।'

'लेकिन उसके लिए तो यह रास्ता उपयुक्त स्थान नहीं।' लूसी ने क़दम गली की ओर बढ़ाते हुए कहा।

'तब चलिए हम किसी रेस्टुराँ में चलें।' कर्नेलो ने प्रस्ताव किया। उनका प्रस्ताव रुचिकर न होने पर भी उसे अग्राह्य करना कठिन था। उनसे पीछा छुड़ाना वैसी आसान बात नहीं थी।

२

इन दिनों सारे इटली में खाद्य पदार्थों की कमी होती जा रही थी। होटलों में ख़राब जव के आटे से तैयार किये गये मकरोनी और स्पागेटी के सिवा और कोई चीज़ मुश्किल से मिलती थी। आलू का दाम बहुत चढ़ गया था और वह अब बहुत-कुछ शौक़ की चीज़ समझा जाने लगा था।

रेस्टुराँ वाले ने हम लोगों को गरम-गरम आलू के चिप्स खिलाने का वादा किया। इससे हम सब को बड़ी ख़ुशी हुई। लियोनार्दो तो मारे ख़ुशी के उछल पड़ा।

'फिर कुमारी! इस ख़ुशी में आप एक गाना गायें', उसने लूसी से कहा।

'गाना तो मुझे आता नहीं।'

'क्या ऐसा भी कोई इटालियन पाया जाना संभव है जो गा नहीं सकता?'

'लेकिन आप तो इटालियनों में अग्रगण्य अपने को मानते हैं, फिर आप ही शुरू क्यों न करें।'



[illegible] मामलों में लियोनार्दो की आदत बहुत अधिक ख़ुशा-मद कराने की नहीं थी। बिना किसी भूमिका के उसने बास स्वर में गाना शुरू किया—

'कब मिलेगी तू मेरी हृदयेश्वरी......'

तर्ज़-ढंग, और क्लासिकल स्वर सुन कर सब लोग हँस पड़े।

'यह तो हमें पता ही नहीं था —बास में लियोनार्दो ठीक वैसे ही हैं जैसे टेनोर में कारूसो...' लियोनार्दो के एक साथी ने कहा।

इतनी वाहवाही पाने पर लियोनार्दो कब रुकने वाले थे। गला फाड़-फाड़ कर वे अपने हृदय की आह उगलने लगे। आवाज़ कई बार गले को फाड़ देती, फिर भी वे रुकते नहीं। गाते-गाते वे पसीने-पसीने हो चले। मालूम पड़ता था जैसे उनके विशाल शरीर की सारी शक्ति गाने में लग रही है।

गला बैठ जाने पर वे चुप हुए। पर अब उन्हें नाच करने की सूझी। रेडियो का स्विच दबाया—वहाँ कोई नाच का गाना नहीं था। ग्रामोफोन पर एक रेकर्ड चढ़ाया और लूसी के सामने आ मध्यकालीन 'कवालियर' के ढंग पर सर नवाया। वह तैयार नहीं हुई। लियोनार्दो उसकी अनुमति की प्रतीक्षा में अधिक समय तक रुकने वाले नहीं थे। नाचने के लिए बाध्य करने की नीयत से उन्होंने शारीरिक बल का प्रयोग करना चाहा।

अपने बचने का लूसी को एक सुन्दर तरीक़ा सूझा। उसने कहा—

'अभी तो गाना समाप्त ही नहीं हुआ! मैं भी तो इटालियन होने का दावा रखती हूँ।'

'फिर गाओ!' लियोनार्दो ने हुक्म देने के स्वर में कहा।

लूसी कुछ देर गुनगुनाती रही, फिर उसने अपने मधुर बैरीटोन स्वर में आरम्भ किया—

'आई थी मैं इस होटल में खाने आलू
उलझ पड़ा पर मुझसे तेरे जैसा भालू।'

लूसी और लियोनार्दो दोनों के चेहरे रक्त से भी अधिक लाल होते जा रहे थे। किसी 'काण्ड' के आ घटने की सम्भावना होने लगी। रेस्टुराँ वाले ने ठहाका लगा कर बातचीत का रुख़ पलटा। आलू के चिप्स भी सामने आ हाज़िर हुए।

२

लूसी द्वारा उतने ज़लील होने पर भी लियोनार्दो ने हमारा साथ नहीं छोड़ा। और किसी मामले में वे पक्के इटालियन थे या नहीं इसका तो पता नहीं, पर औरतों द्वारा किये गये अपमान को ग्राह्य न करने के मामले में वे पूरे इटालियन थे—यह

हम महसूस करने लगे थे। हमें रोम दिखलाने का भार उन्होंने अपने ऊपर लिया !

जितना ही अधिक हम घूमते, हमें पता लगता कि लियोनार्दो जैसे व्यक्तियों की बहुतायत है। शायद ठीक वैसे ही व्यक्तियों की उन दिनों रोम सरकार को अफ्रिका भेजने के लिए आवश्यकता थी और इसी लिए वे तैयार किये जाते थे। मुसोलिनी की नीति में अंधविश्वास रखना और अपने ऊपर के अफ़सरों का हुक्म बिना किसी चीं-चपड़ के मानते जाना ऐसे लोगों की विशेषता थी।

रोम के रास्तों की सजावट का नया ढङ्ग देख कर यह सन्देह नहीं रह जाता कि वे लियोनार्दो तर्ज़ के व्यक्तियों की शिक्षा के लिए सजाये गये हैं। हम चाहे जिस रास्ते, चाहे जिस बड़ी दूकान पर निकलते अबीसीनिया ही अबीसीनिया देखा और सुना करते। किताबों की दूकानें उस देश से सम्बन्ध रखने वाली पोथियों से भरी रहतीं। जगह-जगह पर उस देश के नक़्शे बिछे रहते जिनमें उस देश की राजधानी तक इटली के उपनिवेशों से पहुँचने के रास्ते दिखलाये रहते। कहीं-कहीं पर पार्क सजा कर 'अबीसीनियन बाग़' नाम दिये जा रहे थे। किसी सुन्दर से सुन्दर मनुष्य की कल्पना जितने दूर तक की जा सकती है वह अबीसीनिया नामक देश में दिखलाया जा रहा था।

यह रोम का अबीसीनिया सुन्दर ललनाओं से भरा था। जगह-जगह पर उनके द्वारा इटालियन सैनिकों के खिलाए-पिलाए जाने, प्रेम और आलिंगन करने के चित्र टाँग रखे गये थे। इन चित्रों के ग़ौर से देखने पर यह भी पता लग जाता था कि वे सुन्दर ललनाएँ सिवा इटालियन सैनिकों और अफ़सरों के और किसी को प्यार कर ही नहीं सकतीं; इटालियन सैनिकों के अपने देश में आने की प्रतीक्षा वे बड़ी उत्सुकतापूर्वक किया करती हैं और उनका हृदय अपने को उँडेल कर उनका स्वागत करने के लिए लालायित है।

वैसे बहिश्त में जा पहुँचने के लिए लियोनार्दो जैसे व्यक्तियों का दिल स्वाभाविक ढङ्ग से तड़प जाता था। रोम के प्रचार-विभाग ने उन्हें सिखला रखा था कि अबीसीनिया पहुँचते ही उस बहिश्त का सारा सुख इटालियन सैनिक लूटने लगेंगे।

'वास्तव में यह सुन्दर बहिश्त ईश्वर ने ख़ास कर हम इटालियन लोगों के ही लिए बनाया है—' लियोनार्दो ने रोम के प्रचार-विभाग द्वारा सिखलाये ढंग पर कहा—'हम जब तक वहाँ नहीं पहुँचते वह वीरान है। भला जंगली नेगुस उस बहिश्त में विचरण करने का ढंग क्या जाने!'

एक दूकानदार हमारी बातें सुन रहा था। उसने हमें

बुलाते हुए कहा—'आइए! एक नई चीज़ देखते जाइए—' फिर लियेनार्दो को इशारा कर कहा—'उस बहिश्त में आपका कौन सा ओहदा रहेगा यह आज ही मुफ़्त में जानते जाइए। हमारे यहाँ भविष्यत्वाणी करने वाले एक बहुत बड़े गुणी पादरी ज्योतिषी आये हैं। वे सैनिकों का भविष्य मुफ़्त में बतलाया करते हैं।'

हम लोग उस लम्बी सफ़ेद दाढ़ी वाले पादरी के पास ले जाये गये। एक-एक कर उसने हम लोगों के हाथ देखे। लियो-नार्दो के भाग्य में अफ्रिका के एक विशाल प्रान्त का राजा, लूसी के, वहाँ की रानी और मेरे, वहाँ का सबसे बड़ा सौदागर होना उन्होंने बतलाया।

थोड़ी देर में आस-पास के लोगों से मुझे यह भी पता लगा कि मेरा भाग्य अब तक पादरी ने जितनों के हाथ देखे हैं सबसे ख़राब था। उनके यहाँ राजा, नवाब, मंत्री, सिपहसालार आदि से छोटा कोई ओहदा नहीं था; सिर्फ़ मेरे ही मामले में सौदागर होने की नौबत आई। लियोनार्दो ने इसका कारण मुझे समझाया—

'आप इटालियन नहीं, सिर्फ़ उनके दोस्त हैं—इसी लिए। ख़ैर, हमारे राज्य में आपको किसी बात की तकलीफ़ न होगी।'

पादरी ने उसे भविष्य में राजा होने की बात कही थी

पर वह अभी से अपने को राजा हो गया मानने लगा था। उसने कहा भी—

'देर तो सिर्फ़ वहाँ पहुँचने भर की है। यह तो मैं पहले से ही जानता हूँ कि मैं जिस दिन वहाँ पहुँचूँगा उसके दूसरे दिन ही मेरा वहाँ पर राज्याभिषेक होगा।'

लूसी हँसने लगी।

'आप हँसें नहीं'—लियोनार्दो ने कहा—'इन पादरी महाशय के मुख से निकली बात आज तक कभी झूठ नहीं निकली।'

'तब तो मैं भी रानी होऊँगी ?'

'निःसन्देह—' पादरी ने उसे विश्वास दिलाया।

'लेकिन विधवा रानी न ?' लूसी ने दोहराया।

'ऐसा क्यों ?' पादरी ने पूछा।

लूसी लियोनार्दो की ओर देखने लगी। फिर सबकी नज़र बचा मुझे दिखला अपनी पूरी जीभ बाहर निकाल उसने लियो-नार्दो को दूस दिया।

४

इटली से मैंने अबीसीनिया पर हमला करने की तैयारी के सम्बन्ध के कुछ वृत्तान्त अपने परिचित स्विस प्रेस के पास भेजे

थे। साथ ही एक ख़त में अबीसीनिया जाने की इच्छा प्रकट की थी। इसके उत्तर में एक छोटी रक़म के चेक की आशा रखता था। पर मेरा अनुमान ग़लत निकला।

अचानक एक दिन मुझे स्विस प्रेस का तार मिला जिसमें उन्होंने मुझे अपना अबीसीनिया का युद्ध-संवाददाता बनाया और यात्रा के लिए मोटी रक़म के एक चेक भेज दिये जाने की सूचना दी। दूसरे दिन चेक के साथ मेरी तस्वीर और हरे रंग का एक प्रेसकार्ड भी आ पहुँचा। इस कार्ड के साथ के ख़त में प्रेस ने मेरे एक सेक्रेटरी का भी ख़र्च देना स्वीकार किया था।

लूसी ख़ुशी के मारे नाचने लगी।

'मैं नर्स की अपेक्षा सेक्रेटरी बन कर अफ़्रिका जाना अधिक पसन्द करूँगी'—उसने कहा—'यह ओहदा ऊँचा है और इसके द्वारा सब जगह—राजमहल तक में—केवल प्रवेश ही नहीं बल्कि सम्मान मिलता है।'

'तुम्हें तो रानी बनना है?'

'मज़ाक क्या उड़ाते हो—मैं वास्तव में बनूँगी। अफ़्रिका मुझे पहुँचने तो दो। रानी क्या मैं पटरानी बनूँगी।' वह फूल कर बैठी।

'पर फ़िलहाल तो मेरी सेक्रेटरी बनोगी।'

'तुम तनख़्वाह क्या दोगे ?' उसने हाथ पसारते हुए पूछा।

'दो तमाचे दोनों गालों पर रोज़ाना—'

'इतनी अधिक तनख़्वाह की तो मैंने तुमसे कभी भी उम्मीद नहीं की थी। मैं तैयार हूँ।'

बात पक्की करने के लिए हम लोगों ने हाथ मिलाये।

५

इसी दिन से हम दोनों अख़बारनवीस बने। स्विस प्रेस की शर्तें हमारे लिए अच्छी थीं और उनकी लिखा-पढ़ी भी हो गई। अफ्रिका के लिए छूटने वाले जहाज़ की हम लोग उत्सुकता-पूर्वक प्रतीक्षा करने लगे।

हमारा संवाद भेजने का काम रोम से ही आरम्भ हो गया था। इसी सिलसिले में हम प्रायः शहर के कई चक्कर लगा आते। जितना अधिक रोम-वासियों से गहरा परिचय होता उतना ही स्पष्ट होता जाता कि मुसोलिनी के स्वर में हुँकारी भरने वाले लियोनार्दो जैसे लोगों की संख्या ऊपर-ऊपर से अधिक दीखने पर भी वास्तव में बहुत कम थी। ज़्यादा तादाद मुसोलिनी का राग भंग करने वालों की थी, पर ये अपने को सदा छिपाये रखने की कोशिश किया करते।

रोम की मुख्य सड़कों पर स्थान-स्थान पर मुसोलिनी की

नई तसवीर लगाई गई थी। इसमें गम्भीर चेहरा और ओठों पर व्यंग-सूचक हँसी दिखलाई गई थी। इस चित्र को पसन्द करने वाले कम और उस पर घुड़कने वाले वा ग़ुस्से भरी दृष्टि फेरने वाले अधिक मिलते। हम मुसोलिनी के चित्र के साथ-साथ उस पर देखने वालों का चेहरा देखा करते और उससे रोम वालों की भावनाओं का पता लगाया करते।

'इस चित्र में शैतान भला आदमी बना बैठा है।' हमारे बग़ल से धीमी पर स्पष्ट आवाज़ सुनाई दी।

बड़ी-बड़ी, ज़रा ऊँचे की ओर, हमेशा सीधी ढूँढ़ते रहने वाली आँखों पर मेरी दृष्टि गई। ललाट चौड़ा था और उस पर घने घुँघराले बाल झूल रहे थे। शरीर दुर्बल पर दृढ़ विचारों के कारण स्थिर खड़ा दिखलाई दिया। भीतर के भावों को न रोक सकने के कारण वे उबले पड़ते थे। चेहरा सुन्दर न होने पर भी उसमें मुझे अजीब ख़ूबसूरती दिखलाई दी। इसमें वास्तविक मधुर इटालियन सौन्दर्य था पर कष्ट झेलते रहने के कारण वह सख़्त बन कर फीका पड़ता जा रहा था। फिर भी कष्ट से ऊब कर 'अपना सौन्दर्य नष्ट कर दूँगा' इस भाव के विपरीत संग्राम करते रहने और विजय पाते जाने के कारण चेहरा बहुत आकर्षक बनता जा रहा था।

चेहरे की प्रत्येक बारीकी मैं ग़ौर से देखने लगा।

'आन्तोनियो रोजेट्टी ! जेल की चिड़िया' उसने अपना परिचय दिया और मुझसे हाथ मिलाने आगे आया।

पूरे तेरह साल की जेल काट कर ये उसी दिन बाहर निकले थे। बाहर की दुनिया अभी भी अपने माफ़िक परिवर्तित न हुई देख फिर उसके बदलने की धुन में लग जाना चाहते थे। इस समय इनका सबसे बड़ा काम अफ़्रिकन युद्ध के विरुद्ध प्रचार करना था। इसी में ये इटली का गौरव मानते थे।

इन्हें अगले दिन अपने घर पर आने का निमन्त्रण दे हम आगे बढ़े। चन्द मिनटों की जान-पहचान ने ही हमें इतना प्रभावित किया था कि और लोगों की अपेक्षा इनके ढंग के व्यक्तियों को ही हम वास्तविक इटली का प्रतिनिधि मानने लगे थे।

६

जिस दिन मुसोलिनी को अपने महल की बाल्कोनी से व्याख्यान देना होता, पिआत्सा विनिचिया में बहुत बड़ी भीड़ इकट्ठी की जाती। कारख़ानों के मज़दूरों को वहाँ जाने के लिए काम का घंटा ख़तम होने के पहले छुट्टी दे दी जाती—स्कूल कालेजों में पढ़ने वालों के लिए वहाँ जाना लाज़िमी बना दिया जाता और सारे रोम में सबसे अधिक गला फाड़-फाड़ कर

चिल्लाने वाले लोगों का जत्था लारियों में भर कर वहाँ भेजा जाता।

लोगों की भीड़ डूच महाशय के व्याख्यान आरम्भ होने के पहले ही कहीं तितर-बितर न होने लगे इसका ख़याल रख और भी कई आकर्षण उस समय के लिए क़ायम कर दिये जाते। ऐसे आकर्षणों में अक्सर औरतों की मंडली रहा करती जिसमें केवल सुन्दरियाँ बहाल की गई होतीं और जिन्हें सिर्फ़ फ़ैसिस्ट गीत याद कराये गये होते।

कई हज़ार की भीड़ इकट्ठी हो जाने पर डूच महाशय दर्शन देने के लिए बाहर निकलते। भीड़ में सबसे अधिक आवाज़ लगा सकने वाले विद्यार्थी ही हुआ करते और इसी कारण इन्हें महल की बाल्कोनी के ठीक नीचे खड़ा किया जाता। व्याख्यान के बीच-बीच में भी ये 'डूच-डूच' के नारे लगाया करते। इनके चारों तरफ़ खड़ी हुई जनता चुपचाप दर्शक की भाँति खड़ी रहती।

डूच हमेशा आवश्यकता से अधिक सीना फुला कर बोला करते। हम जहाँ खड़े होते वहाँ से उनकी शक्ल मिट्टी के सजे हुए छोटी गर्दन वाले बड़े और गोल बैले जैसी दीखती। लोग उनकी बातों से कम, पर उनकी नाट्य-कला की प्रवीणता से अधिक, प्रभावित हुआ करते। अपने को रोकते रहने

पर भी बहुतों के मुँह से निकल ही जाता—'वाह रे तीसमार खाँ !'

सभा के बाद कभी-कभी मशाल लिये हुए फ़ैसिस्टों का पैरेड हुआ करता। ये मुसोलिनी की बाल्कोनी के पास खड़े हो जाते और नारे लगाते। खेल ख़तम हो जाने पर यूरोप के ऐक्टर जिस भाँति दर्शक-मंडली को झुक कर नमस्कार कर पर्दे के भीतर चले जाते हैं मुसोलिनी भी ठीक वैसा ही किया करते। दर्शकों में बहुत से लोग ताली पीट दिया करते। रोम-निवासियों के लिए यह सारी कार्रवाई तमाशे से कुछ ज़्यादा महत्त्व नहीं रखती थी।

जिन्हें इस तमाशे के कारण झोंकना पड़ता वे अवश्य ही इसे दूसरे रूप में लिया करते। रोजेट्टी एक दिन पिआत्सा विनिचिया से लौटते हुए हमारे साथ आये। उन्होंने कहा—

'संसार में इतना बड़ा ढीठ जल्लाद और कहीं देखा है ? यह इटालियन स्वतन्त्रता का ख़ून करने वाला है।'

लियोनार्दो जैसे व्यक्ति ठीक इसका उल्टा ख़याल रखा करते। वे डूच के व्याख्यान से बहुत प्रभावित होकर लौटते और कहते—

'संसार में ऐसा बहादुर आदमी दूसरा नहीं।'

हम निष्पक्ष पत्रकार की भाँति इन दोनों तरह के व्यक्तियों

के ख़याल और आम जनता की उदासीनता एक ही भाव में लिया करते। पर शीघ्र ही हमें भी एक दल के साथ अपनी राय क़ायम करने के लिए बाध्य होना पड़ा।

७

रोम आने के पहले अपनी कल्पना में मैं उसे जैसा देखा करता था वह उससे बिल्कुल ही भिन्न निकला। रास्ता चलने वालों में जो एक विशेष प्रकार का सौन्दर्य पाने की आशा रखता था वह हमें नहीं मिला। लोगों के और स्थानों की अपेक्षा अधिक भावुक होने की कल्पना किये बैठा था पर साधारणतया उन्हें मनुष्यता की झलक से भी दूर पाया।

इटली शताब्दियों तक पराधीन रहा है। उसने अपना ख़ून देकर आज़ादी हासिल की है—पर उसी आज़ादी का आज वहाँ कुछ भी मूल्य नहीं। वही इटली दूसरों को ग़ुलाम बनाने में और सब देशों की अपेक्षा अधिक तत्पर दिखलाई दिया। यह रोम से मेरे निराश होने का सबसे बड़ा कारण था।

अपने ये भाव मैं खुल्लमखुल्ला स्विटज़रलैंड के पत्रों में व्यक्त किया करता था। इसने इटालियन सरकार का भी ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया था और अब रोम का प्रचार विभाग मुझे बाग़ी भी गिनने लगा था। रोजेट्टी के साथ अधिक

घनिष्ठता होते जाने के कारण कई इटालियन दोस्तों ने हमसे मिलना तक बन्द कर दिया। लियोनार्दो से तो अकसर ही अच्छा ख़ासा झगड़ा हो जाया करता।

हम आपस में उसे 'भालू' कह कर सम्बोधन किया करते। कुछ अर्से से उसे इसका पता चल गया था। आजकल उसका काम प्रचार-विभाग के मातहत हो गया था जिसे वह अपने ओहदे का ऊँचा हो जाना समझता था और हमेशा हमसे बदला लेने की ताक में रहा करता। और कुछ नहीं तो उसने दो काली कमीज़ वालों का पहरा तो हमारे दरवाज़े पर बिठला ही दिया था।

एक दिन संध्या समय टहल कर लौटने के पहले हमारे घर से थोड़ी दूर पर रोजेट्टी मिला। एक गली में ले जाकर उसने चुपके से कहा—

'आज आधी रात को वे तुम्हें गिरफ़्तार करने वाले हैं। इटालियन जेल दोज़ख़ से भी बढ़ कर हैं। तुम शीघ्र ही यहाँ से प्रस्थान करो। मेरी राय मानो तो यहाँ से घर न जाकर सीधे स्टेशन जाओ। मैं तुम्हारा सामान वहाँ भिजवाये देता हूँ।'

रोम छोड़ने की तैयारी हम बहुत पहले से ही कर रहे थे। यहाँ से मन ऐसा उचाट हो गया था कि तबियत बिलकुल ही नहीं लगती थी।

स्टेशन की ओर जाते समय हम विया कंजरवातोरियो से गुज़र रहे थे। यहाँ बिल्कुल सन्नाटा छाया हुआ था। यह सन्नाटा मुझे सारे रोम का मानसिक सन्नाटा जान पड़ा। थोड़ा आगे बढ़ने पर जब स्टेशन के पास अधिक रोशनी और उतावले लोग चलते हुए दिखलाई दिये तो मैं अचानक बीच सड़क पर रुक गया।

इस समय रोम सिर्फ़ मुर्दा हुआ ही नहीं बल्कि भयानक ख़ूँख़्वार बना हुआ दिखाई देने लगा। चारों तरफ़ वर्दी पहने लोग जल्लाद से दीख रहे थे।

हम चुपचाप दक्षिण की ओर जाने वाली गाड़ी के एक डब्बे में बैठ गये। किसी से बात करने की तबियत न रहने के कारण मैं एक कोने से उठँग गया और अपनी आँखें बन्द कर लीं।

गाड़ी बिना सीटी दिये ही खुल गई।

मरो तो नैपल्स देख कर—

१

नैपल्स पहुँचने पर लूसी ने मुझे जगाया। गाड़ी और आगे नहीं जाती थी। मीठी नींद में ख़लल डालने के कारण मुझे लूसी और गाड़ी दोनों पर बहुत ग़ुस्सा आ रहा था।

इसी ग़ुस्से में प्लैटफ़ार्म पर उतरा। मैंने मन ही मन ज़िद बाँध ली कि चाहे जो हो आँखें नहीं खोलूँगा। लूसी ने आगे बढ़ने के लिए कहा तो मैं आँखें मूँदे ही आगे बढ़ा। उसने मेरा हाथ पकड़ लिया और मुसकराती हुई ले चली। बीच-बीच में सावधान करती जाती—'देखना, सीढ़ी है—ऊपर चढ़ रहे हो—अब नीचे उतर रहे हो!'

इसी प्रकार स्टेशन के सामने के होटल तक गया। कमरा खुलते ही बिस्तरे पर लेट गया। लूसी कब उसे बन्द कर अपने कमरे में गई मुझे कुछ पता नहीं।

आराम मिलने और शरीर गरमाने पर सुन्दर स्वप्न देखने

लगा। रोम में तीबर नदी के किनारे 'मोना लीसा' के साथ टहल रहा हूँ।

'टक···टक···' आवाज़ सुनाई दी। झुँझला कर मन-ही-मन कहा—'मेरा बस चले तो इस सारी फ़ौज को लड़ाई में भेजे जाने के पहले यहाँ ही क़त्ल कर डालने का हुक्म दे दूँ।'

'टक···टक···टक···'

मैंने करवट बदली।

इस बार मेरे उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही होटल वाली ने मेरी कोठरी का दरवाज़ा खोल दिया और कहा—

'आपके दो मित्र अभी आपसे मिलना चाहते हैं।'

'उन्हें जहन्नुम में जाने को कहो।' मैंने नींद में ही गुन-गुनाते हुए उत्तर दिया।

'पर वहाँ तो आपको भी साथ ले जाना है!' लियोनार्दो की आवाज़ आई।

'जल्दी उठिए।' एक और कर्कश स्वर सुनाई पड़ा। मैंने आँखें खोलीं। यमदूत की तरह काली पोशाक में लियोनार्दो के साथ एक सिपाही था। उसने अपना ख़ुफ़िया बैज दिख-लाया और कहा—

'आप गिरफ़्तार किये गये।'

'गिरफ़्तार?' मेरी नींद टूट गई।

'हाँ, हाँ—गिरफ़्तार।'

'क्यों! किस क़ानून से?'

'आपको अभी भी पता नहीं कि आप इटली में हैं! १९२६ में इटली की रक्षा के लिए जो फ़ैसिस्ट ख़ास क़ानून बने हैं उनके अनुसार हमें जिस किसी को चाहे जिस किसी समय पकड़ लेने का अधिकार है।'

'इसमें कोई ख़ास बात नहीं!' लियोनार्दो ने मुझे विश्वास दिलाया—'आज-कल हमारे यहाँ लड़ाई का ज़माना है इसलिए गिरफ़्तारी तो बिलकुल आम बात है।'

मैंने लूसी को जगाना चाहा पर उन लोगों ने मना किया।

'कल सुबह तक तो आप फिर अपने होटल में वापस पहुँचा दिये जायँगे।' ख़ुफ़िया ने इतमीनान दिलाया।

'फिर आप मुझे अभी ले कहाँ जायँगे?

'सदर पुलिस चौकी में।'

बाहर रास्ते पर आने पर ख़ुफ़िया ने बतलाया कि पुलिस-चौकी वहाँ से दो मील दूर है।

'लेकिन मैं तो उतनी दूर अभी पैदल नहीं जाऊँगा।' मैं अड़ गया।

'फिर तो आपको हम टाँग कर और हाथ-पाँव बाँध कर ले जायँगे।' लियोनार्दो ने कहा।

'एक रास्ता और है—' ख़ुफ़िया ने कहा—'यदि ये पैसे ख़र्च करें तो हम इन्हें मोटर में ले जायँ।'

'हाँ, फिर उसी मोटर से ये वापस भी होटल पहुँच जायँगे।' लियोनार्दो ने उसकी पुष्टि की।

मैंने वैसा ही किया। रास्ते में ख़ुफ़िया ने अँगड़ाइयाँ लेते हुए कहा—

'ऐसे भले आदमी यदि गिरफ़्तार किये जायँ तो अच्छा है। हमें बड़ा आराम रहे—नहीं तो लफङ्गों के पीछे दौड़ते-दौड़ते तो हमारी जान आजिज़ आ जाती है। आज रात भर लोगों को गिरफ़्तार किया, अब पता नहीं फिर किस हल्के में भेजा जाता हूँ।'

पुलिस-चौकी में काफ़ी चहल-पहल थी। सैकड़ों आदमी पकड़ कर लाये गये थे। अफ़सरों को किसी एक के साथ आधे मिनट से ज़्यादा बात-चीत करने की फ़ुर्सत नहीं थी। वे सिर्फ़ नाम और पेशा पूछते, एक कागज़ पर इसे नोट करते और उन्हें एक बन्द मोटरलारी में ढकेलवा देते।

मेरी बारी आने पर भी उन्होंने वैसा ही किया। बड़ी मुश्किल से मुझे बैठने की जगह मिली। लारी में बैठे आदमियों की गिनती कर पाना तो अँधेरे में मुश्किल था पर जिस संकीर्णतापूर्वक हम एक-दूसरे के निकट बैठाये गये थे उससे मैंने

अंदाज़ा लगाया कि हमारी लारी में पैंतीस-चालीस आदमी से कम नहीं होंगे।

हम कहाँ ले जाये जा रहे हैं, किसी को भी पता नहीं था। लारी की खिड़कियों के बन्द रहने के कारण किस रास्ते से हम जा रहे थे यह भी पहचाना नहीं जा सकता था।

धक्कामुक्की और हवा के दूषित होते जाने से मेरी तबियत ऊबने लगी। कुछ देर में उल्टी आने की भी नौबत आती दिखलाई दी।

ख़ैरियत हुई कि ठीक इसी समय लारी रुकी। काली कमीज़ के एक जत्थे ने हमें घेर लिया। लारी से उतार कर हमें दो-दो की कतार में खड़े होने का हुक्म दिया गया। फ़ौजी हुक्म जिन्होंने नहीं समझा अथवा समझने में देर की उन्हें तमाचे लगा कर वा छड़ियों के बल खड़ा किया गया।

हमारे सामने लोहे का विशाल फाटक था। हमारी गिनती हो जाने पर फाटक खुला। हमारे भीतर घुस आने पर फाटक फिर बन्द कर लिया गया।

भीतर एक आँगन में हम खड़े किये गये। किसी पहरेदार के न रह जाने पर हम लोगों ने अपनी कतारें तोड़ दीं और तितर-बितर हो घूमने लगे।

आकाश की ओर देखा। छोटे तिकोने दायरे के

आकाश में हल्के बादलों के भीतर से मटमैले रंग के तारे टिमटिमा रहे थे। अभी भी चारों ओर अँधेरा छाया हुआ था। पास में घड़ी न रहने के कारण वक़्त का भी ठीक-ठीक अंदाज़ा नहीं लगा पाया।

हमारी दाईं ओर एक बैरक-सा दिखाई दिया। उसके भीतर से कोई खाँस रहा था। हमारी आहट पा वह सीकचों के दरवाज़े के पास आया। अँधेरे में उसका सफ़ेद मुँह धुँधला-धुँधला दीख रहा था।

'यह जगह कौन सी है?' मैंने उससे पूछा।

'पूछने की ज़रूरत नहीं!' प्रौढ़ा स्त्री की जैसी आवाज़ सुनाई पड़ी—'आप महसूस करेंगे। हमारे महान् कवि दाँते ने नरक की कल्पना की थी और उसके फाटक पर लिखा बतलाया था—'जो यहाँ एक बार प्रवेश करता है फिर कभी बाहर नहीं निकलता।' मुसोलिनी ने इसे यथार्थ कर दिखलाया है। इस दोज़ख़ में हम थोड़ी सी सूर्य की रोशनी देख पाते हैं और आदमियों की आवाज़ सुनते हैं, यही बड़ी भारी ग़नीमत है।'

२

जिस महिला से मैं बातें कर रहा था वे मिलानो के एक किंडरगार्टेन स्कूल की मुख्य अध्यापिका थीं। वे एक ख़तर-

नाक कम्यूनिस्ट की स्त्री थीं—इसी अपराध में उन्हें अठारह साल की सज़ा दे दी गई। पहले वे पोन्त्सा के टापू में निर्वासित की गईं। उस टापू का वर्णन करते हुए उन्होंने कहा—

'वह वास्तव में ही मुसोलिनी का बसाया हुआ नरक है। वहाँ कैसा भी स्वस्थ आदमी डेढ़-दो साल के भीतर क्षय रोग का शिकार बन जाता है। हमारे साथ सौ से ऊपर महिलाएँ थीं—इनमें दो साल पूरा होने के पहले कई दर्जन मर गईं, कितनी पागल हो गईं और जो बाकी बचीं क्षय रोग से सारे जीवन के लिए आक्रान्त बनीं। मेरा भी वहाँ मस्तिष्क ख़राब हो गया तो मैं त्राणी के पागलख़ाने में भेज दी गई। हाल ही में वहाँ से यहाँ लाई गई हूँ—और अब सुनती हूँ कि हमें भी इटालियन फ़ौज के साथ अफ्रिका जाना है जहाँ हमसे सड़क बनवाने का काम लिया जायगा।'

अपने ऊपर जो कुछ भी बीती उसे उन्होंने बिना किसी 'आह ऊह' के कह सुनाया। सबसे बड़ी चोट उन्हें अपने एकलौते लड़के की थी जिसे ट्रियेस्ट के हवालात में बन्द कर रखा गया था।

थोड़ा उजाला होने पर मैंने देखा—जिस प्रकार की बुद्धिमानी और भावुकता से भरे चेहरे मैं रोम की सड़कों पर ढूँढ़ता चलता था वे तो यहाँ की जेलों में बन्द कर रखे गये हैं।

घण्टों उस संकीर्ण आँगन में खड़े रहने के बाद एक सन्तरी की आवाज़ आई—

'कमांदान्तो! कमांदान्तो!'

लम्बे-चौड़े डीलडौल वाले कमांदान्त भी आये। उनकी काली पोशाक और छाती पर मुर्दे की खोपड़ी का चिह्न यह सूचित कर देता था कि वे जल्लादी में पूरे उस्ताद हैं।

फिर से हम लोग दो कतार में खड़े किये गये और लोगों का नाम और पेशा पूछा जाने लगा। हमारी बगल में सफ़ेद दाढ़ी वाले एक बूढ़े सज्जन खड़े थे। उन्होंने अपना पेशा वकालत बतलाया। तुरंत ही कमांदान्त ने उन्हें सन्तरियों से दोनों गालों पर दो तमाचे जड़वाते हुए कहा—

'क़ानून पढ़ कर भी तूने फैसिस्ट क़ानून तोड़ने की गुस्ताख़ी की!'

एक दूसरे सज्जन ने अपना पेशा लेखक बतलाया जिसके लिए उन्हें नङ्गे कर पाँच बेंत लगाये जाने की सज़ा दी गई।

'फैसिस्ट सिद्धान्त तूने समझा नहीं तो फिर तू लेखक कैसे बना?' कमांदान्त ने अपनी छड़ी से उनके माथे को ठोकते हुए कहा।

मैं भी इसी प्रकार के सलूक की आशा रखता था पर मेरे पेशे में पत्रकार के साथ विदेशी विशेषण लगा था। इसे

सुन कर कमांदान्त चौंक पड़ा। उसने मेरे कागज़ात फिर से देखे, टेलीफोन पर गया और लौट कर कहा—

'तुम धोखे से यहाँ ले आये गये हो। पुलिस-चौकी की इमारत में ही विदेशियों की ख़ातिरदारी का अलग मुहकमा है। ख़ैर! तब तक हमारी ख़ातिरदारी में रहो।'

उसने मुझे और क़ैदियों से अलग अस्पताल के पास एक फाँसी की कोठरी में रखे जाने का हुक्म दिया। जिस पहरेदार के हवाले मैं किया गया वह कुछ अधिक नम्र था। उसने मुझे कोठरी में बन्द न रख इधर-उधर घूमने दिया, पर यह ताकीद कर दी कि किसी अफ़सर के दिखलाई देते ही मैं स्वयं सेल में बन्द हो जाऊँगा।

फाँसीघर के बगल में छोटे-छोटे सेलों वाला एक लम्बा सा बैरेक था। इसके लगभग सब सेल भरे थे। एक के पास जाते ही उसमें से ख़ास तरह की बदबू आई। किसी शेर के पिंजड़े से भी शायद वैसी गन्दी बदबू नहीं निकलती होगी। आगे बढ़ कर देखा तो उसमें आदमी बन्द किये गये दिखलाई दिये। गोरे चेहरों पर लम्बी सुनहले रंग की दाढ़ी जम गई थी जिसके बाल सूखते हुए धान के खेत जैसे दीख रहे थे। भूख, मार और कष्ट बर्दाश्त करते-करते उनके स्वाभाविक नरम चेहरे ख़ूँख़ार से बन गये थे।

जब से ये उन सेलों में बन्द किये गये थे इनके नहाने की तो बात ही दूर रही, चेहरा धोने तक को पानी नहीं दिया गया था। सेल में रहते किसी के दस-दस बारह-बारह वर्ष तक हो गये थे। कितने तो मुसोलिनी के हाथ में अधिकार आने के दिन से ही सज़ा भुगत रहे थे। सूर्य का प्रकाश उन्होंने वर्षों से नहीं देखा था।

उनमें से एक के चेहरे पर घास जैसी दाढ़ी रहने पर भी उनके चेहरे का सुन्दर काट अभी भी स्पष्ट झलक जाता था। आँखें बड़ी-बड़ी और बड़ी ही आकर्षक थीं। इधर एक साल से इनकी ज़बान न जाने क्यों आपसे आप बन्द हो गई थी। उनकी बगल के सेल के एक व्यक्ति ने उनका परिचय देते हुए कहा—

'ये इटली के वर्तमान महान् कलाकारों में एक थे। इनकी चित्रकारी ने सारे संसार में अपना नये ढंग का स्कूल खोल रखा है।'

जिन्होंने यह परिचय दिया उनके बारे में मालूम हुआ कि वे प्रख्यात वैज्ञानिक थे जिनके आविष्कारों से सारी दुनिया वाकिफ़ थी।

इन क़ैदियों के चेहरे सूखे रहने पर भी उनका स्वाभाविक सौन्दर्य नष्ट नहीं हो पाया था। आँखों के नीचे धँसे रहने पर भी उनके पीछे छिपी हुई मनुष्यता झलक जाती थी। कोई भी उन्हें देख कर कह उठता—

'ये हैं इटली के वास्तविक प्राण !'

पर इनके प्राणों का कोई भी मूल्य नहीं। कोई भी नवजवान काली कमीज़ का फैसिस्ट संतरी उन्हें तमाचे लगा देता था—चाहे जैसी मर्ज़ी अपमान कर बैठता था।

कितने क़ैदी ऊब कर आत्म-हत्या कर बैठना चाहते थे पर इसका भी अवसर उन्हें नहीं मिलता था। फैसिस्ट सरकार इन क़ीमती इटालियनों की जान वैसे सस्ते नहीं निकलने देना चाहती थी।

और इनका क़सूर क्या था ?

इन्होंने इटालियन स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए किसी न किसी रूप में मुसोलिनी के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाई थी।

इसी अपराध के लिए शिल्पी लुसेरी को अन्धा बना दिया गया, अज़ारियो को पागलख़ाने में भेज दिया गया और इटालियन जनता के सबसे बड़े नेता मत्योत्ति की निर्दयतापूर्वक हत्या कर डाली गई।

बुद्धिजीवी लोगों को, विशेषकर कवि, लेखक, शिल्पी आदि को रेंड़ी का तेल पिला-पिला कर मार डालने की प्रथा चलाई गई थी। इस मामले में दरअसल ही दान्ते के काल्पनिक नरक को मुसोलिनी के वास्तविक नरक ने मात कर दिया था।

३

तीसरे पहर तक मुझे पीने को पानी तक नहीं दिया गया। इसमें मुझे ज़रा भी आश्चर्य करने की आवश्यकता नहीं प्रतीत हुई। और क़ैदियों की तरह मेरे ऊपर मार नहीं पड़ी यही फ़ैसिस्ट इटली में विदेशियों को अपनी अच्छी ख़ातिरदारी समझनी चाहिए।

तीसरे पहर तक झुंड के झुंड नये क़ैदी आते गये। यह ताँता अफ़्रिकन युद्ध के विरोधी लोगों का था। रोम के प्रचार-विभाग के काम में जो भी ज़रा सा भी अड़ंगा लगाने की चेष्टा करता अथवा जिस पर इस चेष्टा का शुबहा रहता पकड़ कर जेलों में भर दिया जाता था।

जो क़ैदी पहले सज़ा काट चुके रहते और इस बार दुबारा पकड़ कर लाये जाते उन्हें एकांत सेलों में बन्द किया जाता। ऐसे ही क़ैदियों के एक जत्थे के साथ रोजेट्टी भी दिखलाई दिया। बाहर की हवा लगने के कारण कल शाम को उसके चेहरे से पीलापन दूर हुआ सा दीख पड़ा था—पर आज वह ख़ून के दाग़ों के कारण काला हो गया था। उसके अंग-अंग पर मार पड़ी थी जिससे पहचानना तक कठिन हो रहा था।

उसे सेल में ढकेलते हुए एक काली कमीज़ वाले ने अपने साथी से पूछा—

'इस शैतान के साथ अब और क्या किया जाय ? यह तो कैस्टर आयल तक पानी की तरह पचा जाता है।'

'अब इसे फाँसी का फन्दा और एक कुदाल दे दो। कुदाल से यह अपनी क़ब्र खोद लेगा फिर गले में फन्दा लगा कर उसी में झूल पड़ेगा। इसमें हमें आसानी रहेगी।'

'लेकिन यह मनहूस ऐसा करे भी तो ?'

'नहीं करेगा तो एक गोली ख़राब की जायगी।'

रोजेट्टी अन्यमनस्क हो ये बातें सुन रहा था मानो इनसे उसका कोई सम्बन्ध ही नहीं। पहरेदारों ने उसे जिस स्थान पर पटक दिया था वह उसी स्थान पर लापरवाही से पड़ा रहा।

संतरियों के दूसरी ओर चले जाने पर मैं उसके सामने आया। मुझे देख कर उसे आश्चर्य नहीं हुआ।

'तुम वास्तविक इटालियनों की खोज में थे—' उसने अपने चेहरे पर दर्द की ओर से अन्यमनस्कता ला हँसी दिखलाने की चेष्टा करते हुए मुझसे कहा—'अब वे तुम्हें यहाँ पर मिलेंगे। किसी से तुम्हारा परिचय हुआ ?'

मैं इसका कोई उत्तर नहीं दे पाया। पीड़ा के कारण उसने अपना पेट ज़ोरों से दाब रखा; जब वह शांत नहीं हुई तो फिर उसने करवट बदल दी।

४

'हमारी मिहमानदारी स्वीकार करते आपको कोई कष्ट तो नहीं हुआ—' विदेशी विभाग के अफ़सर ने मेरे हाज़िर किये जाने पर मुझसे पूछा। यह पूछने की तमीज़, वा व्यंग ही हो तो भी मसख़रेपन को समझने की ताक़त, इस इटालियन अफ़सर में देख कर मुझे आश्चर्य हुआ। मेरे उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही वह आगे कहता गया—

'यदि हमारे देश के मामलों में आपने इस तरह की दस्तन्दाज़ी की तब तो सारी ज़िन्दगी ही हमारी मिहमानदारी आपको स्वीकार करनी होगी।'

उन्होंने मुझे विदेशी गुप्तचर समझा था और इसी ओर उनका इशारा था। बात समझ लेने पर मैंने इसका विरोध किया, पर इससे उस अफ़सर का संदेह बजाय घटने के और बढ़ता ही गया।

'और आपके मामले में तो आपकी सरकार भी मदद की तो बात दूर रही—खोज-ख़बर तक नहीं लेगी। अँगरेज़ अपने उपनिवेशों के मामले में होशियार हैं—उचित रूप से वहाँ के निवासियों को वहशी मानते हैं।'

'वहशी' शब्द पर मुझे जलन हुई और मैंने फैसिस्ट इटा-लियनों को खरी-खोटी सुनाना आरंभ किया।

'बस ! बस !' मुझे बीच में ही टोकते हुए उस अफ़सर ने कहा—'मैं 'तू' के बजाय 'आप' शब्द का व्यवहार कर रहा हूँ यही अनुचित है। पर मैंने यह आपकी यूरोपीय शिक्षा का ख़याल रख कर किया है। देखिए—अब कहीं मुझे अपनी बात-चीत का तरीक़ा बदलने के लिए बाध्य न होना पड़े।'

'आपको इसके लिए बाध्य होना ही पड़ेगा।'

मेरी बात सुन कर वह हँसा।

'किसके डर से ? अँगरेज़ों के—जो आपकी ज़रा भी परवा नहीं करते ! बल्कि उन्हें तो ख़ुशी होगी कि एक कम्यूनिस्ट को सीधा करने का भार अपने ऊपर लेकर हमने उनका काम हल्का कर दिया।'

मैं अभी भी गुप्तचर होने के इल्ज़ाम का खंडन करता रहा और अपने स्विस प्रेस का नाम लिया। साथ ही रोम के मिनिस्तेरो देला प्रोपागांदा के यहाँ फोन कर दरियाफ़्त करने के लिये ज़ोर दिया। अफ़सर पहले फोन करने में हिचकता रहा पर जब उसे अपने प्रेस द्वारा अंतर्राष्ट्रीय अख़बारों में तहलक़ा मचाने का मैंने भय दिखलाया तब वह तैयार हुआ।

एक कमरे में टेलिफोन पर रोम से आधे घंटे तक पता नहीं उस अफ़सर ने क्या बातें कीं पर लौटने पर उसके चेहरे से यह स्पष्ट झलक गया कि उसका मेरा गुप्तचर होने का संदेह दूर हो गया है।

'रोम से हुक्म आया है कि हम आपको छोड़ दे सकते हैं पर चौबीस घंटे के अन्दर आपको इटली छोड़ देना पड़ेगा।'

फ़ुज़ूल फ़ुज़ूल मेरे उतना तंग किये जाने का उसने ज़िक्र तक नहीं उठाया—उस पर अफ़सोस करने की तो बात ही जुदा रही। मैं उस हद तक नम्रता की उस अफ़सर से आशा भी नहीं रख सकता था।

सूर्यास्त से बहुत देर बाद मैं जेल से बाहर निकाला गया। इस समय भी रास्तों पर जेल की तुलना में दिन-सा दिखलाई दिया।

५

मैं अपने को बड़ा अपमानित हुआ महसूस कर रहा था। मालूम पड़ता था मानो मेरे अंग-प्रत्यंग पर भिगो-भिगो कर कोड़े लगाये गये हैं। अपने चारों तरफ़ चलने-फिरने वालों के चेहरों पर सिर्फ़ अवहेला और व्यंग की हँसी देखता था।

इस समय मुझे सबसे अधिक चिढ़ 'रोमांचक विचारों' पर हो रही थी। इनका पर्दा मेरे लिए खुल गया था। ये झूठे साबित हुए थे। सिर्फ़ अपने को धोखा देने के लिए ख़याल में ही इनका स्थान था।

मनुष्य का वास्तविक जीवन तो पैशाचिक होता है। निर्दय रहना और बिना हिचक के अपने साथी मनुष्यों का ख़ून

करते जाना इसका सबसे पहला लक्षण है। मनुष्य होने के नाते इसी का आदमी को अभिमान होना चाहिए। इस पर आँसू बहाने वाले कायर होते हैं—उनका मनुष्यों के बीच स्थान नहीं क्योंकि वे वास्तविक मनुष्यता के लक्षणों से वाकिफ़ नहीं।

मेरे पाँव बहुत धीरे-धीरे पड़ रहे थे। शरीर और मन दोनों ही बड़े दुर्बल पड़ गये थे। भूख लगी थी पर खाने की तबियत नहीं हो रही थी।

'और जी कर क्या होगा?'

भीतर-भीतर यही विचार ज़ोर मारता और अपना सारा जीवन ही निकम्मा मालूम पड़ता।

होटल में जाकर देखा—लूसी मेरी चारपाई पर लेटी थी। मेरी आहट पा वह उठ खड़ी हुई। एकाएक मुझसे लिपट गई और बहुत देर तक नहीं बोली। उसका चेहरा भी कह रहा था—

'रोमांचक जीवन का मेरा स्वप्न भी टूट गया है।'

६

अगले दिन रात को एक जहाज़ अफ़्रिका-तट को जाने वाला था। हम लोग उसी से रवाना हो जाना चाहते थे। इटली में रहने की जो अवधि मेरे लिए निर्धारित कर दी गई थी उसका ख़याल करने पर सिवा उस दिन रवाना होने के मेरे लिए और

कोई दूसरा चारा भी नहीं था। मैंने एक केबिन रिज़र्व करवाई। इसमें कोई दिक़्क़त नहीं हुई।

लूसी का मामला लेकर अड़चनें आ उपस्थित हुईं। उसके पासपोर्ट को कंट्रोलर ने नादुरुस्त बतलाया और कहा कि समुद्र-यात्रा के लिए उस पर रोम से ख़ास तरह का विसा लेना और मोहर लगवानी पड़ेगी।

हम लोगों ने दो बार टेलिफोन पर रोम से बातें कीं पर कोई नतीजा नहीं निकला। हमें जल्दी थी पर उससे रोम क्यों परेशान हो? उनका उत्तर मिला कि बिना ठीक से तहक़ीक़ात किये पासपोर्ट पर मोहर नहीं लगाई जा सकती। तहक़ीक़ात भी एक सप्ताह से कम में नहीं की जा सकती।

बहुतेरे जहाज़ी और सरकारी दफ़्तर छान डाले पर कोई रास्ता नहीं निकला। जैसे-जैसे संध्या होती गई, हम निराश होते गये। चलने का समय हुआ तो लूसी ने कहा—

'पर हमें ये रोक तो सकते नहीं। मैं आऊँगी ज़रूर, चाहे जैसे हो। और रास्ता नहीं तो इटालियन फ़ौज में नर्स बन कर आऊँगी।' थोड़ा सोच कर उसने कहा—'मैं कोई न कोई रास्ता निकाल ही लूँगी, तुम निश्चिन्त रहो। इनके किये हम अलग नहीं होते।'

मुझे समझाने की अपेक्षा उसका अपने मन को समझाना ही अधिक कठिन साबित हो रहा था।

होटल छोड़ने के समय भी उसने कहा—
'तुम चलो तो ! अभी बिदाई का समय नहीं ।'

७

पोर्तो मर्कान्तील के सब से दूर के सिरे पर हमारा जहाज़ खड़ा था। वहाँ जाने के पहले हमें कई इटालियन जहाज़ रास्ते में खड़े मिले। जो सब से पास में था उसका नाम 'गंगा' था। इससे तीन सीढ़ियाँ जेटी पर लगाई गई थीं। एक से युद्ध-सामग्री की बोझाई हो रही थी, दूसरे से सैनिक भीतर जा रहे थे और तीसरी के सामने ख़च्चरों की कतारें खड़ी थीं।

सैनिकों और ख़च्चरों की सीढ़ियाँ पास-पास लगी थीं। चलते-चलते एक सैनिक ने अपने पाकेट से कंघी निकाल उस पर सिगरेट का कागज लगा बजाना शुरू किया। सैनिक करुण राग उस पर निकालना चाहता था पर उसकी आवाज़ निकलते ही ख़च्चरों ने रेंकना शुरू कर दिया।

'देखा !' लूसी ने उस ओर मेरा ध्यान दिलाते हुए कहा— 'इटालियनों के भावुक करुण राग का खच्चर भी विश्वास नहीं करते, उन्हें भी इससे भय लगता है।'

हम लोग देर तक खड़े यह तमाशा देखते रहे। साधारण सैनिकों के एक बार जहाज़ के भीतर चले जाने पर फिर बाहर

निकलने की इजाज़त नहीं थी। जिस रेलिंग के पीछे नीचे के डेक पर वे जा खड़े होते वह जेटी से ठीक पिंजड़े जैसा दिखाई देता। उनमें और खच्चरों के लिए बनाये गये पिंजड़ों में बहुत कम अन्तर था। यदि शक्ल में फ़र्क न रहता तो कोई भी इन्हें बलि के लिए ले जाये जाने वाले जानवर मान लेता।

डेक पर खड़े हो ये सैनिक अपने पहुँचाने के लिए आये लोगों को हाथ हिला कर बिदाई दे रहे थे। गोलमाल मचा रहने के कारण उनकी आवाज़ नीचे तक सुनाई नहीं देती थी।

कभी-कभी सैनिकों का ताँता रोक कर उनके अफ़सर उस रास्ते चढ़ते-उतरते। ये कभी-कभी बीच सीढ़ी पर ही रास्ता रोक कर खड़े हो जाते और एक-दूसरे से बिदाई लेने लगते।

इनकी बिदाई बड़े नाज़ और नख़रे के साथ हुआ करती। पहले ये एक-दूसरे को कस कर आलिंगन करते, फिर चूमते और एक-ब-एक सर नीचा कर सीढ़ी से हट जाते।

यह सारा दृश्य ठीक नाटक के जैसा प्रतीत होता। यह स्पष्ट था कि वे हृदय के आवेग के कारण उस प्रकार बिदाई नहीं ले रहे हैं बल्कि दूसरों को दिखलाने के लिए वैसा नाटक कर रहे हैं।

जेटी पर खड़े लोग भी इस नाटक के रंग को भंग करने के ख़िलाफ़ थे। यदि कोई बिदाई लेते हुए अफ़सरों की ओर

देख कर हमदर्दी दिखलाते हुए 'च...च...च...' करने की कोशिश करता तो पास खड़े लोग 'श्ट...श्ट...श्ट...' कर उसे रोक देते।

'सब के सब पूरे ऐक्टर दीखते हैं।' मैंने कहा—

'इसी कला में तो ये प्रवीण बनाये जाते हैं।' लूसी ने समर्थन करते हुए कहा—'इन्हें और आता ही क्या है? दक्षिणी इटालियनों के चेहरे को देख कर कभी उन पर विश्वास न करना। ये सबसे बड़े धोखेबाज़ हैं।'

एक अफ़सर बिदा ले कृत्रिम सिसक दिखलाता हुआ सीढ़ी से नीचे उतर रहा था। उसकी ओर इशारा कर लूसी ने कहा—

'अजी! आँसू नहीं निकलते तो थोड़ा पानी ही क्यों नहीं आँखों में लगा लेते!'

ठीक इसी समय बगल की सीढ़ी ज़ोर से हिल जाने के कारण ख़च्चर रेंकने लगे।

'इनके बिदा लेने का ढंग अच्छा है—' किसी ने कहा—'शायद अब इनके अफ़सर बिदा ले रहे हैं।'

मेरे बगल में खड़े व्यक्ति ने कहा—'नहीं जी! ये इटालियन अफ़सरों को बिदा लेने की तालीम दे रहे हैं।'

८

हमारे सामने करवट लेटे हुए पहाड़ समुद्र को हृदय से आलिंगन कर रहे थे। उन्होंने दूर तक अपना लंबा पाँव पसार लिया था। बाईं ओर उनका सर था। कुहनी के सहारे इसे टेक छिपे-छिपे आगे झुक समुद्र को चूमने का वे प्रयत्न करते थे।

समुद्र की पोशाक हलके नीले रंग की चिकनी लहरदार साड़ी थी। कभी-कभी इसे ऊँचा उठा उससे अपना मुँह छिपा रखने की इसकी चेष्टा होती पर तुरंत ही पहाड़ के सामने अपने को समर्पण भी कर देता। इसके आक्रमण दाव-पेंच के साथ—हँसते, इतराते, अठखेलियाँ लेते हुआ करते।

पहाड़ ने गहरे हरे रंग का चितकबरा गाढ़ा पहना था। इस पर सफ़ेद धारियों वाली हल्की पतली चादर। कंधे पर और भी गहरे रंग की मख़मली चादर झुला रखी थी। पर ये वस्त्र उसके गठीले बदन की सख़्ती, हृदय पर की सीधी रेखाएँ और हाव-भाव की कठोरता छिपा नहीं पाते। इनमें समुद्र जैसी चालबाज़ी नहीं। ये बिना हिचक के सीधे उसे अपनी ओर खींच लाना चाहते थे।

इन दोनों के पीछे बहुत दूर तक और भी मालूम नहीं कितने पहाड़ मजलिस जमाये थे। उनमें कोई लेटा हुआ दूर

से समुद्र की ओर उदास नज़रों से देख रहा था, कोई बैठा उसे अपनी ओर बुलाने की चेष्टा में था और कोई बहुत ऊँचा सर उठा कर घुड़की दिखला रहा था।

बादल अलग ही आपस में खेल रहे थे। एक-दूसरे को खदेड़ते समय वे पहाड़ों के देह पर चढ़ जाते और कभी-कभी उनके मस्तक पर फाँद जाते। पहाड़ यह सब कुछ बड़े शांत भाव से बर्दाश्त कर लेते। ग़ुस्से में आकर कभी भी बादलों को तमाचा लगाते वे नहीं दिखलाई दिये।

यह थी हमारे लिए नैपल्स की आख़िरी झलक।

६

हमारे जहाज़ की सबसे ऊपर वाली छत हमें सबसे एकान्त स्थान मिला। ख़तरे के वक्त काम में आने वाली नौकाओं की आड़ में हम देर तक बैठे रहे।

बिदा लेने के समय के समान शायद और कोई भी समय जल्दी नहीं आता। जहाज़ ने दो लंबी-लंबी सीटियाँ दी थीं पर हमें उनकी सुध नहीं थी। हम इतमीनान के साथ बैठे थे। 'हम अलग हो रहे हैं—' यह भाव ऐन बिदा लेने के वक्त बिलकुल ही भूल जाता है। उसके स्थान पर हृदय अपने ऊपर जमा कर बैठाये रहता है—'हम कभी अलग थे ही नहीं, आगे होंगे तो कैसे?'

उसने धीरे-धीरे मेरा सर अपनी ओर खींच लिया था। उसके श्वास की असमान आहट में मैं उसके हृदय की गति परख रहा था। मेरा कालर खोल उसने माला जैसी कोई चीज़ मुझे पहना दी और कहा—'माफ़ करना।'

छाती पर की हल्की सी चीज़ हाथ में लेते हुए मैंने पूछा—'यह क्या है?'

'तुम लड़ाई में जा रहे हो! मैंने सुना है सेंट आन्थोनी की तावीज़ हमेशा रक्षा करती है।'

'तू कैथोलिक कब से बनी?'

भय से उसके आँख और ओठ फूलते आ रहे थे। उसने कोई उत्तर नहीं दिया।

जहाज़ ने आख़िरी सीटी दी। वह चौंक पड़ी। मेरे हाथों का सहारा लेती सीढ़ी के नीचे उतरी और जेटी पर जा खड़ी हुई।

मैं उससे दूर खिंचा चला जा रहा था। इशारे से उसने बतलाया—

'मैं आऊँगी, आऊँगी, ज़रूर आऊँगी।'

द्वितीय खण्ड

यात्री

१

'यह है नाविक प्रेम अमर,
हर पोर्ट में मिलती नारी न्यारी,
कहीं गोरी कहीं कारी प्यारी;
जैसे-जैसे मदिरा ढलती,
वैसे-वैसे परी बदलती;
झूम-धूम हम नाचें,
झूम-झूम सब गायें—
यह है नाविक प्रेम अमर।'

ग्रामोफ़ोन पर बजता जाता।

'अँ···द्यो···त्रोआ···कात्र···' एक···दो···तीन···चार···।

आधी दर्जन जोड़ियाँ फ़ौक्सट्रौट के ताल में पाँव पटक कर नाच रही थीं। तेज़ कदम से वे कभी आगे बढ़ते, पीछे हटते, एकाएक घूम जाया करते और बीच-बीच में 'फ़ीगर' काट कर

पाँवों की कुशलता दिखलाया करते। औरतों के शरीर में ऐसी लचक दिखाई देती मानों हड्डियाँ उनके शरीर में हैं ही नहीं। पुरुष तो उन्हें सिर्फ़ सहारा देने मात्र के लिए थे। ये लोग नाचते हुए एक कमरे से दूसरे कमरे में निकल जाया करते।

इन्हें देख कर सराहने तथा प्रोत्साहित करने के लिए सिर्फ़ एक जोड़ा मुख्य नाचघर के कमरे में खिड़की के पास बैठा था। उनके सामने कई ख़ाली और भरे शैंपेन के बोतल रखे थे। वे स्वयं कुर्सी पर से ही झूम रहे थे। इनमें एक युवती और दूसरा अधेड़ था। दोनों ही अपनी-अपनी बारीकी और विशेषताओं के कारण आगन्तुक का ध्यान अपनी ओर खींच लिया करते।

युवती को साक्षात् नज़ाकत की पुतली नाम देना ही अधिक उपयुक्त होगा। बाल एक-एक कर सँवारे और उसी दिन शाम को जहाज़ के नाई द्वारा घुँघराले बनाये गये थे। मुँह का काट लंबा होने के कारण जो गुड़ियाएँ उन्होंने पहनी थीं वे उनके कान, गले, बाल और गट्टे सब जगह के सौंदर्य को अपनी रीति से बढ़ा कर दिखलाया करतीं। उँगलियों के नाख़ून एक-एक इंच बढ़ा कर रखे गये थे जिसमें देखने वाले को पहली झलक में ही इस बात का सन्देह न रह जाय कि सिवा नज़ाकत के उन मादमोजेल (कुमारी) का और कोई काम नहीं हो सकता।

उनके सामने की कुर्सी पर मेरे बैठने के कारण ज़रा 'कर्र...कर्र' की आवाज़ धीमे से हुई।

'ओ...ओ...' वे चौंक कर उछल पड़ीं—'मैं तो ऐसा चौंकी मानो ज़ोरों की बिजली कड़क रही हो।'

उनके बगल में बैठे सज्जन ध्यान से मेरी ओर निहारने लगे। मुझे भी उनकी आकृति निरखने का अच्छा मौक़ा मिला। बिना परकाल से गोल वृत्त खींचे वैसा सटीक गोलाकार मुँह नहीं उतर सकता था। परकाल ने जिस स्थान को केन्द्र माना था वहाँ छेद हो गया था। और आसपास का चमड़ा सिकुड़न आने के कारण कुछ ऊँचा उठ गया था—इससे ही पूरी नाक बन गई थी। सर गुरुजी की पाठशाला में पढ़ने वाले लड़कों के गेल्हे जैसा चिकना-चुपड़ा। आँखें सीधी लकीर में मुलुर-मुलुर झाँकती हुईं। शरीर की बनावट मिशेलिन टायरों के विज्ञापन में दिखाये गये आदमी की शक्ल जैसी।

'तब मादमोजेल...' मोटे होठों के भीतर से अपने पतले छोटे दाँत दिखलाते हुए वे बोले—'इससे बढ़ कर रोमांचक यात्रा की क्या आप कभी कल्पना भी कर सकती थीं?'

'सचमुच नहीं। यह तो हमारे पैरिस से प्रतिद्वंद्विता कर रहा है।' 'हमारे' शब्द पर उन्होंने खूब ज़ोर दिया—'कमी सिर्फ़ इस बात की है कि इन नाच करने वालों को तमीज़ नहीं।

औरतों के कसके पकड़ना तक नहीं जानते—इसी लिए तो मैं इनके साथ नाचती नहीं।'

मादमोजेल कुछ आवेश में ये बातें बोल गईं; उन्हें संदेह हुआ कि उस आवेश के कारण उनके बाल हिल गये होंगे। वे नाई की केबिन की ओर चलीं।

मोशिये पहले तो अपनी कुर्सी पर बैठे जम्हाई लेने लगे और फिर तुरंत ही ऊँघने भी लगे। जिस समय मादमोजेल आईं, उनका सर कुर्सी पर उठँगा और मुँह बिल्कुल खुला था। मादमोजेल ने धीरे से उनके मुँह में चीनी का एक डला डाल दिया। मोशिए थू-थू... करते हुए जाग पड़े। आसपास के सब लोग हँस रहे थे।

'इस अभद्रता के लिए, आशा है, आप क्षमा करेंगी।' उन्होंने मादमोजेल से माफ़ी माँगी।

'आपके माफ़ी माँगने की आवश्यकता नहीं। मैं एक प्रयोग कर रही थी। आपके दाँत खरबूज़े के बीज जैसे नरम और चिकने दीख रहे थे, मैं जाँच कर देखना चाहती थी कि वे चीनी का डला तोड़ सकते हैं वा नहीं!'

'मेरे दाँत आपके इस उपयोग में आ सके, इसकी मुझे निहायत ख़ुशी है। आज से मैं इन्हें धन्य मानूँगा।' मोशिये ने तीन बार झुक कर नम्रता प्रकाश करते हुए कहा।

हम लोग और भी कुछ देर बैठे रहे। नाचने वाले भी थक कर अपनी-अपनी केबिनों में चले गये। मोशिये के कुर्सी से लुढ़क जाने की नौबत आने लगी। खलासियों के अपनी लाश उठाने के कष्ट का ख़याल कर वे भी अपनी केबिन में चले गये।

मैं अकेला ऊपर के डेक पर गया। मेघ घिरते आ रहे थे। जिस दिशा में हम जा रहे थे उधर एकाध बार बिजली भी चमकती दिखाई दी।

थोड़ी देर में मादमोजेल भी ऊपर आती दिखाई दीं। मैंने उनकी ओर ध्यान नहीं दिया।

'आ...आ...आ...' वे चीख़ उठीं। मैं उनके पास गया। मेरा हाथ पकड़ उन्होंने अपने पाँव के नीचे की चीज़ का निरीक्षण किया। उनके ही बालों से गिरा साधारण सा हेअरपिन था। 'मैंने तो समझा साँप के ऊपर मेरा पाँव पड़ा। पूर्वी देशों का ख़याल आते ही मुझे साँप याद आते हैं। आपने असली साँप देखे हैं?'

'आपके बालों से निकले हुए साँप तो मैंने आज ही देखे।' कह कर मैं फिर चमकती हुई बिजली की ओर देखने लगा।

'उधर न देखिए—' उन्हेंाने मुझे खींचा, 'उससे बड़ा अपशकुन होता है। उससे अच्छा—हम लोग नाचें!'

'नहीं, मेरी तबियत नहीं।'

'मैं आपको नाविक-नृत्य दिखाऊँ?'

उनका परिचित खलासी ऊपर डेक पर आ गया था। वे उसके साथ तरह-तरह के नाच का अभ्यास करने लगीं।

तूफ़ान आने की सम्भावना देख मैं अपनी केबिन में चला गया।

२

आधी रात के बाद जहाज़ ने भूमध्यसागर में प्रवेश किया। इसी समय ज़ोरों का तूफ़ान आया। हवा के विरुद्ध सारी ताक़त लगा कर जहाज़ आगे बढ़ना चाहता था। कुहासे ने चारों तरफ़ से घेर लिया था।

बिस्तरे पर लेटे-लेटे ही मैंने पोर्टहोल से बाहर झाँक कर देखना चाहा। ऐसा अन्धकार था कि कुछ भी दिखाई नहीं दिया। सिर्फ़ लहरों के जहाज़ से टकरा कर चूर-चूर होने के समय की आवाज़ सुनाई देती रही।

मैंने सोने का प्रयत्न किया। इस समय तक जहाज़ का झूलना आरम्भ हो गया था। बार-बार सर के बनिस्बत पाँव ऊपर होता जा रहा है, यह महसूस होने लगा। मैंने तकिये को दोहरा मोड़ कर सिरहाने रखा। पर इससे कोई फ़ायदा

नहीं हुआ। अब मैं करवट की ओर लुढ़कने लगा। चाहता था बायें करवट सोना और हो जाता था यह दाहिने। शुरू-शुरू में थोड़ा संघर्ष किया पर उससे कोई फ़ायदा न देख देह को ढीला छोड़ दिया।

अब मज़े से झूला झूलने लगा। जितने ज़ोरों का पेंग जहाज़ पर लेटे-लेटे इस समय लगा रहा था, झूले पर बैठ हज़ार कोशिशें करने पर भी शायद ही वैसा लगा पाया होऊँगा। थोड़ी देर तो ख़ूब मज़ा आया पर पेंग बहुत लंबा होता जाता था। सर में चक्कर आने से बचने के लिए उसे रोकना आवश्यक था। जब इसे रोकने में समर्थ नहीं हुआ तो तबियत झुँझलाने लगी।

'अब नहीं झूलूँगा! अकड़ कर सोऊँगा!' तय किया। पर हमारे तय करने से क्या होता है। फिर वही ज़ोरों का 'हैं यो···यो···यो···!' सोचा कि एक तरफ़ से हिलने दूँगा पर लौटते पेंग को ज़ोर लगा कर रोकूँगा। कोशिश की तो वह पेंग और भी ज़ोर का हो गया। इस हालत में नींद आ नहीं सकती थी इसलिए तबियत और भी अधिक परेशान हो रही थी।

'धम्········' बाहर बरामदे से आवाज़ आई। किसी ओखली के गिरने पर ही ऐसी ज़ोरों की आवाज़ आ सकती थी।

पर जहाज़ पर ओखली आयगी कहाँ से ? तुरंत ही लुढ़कने जैसी आवाज़ आई। रोशनी जला कर मैंने अपनी केबिन का दरवाज़ा खोला।

बरामदे में मोटे मोशिये चारों ख़ाने चित्त। उठने की कोशिश कर रहे थे, पर जहाज़ का हिलना उन्हें तुरंत ही कभी दायें कभी बायें पटक देता था। फ़र्श के साथ उनकी अच्छी कुश्ती चल रही थी। उठने की तो बात दूर रही उनके लिए हाथ टेकना तक मुश्किल था।

'आँ...ओं...आ...ऊ...' करते रहने के बाद 'क्या मुसीबत है !' कहते हुए जब हाथ टेकने की हिम्मत करते तो पाँव बेतरह ऊँचे हो जाया करते और थस...।

मैं उन्हें सहारा देने के लिए आगे आया लेकिन उनकी लाश इतनी भारी थी कि अपने को सम्हालते हुए उन्हें हाथ टेकवा देना मेरे लिए सम्भव नहीं हुआ। वे अत्यधिक परिश्रम के कारण पसीने-पसीने होते जा रहे थे। उनका रात का पहना जाने वाला सूट इस समय पसीने से चपाचप हो रहा था।

मैं खलासियों को आवाज़ देने आगे बढ़ा। बिना रेलिंग वा और किसी चीज़ का सहारा लिये पाँव डुलमुलाने लगते थे। ठीक इसी हालत में अपनी केबिन का दरवाज़ा पकड़े मादमोजेल को देखा।

'हमें उतर जाने दो ! जहाज़ खड़ा करो ! हमें उतारो !' वे चिल्ला रही थीं।

मेरे पास पहुँचने पर उन्होंने मुझे चमोट कर पकड़ते हुए कहा—

'कप्तान से कहिए वह जहाज़ खड़ा करे...हमें उतार दे ! अब नहीं ! अब नहीं !' वे हाँफ रही थीं।

'ठहरिए, आपके लिए इंतज़ाम करता हूँ !' मैंने उन्हें तसल्ली दी।

'नहीं, नहीं, आप जाइए नहीं ! मैं डूब रही हूँ ! डूब रही हूँ ! अब डूबी ! मरी...' वे चीख़ती हुई फिर मुझसे चिपट पड़ीं।

एक डेक चेयर पास में ही पड़ी थी। मैंने उस पर उन्हें बैठ जाने के लिए कहा। वे 'नहीं, नहीं' करती रहीं। बड़ी मुश्किल से मैंने उन्हें उस पर बैठाया। वहाँ उन्हें आराम मिलना चाहिए था पर चिल्लाने का नख़रा उनका जारी ही रहा।

बिछावन के चादर के चारों खूँट चार तरफ़ थोड़ा ऊँचा बाँध कर मैंने तैयार किया और उस पर उन्हें लेट जाने के लिए कहा।

'नहीं ! जहाज़ आगे नहीं जाय ! कप्तान से कहो वह रोके।' वे बरबराती रहीं।

इनकी आवाज़ मोटे मोशिये के कानों में पड़ी।

'जहाज़ वापस! लौटा ले चलो!' वे जवाब में चिल्ला उठे। इस समय तक उठने की हिम्मत करने से भी वे बाज़ आ चुके थे और देह ढीली छोड़ कर जहाज़ के पेंग के साथ कभी करवट, कभी चित्त, कभी पट्ट, पड़ते जाने में ही अपनी ख़ैरियत समझ रहे थे।

चादर के झूले में सवार होना मादमोजेल के लिए मुश्किल हो रहा था। मैं उन्हें सहारा देने चला तो वे इस बार जकड़ कर मेरे गले से लिपट गईं। मैंने देखा जहाज़ के हिलने से उन्हें जितनी तकलीफ़ नहीं उतना वे नख़रा कर अपनी तक-लीफ़ बढ़ा रही हैं।

'नख़रा छोड़ कर झूले पर सवार हूजिए, आपकी तबियत अभी अच्छी हो जायगी।' मैंने उन्हें राय दी।

'बेरहम!' गाली देने की सुध उनकी नहीं भूली थी—'मैं डूबी! अब डूबी!'

इनका चिल्लाना सुन कर आसपास की केबिनों के लोग भी दरवाज़ा खोल कर झाँकी लेने लगे थे पर शायद वे इनके स्वभाव से परिचित थे।

मेरे उन्हें फ़र्श पर पटक देने की धमकी देने पर उन्होंने मेरा गला छोड़ा। झट से वे झूले पर सवार हो गईं और मोटे मोशिये की ओर देख कहा—'आहा···कैसा मज़ा है!'

मुश्किल से मोटे मोशिये डेक चेयर पर बिठाये गये। उनकी कुर्सी मादमोजेल के झूले के नीचे थी।

मैं फिर अपनी केबिन में जाने लगा।

'मुझे उल्टी...' मादमोजेल की आवाज़ आई—'थू ...'

'हमें यहाँ से हटाओ!' कहते हुए वहाँ से कुर्सी सरकाने की चेष्टा में मोशिये फिर लुढ़क गये। इस बार कुर्सी उनकी तोंद पर आ जमी। इसके भार से उनका इतना फ़ायदा अवश्य हुआ कि जहाज़ के पेंग के साथ उन्हें जितना लुढ़कना पड़ता था वह कहीं कम हो गया।

मैं अफ़सोस करने लगा कि उनकी मदद करने की यह तरकीब मुझे पहले नहीं सूझी।

२

ख़ैरियत हुई कि दूसरे दिन सुबह तूफ़ान रुक गया। समुद्र फिर पहले की भाँति एक झील-सा दीखने लगा। जहाज़ का पैंतरा काटते हुए चलना बंद हुआ।

मादमोजेल झूले से नीचे उतरीं। मोशिये स्थिर क़दमों में डेक पर चल-फिर करने लगे। दोनों ने पिछली रात की सहायता के लिए मुझे धन्यवाद दिया। उनका परिचय भी मुझे विशेष रूप से मालूम हुआ।

मादमोजेल ने अपनी प्रकृति रोमांच पसंद करने वाली और पेशा 'एडेवेंचर' बतलाया। यह प्रकृति और उनका पेशा पुश्तैनी था। इसका उन्हें गर्व भी रहता। इनके दादा रूसी, दादी इटालियन, पिता पोर्तुगीज़ और माँ फ्रेंच थीं। इस तरह से अपने पूर्णतया अंतर्राष्ट्रीय होने का इन्हें अभिमान होता।

मुझसे उन्होंने दोस्ती की गाँठ बाँधी और अपने को तू और पाउली कह कर पुकारने को कहा।

'और कभी बेल्जियम आइए तो हमारे घर ठहरने की कृपा कीजिए—' मोशिये ने कहा। इनका नाम मोशिये लातूर था। लिएज़ के हथियार तैयार करने वाले कारख़ाने के बिक्री विभाग के ये एक ठीकेदार थे। इस समय एक ख़ास इरादे से ये अफ्रिका जा रहे थे।

मोशिये को अपने बैंक के हिसाब, ओपेरा की बहुत सी नर्तकियों से परिचय और यूरोपीय होने का गर्व था। दूसरों को ये बातें बाद में मालूम होतीं। पहली दृष्टि में तो उनके ढोल से आकार की विशेषता पर ही आँखें गड़ जाया करतीं। इसी आकार को शायद मोशिये क़ुदरत के द्वारा बनाई गई चीज़ों में सबसे सुन्दर भी क़रार देते क्योंकि उन्हें प्रत्येक सुन्दरी के तुरंत ही अपनी ओर विशेष रूप से आकर्षित हो जाने का सिर्फ़

सबूत ही नहीं मिलता, बल्कि उनका मुग्ध हो जाना भी ये स्वयं अनुभव करने लगते।

पाउली और मोशिये दोनों के लिए यह पहली ही समुद्र-यात्रा थी। इतना बड़ा तूफ़ान उनकी कल्पना के बाहर की बात थी। समुद्र में ऐसे तूफ़ान अकसर आया ही करते हैं यह बात उन दोनों में कोई भी मानने के लिए तैयार नहीं हो रहा था। मोशिये तो यहाँ तक समझ रहे थे कि होमर के ओडीसी को भी कभी इतने बड़े तूफ़ान का सामना नहीं करना पड़ा होगा। अपने बाल-बाल बच जाने की ख़बर उन्होंने बेतार के तार द्वारा अपने घर वालों के पास भेजी और इसे देश के हरएक अख़बार में दे देने के लिए कहा।

इसी पहली यात्रा में वे अनोखे 'साहसी' बन जाना चाहते थे। अपने कैमरे से उन्होंने मुझे उनका अनेक रूप में फोटो लेने के लिए कहा। नीचे के डेक पर चट्ट का बनाया हुआ एक बड़ा सा हौज़ था जिसमें समुद्र का पानी भर कर मुसाफ़िर नहाया करते थे। मोशिये लातूर कोट-पैंट पहने उसमें जा कूदे और मुझे अपना फोटो लेने को कहा। तुरंत रस्सा डाल कर अपने को आधे दर्जन खलासियों से ऊपर खिंचवाया और उसका भी फोटो ले लेने के लिए कहा। फिर वे सबसे ऊपर के डेक पर गये और ख़तरे से बचने वाली नौका में बैठ कर

अपना फोटो लिवाया। पहले तो मुझे इन सब फ़ोटो का कोई अर्थ मालूम नहीं हुआ पर जब उन्होंने कहा कि पिछली रात की यह अच्छी यादगार रहेगी—तो मैं सब समझ गया।

वे वास्तव में ही अपने को तूफ़ान की रात का 'हीरो' मानने लगे थे। आगे चल कर मुझे यह भी पता लगा कि उनके 'समुद्री साहस' के बहुत से फोटो बेल्जियम के प्रमुख अख़-बारों में भी छपे थे। मुझे अफ़सोस रहा कि फोटो लेने का पुरस्कार मुझे न मिला।

४

उस जहाज़ के मुसाफ़िरों में बहुत से अबीसीनिया जाने वाले थे। ऐसे मुसाफ़िर लगभग सब के सब अपने-अपने ढंग के 'ऐडवेंचरर' थे। इनमें कितने ही सैनिक-विद्या में पारंगत थे। कई ऐसे भी थे जिन्होंने महायुद्ध के समय अच्छा नाम कमाया था। अब यूरोपीय आर्थिक संकट के मारे ये अबीसी-नियन फ़ौज में नौकरी ढूँढ़ने चले थे।

पर इनमें कई, सैन्य-विद्या में चाहे वे कितने ही निपुण क्यों न हों, साधारण ज्ञान की बातों में बिलकुल ही पिछड़े हुए दिखाई दिये। एक साढ़े छः फ़ीट लंबे अँगरेज़ नेवी अफ़सर की यह बात सुन कर कि वे अबीसीनिया की नेवी में भर्ती होने जा रहे हैं मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। महायुद्ध के समय इस

अफ़सर ने बहादुरी के लिए जितने तमग़े पाये थे उन सबको ये अपने साथ अबीसीनिया के शाहंशाह को दिखाने के लिए लिये जा रहे थे। इन्हें अफ़्रिकन तट के पास पहुँचने तक यह विश्वास नहीं हो रहा था कि अबीसीनिया के पास न तो कोई नेवी है और न उसका होना संभव ही है।

इसी प्रकार लगभग एक दर्जन हवाई जहाज़ चलाने वाले थे जो अपनी सेवाएँ अबीसीनियन सरकार के सुपुर्द करना चाहते थे। ये ऐसे हवाई जहाज़ चलाना जानते थे जिनमें एक भी अबीसीनिया के पास नहीं थे।

कुछ पैदल सेना के दक्ष अफ़सर भी मिले जिनका पेशा ही लड़ाई में भाग लेते रहना था। जहाँ कहीं—दुनिया के चाहे जिस हिस्से में—लड़ाई छिड़ती वे वहाँ जा हाज़िर होते और जिस पक्ष में भी उन्हें क्यों न नौकरी मिल जाती वे इसे स्वीकार कर लिया करते और लड़ा करते। इनमें कई दक्षिण अमेरिका में पारागुआ की ओर से, और मंचूरिया में कभी चीनी और कभी जापानी फ़ौज के साथ लड़ चुके थे।

इन फ़ौजी लोगों के लिए तनख़्वाह ख़ास चीज़ थी; फिर वे चाहे जो कोई पक्ष भी क्यों न हो उसका हुक्म मानने के लिए हमेशा तैयार रहते थे। लड़ाई के जायज़-नाजायज़, किसी पक्ष के दोषी-निर्दोषी होने की जाँच करने के फेर में ये कभी नहीं पड़ते थे।

ऐसे सैनिकों को मैं पहले पहल देख रहा था। इसलिए ताज्जुब भी बहुत ज़्यादा हो रहा था। बिना किसी भाव के, बिना किसी सिद्धांत का ज़ोर रहे मृत्यु के मुख में कूदना संभव होता है इस पर अब भी विश्वास नहीं हो रहा था। मनुष्य होकर भी अपनी विचार-बुद्धि से काम न लेना—यह मुझे सबसे अधिक आश्चर्य की बात दीख रही थी।

पर जितना ही अधिक निकट से इन सैनिकों की जाँच करता उतना ही इस नतीजे पर पहुँचता कि जन्म से ही उन्हें शिक्षा दी गई है कि मनुष्य की अपनी बुद्धि किसी काम की नहीं होती। अपने से ऊपर के अफ़सरों का हुक्म मानना ही मनुष्य का एकमात्र कर्तव्य है। इसी में साहस, इसी में बहादुरी, इसी में मनुष्यता है।

५

इन दिनों सारे संसार की आँखें अबीसीनिया की ओर लगी थीं। इसमें भी अब संदेह की गुंजाइश नहीं रह गई थी कि इटली अफ्रिका के उस अन्तिम स्वतंत्र देश पर आक्रमण करने से अपने को नहीं रोक सकता। सारे संसार में ही इसकी चर्चा चल रही थी।

हमारे जहाज़ के मुसाफ़िरों का तो सारा समय ही इसी

विषय की चर्चा में कटा करता। पर कभी-कभी यह गहरे वाद-विवाद का कारण भी बन जाता।

मोशिये लातूर इस मामले में सबसे अधिक दिलचस्पी रखते। उन्हें इस बात से बहुत भारी चिढ़ होती कि गोरे सैनिक काली फ़ौज में भर्ती होने जा रहे थे।

'यह तो मेरे बर्दाश्त के बाहर की बात है—' वे कहा करते—'चाहे हमारा आपस में कितना भी झगड़ा क्यों न हो, यूरोपियन होने के नाते हम इटली के ख़िलाफ़ नहीं जा सकते।'

'लेकिन हमारे यूरोपियन होने पर भी तो इटली में हमें भूखों मरना पड़ा और पास में पैसे न रहने के कारण वहाँ से निकाल दिया गया।' एक सैनिक ने उन्हें उत्तर दिया।

'लेकिन इस मामूली सी बात के लिए गोरी जाति पर धब्बा लगाना ठीक नहीं—' लातूर उसे समझाने लगे—'फिर हमारे उपनिवेशों में हमारी क्या धाक रह जायगी? सब समझेंगे गोरी फ़ौज भी ख़रीदी जा सकती है! इसी दिन से तो उपनिवेशों में क्रांति शुरू हो जायगी। जैसे हम लोगों ने काले लोगों को तनख़्वाह देकर उससे उनके देशवासियों को दास बनाया है वैसे ही तो वे भी गोरे लोगों को तनख़्वाह देकर गोरों से लड़ा देंगे, आज़ाद हो जायँगे और अजब नहीं कि आगे

चल कर हमारे यूरोप पर भी हमला करने लगें। यह छोटी सी बात नहीं है। काली फ़ौज में भर्ती होने का नमूना पेश करना ही बड़ी ख़तरनाक बात है।'

सैनिक उनकी बातें सुन लेते पर इसका उन पर कुछ असर नहीं होता। एक तो उन्हें दलील करने की वैसी आदत ही नहीं रहती और दूसरे उस दलील से वे अपना कुछ फ़ायदा भी नहीं देखते।

हाँ, मुझसे कभी-कभी मोशिये लातूर की अवश्य ही मुठभेड़ हो जाया करती। मेरे सामने वे रोमन सभ्यता के पक्के भक्त की हैसियत से पेश आते और कहते—

'देखिए! मुसोलिनी ने यदि और कुछ न कर सिर्फ़ फ़ैसिस्ट सभ्यता का प्रसार किया है तो उससे ही संसार का कितना लाभ है! यूरोप में मज़दूरों के उत्पात रुक गये, किसान शांत हो गये। यदि मुसोलिनी न होता तो आज सारे यूरोप में ये मज़दूर ख़ून की नदियाँ बहाते होते जनाब! और अब वही शांति अफ़्रिका में भी विराजेगी। हमारे कारख़ानों को सहूलियत से वहाँ से लोहा मिल सकेगा! इसमें तो सारे यूरोप का फ़ायदा है। और कुछ नहीं तो सभ्यता-प्रसार का जहाँ तक ताल्लुक़ है उसी का ख़याल कर मैं तो मुसोलिनी का पक्का भक्त हूँ।'

इन्हें अपने इस ढोंग पर वास्तव में ही विश्वास था और

ये अपने भाव और वास्तविक काम में इशारा मिलने पर भी किसी प्रकार का विरोधाभास नहीं देख सकते थे।

'फिर आप मुसोलिनी के पक्के समर्थक हैं?' मैंने उनसे प्रश्न किया।

'अवश्य!'

'तब तो उसके कामों में भी आपको उसे मदद देनी चाहिए।'

'अवश्य! जिस दिन वह हथियार ख़रीदना चाहे हम उसके हाथ बेचेंगे। पर इसकी तो उसके अपने निज के ही पास बहुतायत है।'

'लेकिन आप तो वे हथियार अबीसीनिया के हाथ अभी बेचने जा रहे हैं जिनसे आगे चल कर मुसोलिनी के सैनिक मारे जायँगे।'

'इसकी कोई बात नहीं—' लापरवाही और मुसकराहट अपने चेहरे पर दिखलाते हुए उन्होंने कहा—'यह तो व्यापार की बात है जिसका सभ्यता की उच्च भावनाओं से ताल्लुक़ नहीं।'

मुझे पाउली एक ओर खींच ले गई और कहा—

'अजी तुम भी किस झमेले में पड़े। इस फ़ज़ूल की बकवाद से क्या कोई लाभ है? अभी तो तुम्हें सोचना चाहिए कि उस खूसट बुड्ढे के पैसे पर किस प्रकार मौज उड़ाई जाय।'

उसने इसके लिए एक पूरा विस्तृत कार्यक्रम तैयार किया था।

'मैं तो नील नदी तट के रोमांचक जीवन का स्वप्न देख रही हूँ। बहुत दिनों से मेरी इच्छा है कि कैरो से ख़ारतूम तक नील नदी के स्टीमरों में यात्रा करूँ। इस बूढ़े से हम उसका पूरा ख़र्च लेंगे। तुम तो फ़जूल-फ़जूल उस बेवकूफ़ से झगड़ जाना चाहते हो।'

उसकी योजना मुझे पसंद आई। रंग-ढंग से मालूम हुआ, वह पूरी भी की जा सकती थी। मैं राज़ी हो गया।

अफ़्रिकन तट भी दिखाई देने लगा था। जिस तट से मैं बिदा लेकर आ रहा था उससे यह बिल्कुल भिन्न था। पहली दृष्टि में यह मुझे बड़ा ही शुष्क जँचा।

लातूर पाशा

१

यूरोप से आने वाले पोर्टसैद को रोमांचक पूर्व का दरवाज़ा मानते हैं। अरबों की सूरत-शक्ल, डीलडौल, उनके पहनने का ढंग, उनकी पुलाव सी ज़ायकेदार ज़बान--इन सब में यूरोप के लोगों के लिए एक विशेष आकर्षण रहता है।

जहाज़ से उतर कर एक छोटी किश्ती पर हम लोग किनारे जा रहे थे। हवा चलने के कारण लहरें कुछ ऊँची उठ रही थीं। खेने वाला बड़ी कुशलता से किश्ती आगे बढ़ा रहा था। हम लोगों ने उसकी सराहना की।

'यह क्या है!' उसने उत्तर दिया—'मैं तो आजकल के लाल सागर के तूफ़ान में भी बीच समुद्र तक जाया करता हूँ।'

'क्या आजकल लाल सागर में तूफ़ान है?' मोशिये लातूर चौंके।

'उसका मौसिम ही है।'

मोशिये का चेहरा मलिन पड़ने लगा। पाउली मुसकराई। उसने कहा—

'इसमें क्या है—मिस्र से आगे की हमारी यात्रा हवाई जहाज़ द्वारा होगी।'

नाव के किनारे लगते ही कई अरबों ने आकर हमें घेर लिया। वे सब तरह की ज़बान बोल सकते थे। मोशिये लातूर की मातृभाषा में एक ने मिस्र में मिलने वाली मिसरी और खजूर से भी मीठी सुंदर ललनाओं का चित्र खींचना शुरू किया। जिस गंभीरता से वह अरब बोल रहा था उसका अविश्वास नहीं किया जा सकता था।

मोशिये के पाँव फड़कने लगे। एक नये तरह के 'ऐड-वेंचर' का ख़ाका उनके दिमाग़ में तुरंत ही खिंच आया।

२

मिस्र में दलालों की भरमार है। ये ठीक लरछुत (जोंक) की तरह होते हैं—एक बार चिपकने पर फिर आसानी से पीछा नहीं छोड़ते। यात्री उन्हें चाहे जितना भी डाटें, गालियाँ दें, मारने तक दौड़ें पर दलाल उनकी 'सहायता' करने से बाज़ नहीं आते। यदि यात्री नरम दिल के हुए तब तो दलाल उन्हें चारों तरफ़ से घेर हाथ-पाँव पकड़ खींचातानी करने लगते हैं।

हमारी तबियत न होने पर भी दलालों के पाले पड़ हमें कैरो पहुँचने पर एक ग्रीक होटल में ठहरना पड़ा। पाउली का शृंगार कराने के लिए दलाल उन्हें शहर के सबसे बड़े नाई की दुकान पर ले गये। उनके लौटने में कई घंटों की देर लगती यह जानी हुई बात थी। होटल वाले ने तब तक हम लोगों को 'अलबहार' देख आने के लिए कहा। इसकी तारीफ़ में उसने इसे संसार की सबसे सुंदर स्त्रियों का अजायबघर बतलाया। हमें साथ ले जाने वाला दलाल और भी एक क़दम आगे गया। उसने इसे सीधे स्वर्ग से उतरी अप्सराओं का घोंसला नाम दिया।

हमारे फाटक पर पहुँचने पर 'अलबहार' के मालिक ने आगे आ शुद्ध फ्रेंच भाषा में हमारा स्वागत किया। एक छोटे से सजे-सजाये कमरे में हम बैठाये गये। रेस्टुराँ-मालिक ने बिना किसी संकोच के एक साँस में ही दो बोतल शराब और दो ग्रीक लड़कियों के लाने का हुक्म दिया।

कुछ मिनटों के ही बीच दोनों चीज़ें हाज़िर हुईं। बोतलें मेज़ पर पटक दी गईं और लड़कियाँ मुसकराती हुई बगल की कुर्सियों पर आ बैठीं। इनके चेहरे पर लालित्य और सौंदर्य तो दूर रहा जवानी की स्मृति भी शेष नहीं बची थी।

मोशिये लातूर तो सिर्फ़ नाक-भौंव सिकोड़ कर ही चुप रहे, पर मैं कह बैठा—'ये तो बड़ी ही भयानक हैं।'

'दूसरी लीजिए। हमारे यहाँ चीज़ों की कमी नहीं।' रेस्टुराँ-मालिक ने अपने स्थान से ही खड़े, पर ज़रा झुक कर कहा।

'बख़्शीश !' हाथ पसार कर दोनों लड़कियों ने कहा।

मोशिये लातूर ने दोनों के हाथ में एक-एक शिलिंग रखा।

'हमारे यहाँ आधे क्राउन से छोटे सिक्के नहीं चलते।' लड़कियों ने उज्रदारी की।

'वैसे सभ्यता के नाते तो रेट एक क्राउन है' मालिक आगे आ कहने लगा—'पर अभी तो आपको और भी चुनना है, इसलिए आधे क्राउन में हमें कोई आपत्ति नहीं।'

इन लड़कियों के बिदा किये जाने पर बारी-बारी से और और भी छः जोड़ियाँ सामने लाई गईं पर वे पहली से भी ख़राब निकलीं, फिर भी उन्हीं के रेट पर बिदा कर दी गईं।

'हमें अब और सौन्दर्य देखना नहीं—घर चलें।' तय कर हम उठे। चतुर व्यवसायी की भाँति रेस्टुराँ-मालिक सामने आ कहने लगा—

'लेकिन खुचड़े में तो इससे बढ़िया सौदा आपको और कहीं मिल भी नहीं सकता।'

ग्रीक दलाल को भी हमारी निराशा पर बड़ा आश्चर्य हुआ। पर अपनी पुष्टि के लिए उसने कहा—

'इटालियन लोगों ने यहाँ का यह बाज़ार भी ख़राब कर रखा है। उन्हें असमारा में इस सौदे की भी ज़रूरत है इसलिए और चीज़ों की भाँति इनके दाम भी चढ़ गये हैं।'

व्यवसाय के मामले में मोशिये लातूर को बड़ी दिलचस्पी थी—चाहे वह व्यवसाय जिस किसी चीज़ का ही क्यों न हो, व्यवसाय होना चाहिए। ग्रीक दलाल से उनकी बड़ी देर तक इस सम्बन्ध में बातें चलती रहीं। मैं उस ओर से अन्यमनस्क था पर इतना अवश्य ही समझ गया कि वे लोग हिसाब लगा रहे हैं। मोशिये लातूर ने मुनाफ़े का प्रतिशत तक निकाल लिया था। अच्छा सौदा करने पर व्यवसायियों के चेहरे पर जैसी मुसकराहट आती है वह इस समय इनके चेहरे पर छिटकने लगी।

'अब ले चलो शुद्ध प्राच्यदेशीय के यहाँ'—उन्होंने हुक्म दिया।

'यह तो बड़ा मुश्किल है।'

'पर तुम्हारी बख़शीश भी तो उतनी ही भारी होगी।'

दलाल कुछ देर सोचता रहा। फिर उसने कहा—'काफ़े ओ ले (मिश्रित ख़ून वाली; शाब्दिक अर्थ—काफ़े और दूध)।

'अच्छा वही सही।' मोशिये ने हुँकारी भरी—'सब देखना चाहिए।'

उनके व्यवसाय की बातों में मैं अधिक दिलचस्पी नहीं रखता था इसलिए उनसे छुट्टी ले मैं होटल की ओर लौटा।

२

बाज़ार में बड़ी चहल-पहल थी। अरबी ढंग के चाय-ख़ाने हर दस क़दम पर मिला करते। लोग ज़्यादातर उसारों में बैठे चाय पीते दिखलाई देते। उनकी वेश-भूषा अरबी रहने पर भी उठने-बैठने के तौर-तरीक़ों में यूरोप की नक़ल दिखलाई देती। पर यूरोप से तुलना करने पर सबसे अधिक यह बात खटकती कि औरतों की संख्या मर्दों के अनुपात में बहुत ही कम है। शायद इसी कमी को दूर करने के लिए चायख़ानों में औरतों का ही ज़िक्र अधिक चला करता।

दलाल रास्ता चलने वालों को चायख़ाने में बुलाया करते; जब वे उधर कदम बढ़ाते नहीं दिखाई देते तो उन्हें भीतर के घरों का सौन्दर्य बखान कर बतलाया करते। इस बाज़ारू सौन्दर्य से मेरी तबियत इस प्रकार भिन्ना गई थी कि सब छोड़ कर कहीं निकल भागने के लिए छटपट करने लगा था।

'आप चायख़ाने में चल कर क्यों नहीं बैठते, वहाँ काफ़ी गुलज़ार है।' मुझे अकेला बैठा देख होटल के ग्रीक मालिक ने, मेरे पास आ, कहा।

'मुझे वह पसन्द नहीं, मैं किताबी आदमी हूँ।'

'तब चलिए आपको मैं अपना पुस्तकालय दिखाऊँ।'

पुस्तकालय का नाम सुन कर मुझे आश्चर्य हुआ; क्योंकि उस ग्रीक की सूरत पढ़े-लिखों जैसी नहीं दीखती थी। फिर भी मैं उसके साथ चला। एक सजे-सजाये कमरे में काठ की कई आलमारियाँ रखी थीं। उन्हें खोलने पर उनके भीतर से किताबों की जिल्दें नहीं बल्कि शराबों की बोतलें निकलीं।

'जितनी पुरानी से पुरानी किताबें आपको दुनिया में मिल सकती हैं हमारे यहाँ ठीक उतनी ही पुरानी शराब आप पायँगे। मानवीय सभ्यता का इतिहास तो इन शराबों के इतिहास में भरा है, मालूम नहीं लोग क्यों इन्हें छोड़ कर कागज़ के पीछे मरते हैं। कागज़ मरी हुई चीज़ है, शराब ज़िंदा है और हमेशा ज़िन्दा रहेगी।'

अपने दर्शन-शास्त्र की व्याख्या करते-करते उन्होंने एक बोतल खोल गिलास में शराब डाल मेरे आगे बढ़ाया। मैंने नाहीं कर दी। उन्हें आश्चर्य हुआ।

'फिर चलिए मैं आपको अपना हरम दिखाऊँ।' किताबों के मामले में ठगे जाने के कारण उनके 'हरम' में भी मेरी दिलचस्पी नहीं रह गई थी। जिरह कर पूछने पर पता चला कि जिसे यूरोप में 'बार' कहते हैं उसे ही इन्होंने 'हरम' नाम दे

रखा था। तबियत इन बातों से ऊब गई थी इसलिए मैं चुप-चाप अपने कमरे में जा लेट रहा।

आधी रात को मोशिये लातूर का ठहाका सुन मेरी नींद टूट गई। मैंने रोशनी जलाई। बिना दरवाज़ा खटखटाये ही वे मेरे कमरे में घुस आये और कहने लगे—

'कैसे बेवकूफ़ आदमी हो! क्या यह भी सोने का वक्त है? वह भी इस स्वर्ग में–'

मैं समझ गया। वे ग्रीक की लाइब्रेरी से लौटे थे। शायद वे और आगे तक गये होंगे क्योंकि उनके हाथ में औरतों के पहनने की एक कुर्ती थी। उसे ऊपर उठाते हुए उन्होंने कहा—

'यह है सुवेनीर (याददाश्त)। काफ़े ओ ले (काफ़े और दूध) के शरीर से इसे खींच लाया हूँ। क्या कहूँ तुमसे—बेकार ही सारा कैरो छानता रहा—असली बहिश्त तो इस होटल का हरम है। और कितनी सस्ती। मैंने आधा क्राउन दिया था, वह भी देखो इस कुर्ती के जेब में वापस मिला।'

उन्होंने क्राउन निकाल कर दिखाया और जाँचते हुए कहा—

'यह ठीक वही आधा क्राउन है जिससे मैंने उसे अपने साथ शराब पीने के लिए भाड़े पर लिया था। और बिल्कुल

ताज़ी। ये ग्रीक जानते हैं, जौहरी हैं, अपने यहाँ सिर्फ़ जवाहरात रखते हैं—इसी लिए तो दुनिया सबसे अधिक सभ्य इन्हें ही गिनती है।'

मैं आँखें मल कुर्ती को ध्यान से देखने लगा।

'लेकिन सुग्गे को इन ग्रीक लोगों ने अभी फ्रेंच नहीं सिखाया'—लातूर आगे कहते गये—'और दूसरी ख़राबी है कि ये सुग्गे सिर्फ़ देखने के लिए रखे जाते हैं—कोई छूता है तो वे चिल्लाती हैं। मुझे यह बहुत ही महँगा जँचा, सिर्फ़ देखने का आधा क्राउन! इसी लिए आते वक़्त मैं ज़बर्दस्ती यह कुर्ती खींचता आया।'

कुर्ती मैंने अपने हाथ में ले ली।

लातूर का हल्ला सुन पाउली शिकायत करने बाहर निकली। लातूर उसे भी अपनी विजय-गाथा सुनाना चाहते थे। पर उसने उनका कान पकड़ उन्हें उनके कमरे में ढकेल बाहर से दरवाज़ा बन्द कर दिया।

४

मोशिये लातूर के शरीर का गठन और उनका चेहरा स्वाभाविक ही मज़ाकियों जैसा दीखता था। उसे थोड़ा सजा देने पर वे कहीं अधिक मज़ेदार शक्ल के बन सकते थे इसमें किसी को भी सन्देह नहीं था। पाउली इस पहलू पर बहुत

अर्से से विचार कर रही थीं। होटल के ग्रीक मालिक की राय मिल जाने पर बात पक्की हो गई।

एक दिन ग्रीक पुस्तकालय से मोशिये के लौटने पर किसी ने छेड़ दिया——

'जैसी मोशिये की हैसियत है उसके हिसाब से मिस्र घूमना हुआ नहीं। अभी न तो मजलिस जमी, न मुशायरा हुआ, न हुज़ूर ऊँट पर चढ़े और न जनाब के संग बेगम और दासियाँ काफ़ी तादाद में ख़ुश करने के लिए रहीं; फिर लुत्फ़ ही क्या रहा!'

'आपको तो लातूर पाशा बनना चाहिए।' इकट्ठी हुई सब औरतों की राय हुई। मोशिये लातूर औरतों की बात टाल नहीं सकते थे। उन्होंने अरबी चोग़ा धारण किया।

नये लिबास में उनकी ख़ूबसूरती हद दर्जे तक बढ़ गई। सूट में पेट कसा रहता था पर ढीले चोग़े के भीतर वह ढीला हो फूल आया और शरीर का सब से प्रधान अंग बन गया। वह ठीक नगाड़े सा दीखता और टाँग-हाथ उसके बजाने के लिए लकड़ियों से दिखलाई देते। जब वे क़ालीन पर बैठते तो ठीक छोटे-मोटे पिरामिड से मालूम होते।

जिस समय ये ऊँट पर चढ़े, इनकी शोभा और भी अधिक बढ़ गई। सिनेमा वाले तक इनकी तसवीर लेने के लिए

जुट गये। साथ ही शायरों की भी भरमार होने लगी। लड़के जो हमसे परिचित हो गये थे ताली पीटते हुए सड़क के एक किनारे खड़े हो जाते--

ऊँट पर चढ़े।
नगाड़ा बाँधे।
राइफ़ल लिये हाथ--

ये अपनी कविता पूरी करने को ही होते कि सामने की क़तार में खड़े लड़के जोड़ दिया करते—

लातूर पाशा।
अबीसीनिया युद्ध को चले।
लिये तेरह बेगम तीस बाँदी साथ।

उस दिन से दरअसल ही मोशिये लातूर 'लातूर पाशा' बन गये।

अगले दिन जब मजलिस बैठी और लातूर पाशा नैचा गुड़गुड़ाते हुए बीच में बैठाये गये तो एक मुसाहब ने उनकी तारीफ़ में यहाँ तक कह दिया—

'ख़ुदा परवर ने दुनिया क़ायम करते वक्त सबसे पहले लातूर पाशा बनाया और इसके बाद और सृष्टि की।'

मोशिये लातूर चाहे और बातों पर न विश्वास करते हों पर इतना उन्हें अवश्य महसूस होने लगा था कि मिस्र में उनका

ओहदा बहुत बढ़ गया था। वह बढ़ना भी पूर्वी ढंग से था जिसे उनके दिमाग़ का एक कोना 'रोमांचक' मानने के लिए मजबूर होता था।

५

'रोमांच' को सच्चे व्यापार में परिणत कर उससे रुपया कमाने की कला में लातूर पाशा दक्ष थे। मिस्र भ्रमण करते-करते ही इन्होंने एक ग्रीक और एक इटालियन के साझे में बहुत बड़ी कंपनी स्थापित कर ली। इटालियन फ़ौज का उसके उपनिवेशों में दिल बहलाना इस कंपनी का लिखित उद्देश्य था। इस व्यापार के प्रोत्साहन में इटालियन सरकार तक की बहुत बड़ी मदद मिली थी।

पूर्वी देशों में यूरोपीय सभ्यता के प्रचार की उद्देश्य-पूर्ति में मोशिये लातूर इस नये व्यापार की गिनती किया करते। उन्हें इसका गर्व था और अभिमान से वे कहा करते—

'यही तो सारे युद्ध की कुंजी है। हमारे हाथ में साधारण सैनिक से लेकर बड़े-बड़े जेनरल तक रहा करेंगे। मैं जैसा चाहूँगा उन्हें घुमा सकूँगा। असली लड़ाई तो हमारे काफ़ले पर निर्भर करेगी। तोप-बंदूकों की लड़ाई तो बिल्कुल दिखावटी और नक़ली होगी।'

उनकी बातों में संदेह करने का मुझे कोई कारण न दिखाई देता पर फिर भी मैं उन्हें उत्तर देता—

'ख़ैर, मुझे तो इस बात के वास्तव में ही आ घटने पर विश्वास होगा।'

मुझे इस समय चिन्ता उनकी थी जिन्हें सैनिकों और अफ़सरों की मौज का साधन बनाने के लिए ले जाया जा रहा था। ऐसे लोगों का एक काफ़ला लातूर पाशा ने कैरो में ही तैयार कर लिया था।

६

इनके काफ़ले में औरतों की संख्या चालिस से अधिक थी। इनमें लगभग प्रत्येक भिन्न-भिन्न देश और जातियों की थीं। पूर्वी यूरोप और उत्तरी अफ्रिका का शायद ही वैसा कोई देश बचा होगा जहाँ की एक-दो सुन्दरियाँ इस टोली में न हों। कितनों में ग्रीक, आरमेनियन, अरब, यहूदी भिन्न-भिन्न जातियों के ख़ून का मिश्रण था। इसका गर्व करते हुए मोशिये लातूर कहा करते—

'हमारी टोली पूरी अन्तर्राष्ट्रीय होने का दावा कर सकती है। हमारे यहाँ वास्तव में ही सुन्दरता की क़िस्मों की कमी नहीं।'

इन्होंने स्वयं उनके सौन्दर्य का जो पैमाना तैयार कर रखा था उसी के मुताबिक़ उनकी तनख़्वाह भी बाँध दी थी। जिस दिन वे उन्हें भर्ती करते उस दिन सबसे पहले पचास-पचास इटालियन लिरे का एक-एक नोट उन्हें थम्हा दिया करते।

मेरी धारणा थी कि वे औरतें इटालियन उपनिवेश में उस प्रकार सौदे की वस्तु बन कर जाने में एतराज़ करेंगी, पर यह धारणा ग़लत निकली। इसकी चर्चा छेड़ने पर एक ने कहा—

'और मिस्र ही हमारे लिए कौन सा स्वर्ग है ?'

'हमारा तो पेशा ही यही है—इसमें और कोई प्रश्न हो ही क्या सकता है ?' यही भाव उनके चेहरों से टपका करता। बाहर से इन्होंने नाटकीय टोली का आडम्बर रखा था और उसी के नियमानुसार अपने भीतरी भावों का वे पता तक नहीं चलने देतीं।

७

लातूर पाशा के काफ़ले के साथ एक दिन नील नदी के स्टीमर पर मैं भी सवार हुआ। यहाँ के चारों तरफ़ के दृश्य में विशेषता थी। प्रकृति ने अपना दाढ़ी मुड़ाये रहना ही अधिक पसन्द किया था इसी लिए जहाँ तक दृष्टि जाती सब चिकना और अधिकतर सफ़ेद दिखाई देता। नदी के किनारों पर ऊँटों के कारवान चलते हुए दिखाई देते। ये स्टीमर देख कर रुक जाते और उसे गुज़रता हुआ बड़े शौक़ से देखा करते। कितने अरब अपनी दाढ़ी ज़मीन तक छुआते हुए इसे सलाम किया करते। शायद उनके लिए यह बिल्कुल नई चीज़ थी।

यहाँ के लोगों की ही भाँति प्रकृति ने भी अपना वस्त्र जल्दी-जल्दी बदलना नहीं सीखा था। वह मीलों आगे निकल जाने पर भी एक सी ही दिखाई देती। पाउली की तबियत उबाने वाली बात सबसे अधिक यही थी। इस तरह के सूखे 'ऐडवेंचर' में उन्हें कोई लुत्फ़ नहीं आ सकता था।

अब उन्हें यह बात भी खटकती कि सब लोगों के आकर्षण का केन्द्र वे ही नहीं हैं। आगन्तुकों तक का ध्यान सबसे पहले उनके बढ़िया ट्वायलेट किये चेहरे पर न रुक अरबी बंदियों के चेहरे पर अधिक देर रुका रहता—इसे वे अपना अपमान मानतीं। इस नये वायुमंडल को बदलने में जब वे समर्थ नहीं हुईं तो इसे तितर-बितर कर देने की उन्होंने ठान ली।

लातूर पाशा भी एक तरह की ही पोशाक में अधिक दिन रहना नहीं चाहते थे। इनका काम व्यापार के सिलसिले के ढंग पर हुआ करता था। इटालियन एरित्रिया से एक ज़रूरी तार के मिलते ही इन्होंने आगे का सारा कार्यक्रम बहुत जल्दी समाप्त कर लेने का हुक्म दिया। एक दिन सबेरे हम लोग हवाई जहाज़ों पर सवार हुए और संध्या होते-होते एरित्रिया की सरहद पर पहुँचा दिये गये। हमारा हवाई बेड़ा कसाला नामक स्थान में ज़मीन पर उतरा।

८

कसाला से मुझे अलग रास्ता लेना पड़ा। उसी के आगे इटालियन उपनिवेश—एरित्रिया की सीमा—आरंभ हो जाती थी। मेरे और मेरे साथ वालों के बहुत प्रयत्न करने पर भी इटालियन अधिकारियों ने अपने उपनिवेश में दाख़िल होने की मुझे इजाज़त नहीं दी।

मोशिये लातूर और उनके काफ़ले को असमारा ले जाने के लिए इटालियन कंपनी के कई हवाई जहाज़ आये थे। वे लोग ख़ुशी-ख़ुशी बिदा हुए। सामाजिक व्यवहार में कमी न रखने के ख़याल से मेरी टीका-टिप्पणी से नाराज़ रहने पर भी मोशिये लातूर ने हाथ मिला कर मुझसे बिदा ली।

पाउली मिस्र के संबंध की अपनी राय प्रकट करने से अपने को नहीं रोक पाईं। पिछले दिनों 'रेगिस्तान' में रहने के कारण वे अपना पैरिसियन नाज़-नख़रा बहुत कुछ भूल गई थीं। उसकी मुझे याद दिलाते हुए उन्होंने कहा—

'मिस्र को जो लोग 'प्रेमियों का देश' कहा करते हैं उनसे बढ़ कर झूठा शायद ही कोई मिलेगा। यह तो ऊँट और बालू का देश है, यह 'ऐडवेंचर' की जगह नहीं। अब एरित्रिया और नेगुस के घर आज़माऊँगी!'

इन्होंने और भी बहुत सी बातें कहीं जो मैं समझ नहीं सका। मेरे सामने एक दूसरा ही चक्र चल रहा था। चलते चलते उन्होंने अपना रूमाल हिला कर मुझे विदा दी।

मिस्र से रवाना होने की उन सबको ख़ुशी थी। पर किसी की ओर दृष्टि फेरने की मेरी इच्छा नहीं हुई।

मेरी आँखों के सामने इस समय वास्तव में ही बालू और ऊँट नाच रहे थे।

तृतीय खण्ड

कारवान

१

प्रकृति को भी ग़ुस्सा आता है। वह भी रूठा करती है। ऐसे मौक़ों पर एकांत में जा बैठने के लिए उसने ख़ास-ख़ास प्रदेश चुन रखे हैं। वहाँ पहुँच कर वह बहुधा अपने सारे गहने उतार देती है। किसी प्रकार का भी आडम्बर वा शृंगार उसे वहाँ पसन्द नहीं आता। उसका दिल उस प्रदेश-विशेष में ऐसा जलता रहता है कि अपने प्रिय से प्रिय जीवों तक को वह वहाँ बेरहमी से भून डालती है।

उस एकान्तवास में विकृत शरीर देखना ही उसे अधिक पसन्द आता है; शायद इसी लिए सब जानवरों में सिर्फ़ ऊँट को ही अपने पास पहुँचने की सबसे अधिक सुविधा दिया करती है। जिन्हें बाध्य होकर उन प्रदेशों में जाना पड़ता है वे ऊँट के जत्थों से ही कारवान तैयार करते हैं।

फा० ८

मुझे भी यही रास्ता अपनाना पड़ा। कारवान से ही अबीसीनिया का सीधा रास्ता था। इस तरह की यात्रा में ख़तरे बहुत अधिक थे। प्रकृति के कोप का शिकार बनते रहने के कारण दिक्क़तें ज़्यादा थीं। पर मैं आदमियों की दुनिया से ऐसा ऊब गया था कि शरण लेने के लिए प्रकृति के कोपस्थान में जाना ही तय किया।

इस यात्रा की तैयारियाँ कठिन नहीं थीं। एक ग्रीक दलाल ख्रिस्टोपोलस ने मेरा परिचय निम्न जगत से करा दिया था। इन दिनों बहुत से इटालियन काली सेना के सैनिक ग़ैर-क़ानूनी तरीक़े से सूडान की सीमा में आ कर अपना हथियार बहुत सस्ता बेच जाया करते थे। उनकी इस कृपा के कारण बड़ी आसानी से मैंने दो माउजर बन्दूक़ और एक रिवाल्वर ख़रीद लिया। यात्रा की और सामग्री जुटाना और भी आसान था।

हथियार मिलते ही मैं गेदारेफ़ के लिए रवाना हुआ। वहाँ तक रेल जाती थी और वहाँ से ही अबीसीनिया जाने वाला कारवान का आसान रास्ता था।

२

चाँदनी रात थी। खिड़की से दूध की तरह सफ़ेद रोशनी हमारे डब्बे में आ रही थी। मुसाफ़िर बहुत ही कम थे। बेंचों पर हम लोगों ने बिस्तरे लगा लिये।

मैंने सोने की कोशिश की पर मुझे नींद नहीं आई। नई यात्रा से संबंध रखती बातें बार-बार मन में आतीं और मैं बार-बार करवटें बदलता।

खिड़की से बाहर मैदान का दृश्य बहुत दूर तक दिखाई देता। कहीं-कहीं खजूरों के कुंज दिखाई देते जिनके आसपास दो-चार घर बने रहते। इस समय ये सब चीज़ें चाँदनी से धुल रही थीं और मालूम पड़ता मानो सब के सब स्वप्न देख रहे हैं। ख़ूब दूर पर सूखे पहाड़ों की इस समय काली दिखाई देने वाली श्रृंखलाएँ मिलतीं जो ऊँची-नीची होती चली गई थीं। ये ही पहाड़ रेगिस्तान और आबाद इलाक़े की सीमा निर्धारित कर रहे थे।

कभी-कभी गाड़ी अचानक खड़ी हो जाती। रेगिस्तान में इसके रुकने पर मुझे आश्चर्य होता—पर ध्यान से देखने पर स्टेशन का सिगनल दिखाई देता। चढ़ने उतरने वाले मुसाफ़िर एक भी नहीं मिलते। प्लैटफ़ार्म पर रेल की आवाज़ सुन कर पास के गाँवों से आये हुए कुत्ते कभी-कभी भूँका करते और उन्हें दुतकारते हुए एक हाथ में लालटेन और दूसरे में बंदूक़ लिये अरब स्टेशन-मास्टर कभी-कभी हमारे डब्बे के सामने से हो कर ग़ुज़रा करते।

इस सारे दृश्य में उदासी थी। मुझे मालूम पड़ता—

सिर्फ़ निर्वासित किये गये लोग ही यहाँ पहले-पहल पहुँचे होंगे, वा वैसे ही लोग अभी भी यहाँ आते होंगे। ख्रिस्टोपोलस बार-बार जम्हाई लिया करता।

किसी-किसी स्टेशन पर जब बहुत देर तक गाड़ी रुकी रहती तो तबियत बहुत ऊबने लगती। मैं प्लैटफ़ार्म पर उतर आता। पाँव बड़े हल्के पड़ते और किसी ग़लीचे पर चहल-क़दमी करते जैसा महसूस होता। तुरंत ही बालू से भर आने से जूते भारी हो आते और उन्हें झाड़ने के लिए अपने डब्बे में आ जाना पड़ता।

सबेरा होते-होते हम लोग गेदारेफ़ आ पहुँचे।

२

कसाला से आते समय जैसे छोटे-छोटे रेलवे स्टेशन मिले थे, गेदारेफ़ की भी शक्ल उसी प्रकार की थी। पर यह उन सबसे बड़ा था। अबीसीनिया जाने वाले कारवान के रास्ते पर यह पड़ता था। इसलिए इसका महत्त्व अधिक था। साथ ही यह सूडान की रेल-लाइन पर था। पश्चिमी अबीसीनिया के लिए भी यही सबसे निकट का रेलवे-स्टेशन था। इन कारणों से यह स्थान व्यापार की दृष्टि से काफ़ी महत्त्व रखता था।

यहाँ अरब सौदागरों की कई बड़ी-बड़ी दूकानें थीं जो अबीसीनिया जाने वाले कारवानों को माल दिया करते और

उनके वहाँ से लौटने पर उनका माल खरीद लिया करते। हाल में आ कर ग्रीक लोगों ने भी दो दूकानें यहाँ पर खोल रखी थीं।

कुछ वर्ष पहले तक इस स्थान से होकर अबीसीनिया से लाये गये दासों का भी व्यापार होता था। इस व्यवसाय की बड़ी तरक्की हुई थी और बहुत से सूडानी, ग्रीक, अरब और दो चार इटालियन तक इससे मालामाल हो गये थे। अबीसीनिया से ऊँटों पर बाँध कर लाये गये ग़ुलाम यहाँ के बाज़ार में खुले-आम बेच दिये जाते और फिर उनके ख़रीदार उन्हें एरित्रिया, अरेबिया वा लालसागर के अन्य किनारों पर ले जाकर और भी अधिक दाम में बेच आया करते। अबीसीनिया के राजा की सख़्ती से तथा सूडान के अँगरेज़ों के कब्ज़े में आ जाने पर यह तिजारत छिप कर चलने लगी थी; पर इन दिनों भी थोड़ी-बहुत इस प्रकार की तिजारत चलती थी। इसमें कोई संदेह नहीं था। इसके साक्षी ख्रिस्टोपोलस और उनके देश के ग्रीक सौदागर थे। वे इस समय तक इस व्यापार में कभी-कभी अधिक मुनाफ़े की उम्मीद में हिस्सा बँटाया करते थे। जब से इटली ने युद्ध की तैयारी शुरू की थी, इन्हें भी अपने दासों की तिजारत चमक उठने की उम्मीद होने लगी थी।

मेरा कारवान सजाने का भार इसी तरह के एक ग्रीक दूकानदार ने लिया। इनके हिसाब से हमें आदिस अबेबा पहुँचने

में एक महीना लगता पर रफ़्तार तेज़ करने पर तीन सप्ताह में भी हम पहुँच जा सकते थे। साथ में सामान एक महीने भर का ले लेना ही अच्छा था। रास्ते में तेज़ से तेज़ धूप, खूब वर्षा और सर्दी का भी सामना करना था इसलिए सब तरह के कपड़े साथ ले लेने थे। कम से कम दस ऊँट और दो टट्टुओं की मुझे आवश्यकता थी। ग्रीक दूकानदार के कथनानुसार इन सब चीज़ों के जुटाने में तरद्दुद करने की आवश्यकता नहीं थी।

ख़ास चिन्ता थी आदमियों की। सामान लादने की कला जानने वाले--नगादी, शरीररक्षक का काम करने वाले--जबनिया, तम्बू लगाने-खाना पकाने वाले नौकर और कारवान के नेता--खबराल सबकी मुझे ज़रूरत थी। इन सब के सिवा ख़ूब सच्चे और विश्वासी पथ-प्रदर्शक के बिना हमारा काम नहीं चल सकता था।

संयोग से हमारी चाँदी की चमक से ग्रीक दूकानदार की तबियत बहुत ख़ुश हो गई थी। यात्रा का सब सामान मैंने, उनके दाम अधिक माँगने पर भी, उनसे ही ख़रीदना तय किया था। इससे ख़ुश होकर उन्होंने मुझे अपना ख़ूब विश्वासी नौकर – ख़लीफ़ा साथ ले जाने के लिए दिया। उनके दो अबीसीनियन चौकीदार भी मेरे साथ जाने के लिए तैयार हो गये जिन्हें आदिस अबेबा तक तो नहीं फिर भी बहुत दूर तक

का रास्ता मालूम था। ये ही हमारे जबनिया—शरीररक्षक—बने और इन्होंने रास्ता दिखाने के लिए पथ-प्रदर्शक का काम भी लिया। ग्रीक दूकानदार के कथनानुसार मैं निर्भय होकर अपनी बन्दूक़ उनके हवाले कर दे सकता था।

बंदूक़ पाकर अबीसीनियन कितने ख़ुश होते हैं यह मैंने पहले-पहल अपने जबनियों के ही उदाहरण में देखा। बंदूक़ ढोकर ले चलने के काम से बढ़ कर उनके लिए इज़्ज़त की और कोई दूसरी बात नहीं हो सकती थी। अब वे मेरे साथ पानी और आग सब जगह कूदने के लिए दिल से तैयार थे।

विश्वासी नौकर और पहरेदार के मिल जाने पर यात्रा की आधी तैयारी हो गई। ये ही लोग बाक़ी सामान जुटाने में मन लगा कर लग गये और मुझे विश्वास दिलाया कि दो दिन के भीतर ही मैं रवाना हो जा सकूँगा।

मैंने स्विस प्रेस को इसकी ख़बर दे दी और उन्हें इस बीच आदिस अबेबा के एक बैंक में मेरे नाम रुपया भेजने के मक़सद का एक केबल भी कर दिया।

मेरे लिए यह कारवान की पहली यात्रा थी। हमें रास्ते में सूडान की ही सीमा में एक छोटा सा रेगिस्तान भी पार करना था—यह भी मुझे नया अनुभव होने जा रहा था।

'नया जीवन आरंभ होने जा रहा है'—मन में बार-बार

आया करता। अपनी कल्पना में बहुत दूर पर आदिस अबेबा भी देखने लगा था। यह गेदारेफ़ से पूरब और दक्षिण के कोन पर था। मेरी जहाँ तक दृष्टि पहुँच सकी, मैं उस ओर देखने लगा।

सामने सिर्फ़ बालू का मैदान दिखाई दिया।

४

बीच रेगिस्तान से चाँद निकल रहा था। उसमें ठंढक थी। हवा में भी शीतलता थी। प्रकृति ने अपना रुख़ बदल लिया था। निर्दयतापूर्वक जिसे उसने बालू तपा कर भूना था इस समय उन्हीं के अंगों पर वह मलहम लगाने चली थी। दोपहर का ग़ुस्से से उसका लाल हुआ चेहरा देख कर किसी ने कल्पना भी नहीं की थी कि चंद घंटों के ही बाद वह इतनी कोमल, चिकनी, शीतल, मधुर बन जायगी। रेगिस्तान के यात्रियों के लिए शायद यह संध्या स्वर्ग के आनन्द का सौग़ात लाई थी।

पाँवों तले की ज़मीन ठंढी लग रही थी। गेदारेफ़ के झोपड़ों में भाग कर शरण लेने की इस समय ज़रूरत नहीं थी। जहाँ कहीं भी क्यों न बैठा जाये ऊपर चँदोवा तना हुआ मिलता। स्टेशन का प्लैटफ़ार्म जहाँ ख़तम होता था उसी जगह पानी की एक टंकी बनी थी। आस-पास में कोई नल नहीं था—सिर्फ़ इंजिन के पानी लेने का एक मोटा सा बम्बा

सर झुकाये खड़ा था। इसके जिस हिस्से से पानी निकलता वह ठीक हाथी के सूँड़ सा दीख रहा था।

इसी के आसपास कई ऊँट खड़े थे। कारवानों के कई क़ाफ़िले अभी-अभी आकर यहाँ उतरे थे। ऊँटों के पीठ पर के सामान उतार लिये गये थे। तम्बू लगाये जा रहे थे। खूँटों के गाड़ने का सिलसिला खजूर के दरख़्तों के नीचे बहुत दूर तक फैलता चला गया था। आदमियों की आवाज़ के पहले खूँटों के ठोके जाने की 'ठक-ठक-' आवाज़ सुनाई देती और यह उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही थी। आवाज़ की प्रतिध्वनि नहीं सुनाई पड़ती थी। शायद चारों तरफ़ विस्तृत मैदान रहने के कारण वह पैदा ही नहीं हो पाती थी।

अन्यमनस्क हो कारवानों की ओर सरसरी दृष्टि फेरता मैं आगे निकलता जा रहा था। रात चाँदनी थी इसलिए लोगों के चेहरे स्पष्ट दीख रहे थे। इनकी बोली गले में किसी चीज़ के अटक जाने पर उसके निकालने के प्रयत्न में की जाने वाली आवाज़ जैसी दीखती।

शायद ये रेगिस्तान पार कर आ रहे थे। असबाब के ऊपर जमी हुई बालू की तह मोटी थी और लोगों के चेहरे ख़ुश्क थे। ऊँटों की भी हड्डियाँ निकल आई थीं। मैं मन ही मन सोच रहा था —'इनके जीवन में सरसता कहाँ?'

'बहिश्त ! बहिश्त !' मेरे कानों में कई बार आवाज़ आई। मैं रुक गया। कुछ ऊँची दीखने वाली असबाब की ढेरी पर मेरी दृष्टि गई। पहले यह नुकीली दिखाई दी पर धीरे से दबे पाँवों थोड़ा निकट बढ़ जाने पर उसके सजीव मूर्ति होने में कोई संदेह नहीं रहा। सुडौल खुली हुई बाँह और कलाकारों की चित्रकारी जैसे हाथ पर दृष्टि दौड़ने लगी। सारे शरीर में घुमाव की रेखाएँ अत्यन्त ही नरम और अपनी ओर आकर्षित करने वाली थीं। चेहरे पर दृष्टि रुकी पर वह पतले मस्लिन से ढका था। वह पानी के मोटे बंबे की ओर एकटक निहार रही थी। मैं अपने स्थान से उसके प्रोफ़ील का एक भाग मात्र देख पाता था पर उससे ही मन ही मन उसके सारे मुखड़े का ख़ाका खींच ले सकता था। एक बार उसकी आँखों में निहारने की भी इच्छा हुई। उन्हें छेद कर उसके हृदय नहीं, आत्मा तक पहुँच जाना चाहता था।

पर याद आया इसे लोग बेहयाई में शुमार करेंगे। अपनी हया जितनी बच सकती थी उसका ख़याल कर थोड़ा पैंतरा बदल इस प्रकार खड़ा हुआ जिसमें वह मूर्ति और पानी का बंबा एक दृष्टि में ही दिखाई दे और किसी के टोक देने पर यह साबित करना कठिन न हो जाये कि मैं टपकते हुए पानी की बूँदों की ओर उतने ध्यान से निहार रहा था।

जिसकी आशंका की थी वह भी शीघ्र ही आ घटा। एक सफ़ेद बाल और ख़िज़ाब से दाढ़ी काली किये लम्बे क़द के बूढ़े अरब ने पूछ ही तो दिया—

'क्या देख रहे हो ?'

मैं चौंक पड़ा। टूटी-फूटी अरबी समझ ले सकता था पर किसी बात को छिपा कर और कुछ कह सकने लायक़ लियाक़त नहीं थी। मैंने उसे इशारे से टपकते हुए पानी का दृश्य दिखलाया। वह मेरा विश्वास कर गया और कहा—

'बहिश्त! असल में यह बहिश्त है। यहाँ पानी की कमी नहीं।' पर फिर भी यह शायद उसे पानी बरबाद करना दीख रहा था। इसलिए उसकी चर्चा बंद कर उसी साँस में उसने पूछा—'तुम भी सौदागर हो ?'

'हाँ।' टालने के लिए मैंने सर हिला दिया। वह मानने वाला नहीं था। कहाँ से आये, किस चीज़ का व्यापार करते हो, अभी कहाँ ठहरे हो, आगे कहाँ जाओगे आदि बातें पूरी जिरह कर पूछ गया। जब इससे भी उसे तसल्ली नहीं हुई तब उसने पूछा—

'मुसलमान ?'

'हिन्दी।' मैंने उत्तर दिया। उसने इससे नाक-भँव सिकोड़ी—और अपना तम्बू गाड़ा जाना देखने लगा।

सजीव मूर्ति ने हम लोगों की बातचीत की आहट पा अपना चादरों का घूँघट नीचा कर लिया था। उसकी ओर इशारा करते हुए अरब ने कहा—

'दुनिया में ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं जो इस लड़की का पूरा मुँह देख सकने का दावा कर सके। मैं किसी धनाढ्य और नहीं तो किसी अच्छे मुसलमान को यह लड़की देना चाहता हूँ।'

मेरी ओर से कोई इशारा न पा वह स्वयं ही आगे कहता गया—

'तुम मुसलमान न हुए तो क्या हुआ! नौजवान तो हो ही। तुमसे सौदा करें। यह लड़की लोगे? यह आधी तुर्की और आधी हब्शी है।'

'मैं लेकर क्या करूँगा?'

'यह तुम्हारे हरम की रौनक़ बढ़ायेगी।'

'हमारे पास तो हरम है ही नहीं।'

'तोबा! तोबा!' उसने थूकते हुए कहा—'फिर भी तुम अपने को सौदागर कहते हो, वह भी कैरो का! ख़ैर, अपनी बीबी के पास रख देना।'

'हमें बीबी ही नहीं।'

'अजी, फिर से तोबा! तुम कैसे नाणक आदमी हो कि अब तक तुमने बीवी नहीं की!'

'नापाक क्यों ?'

'इसलिए कि तुम पाक ख़ुदा का सब से पहला और बड़ा क़ानून तोड़ते हो ! इस उम्र में भी तुमने निकाह नहीं किया यह क्या पाक ख़ुदा तआला के लिए ग़ुस्सा करने की छोटी सी बात हुई ? अजी, कहीं तुम इटालियन तो नहीं ? उनके देश में ही ऐसी निकाह न कर बच्चा पैदा करते जाने की रिवाज का पाया जाना मुमकिन है ।'

इन दिनों इटालियनों के प्रति अरबों को स्वाभाविक चिढ़ थी यह मैं जानता था, इसलिए उस अरब को अपने इटालियन न होने का पूरा एतबार दिलाया ।

'वही तो कहा', उसने विश्वास जमने पर कहा—'तुम्हारा चेहरा तो मुसलमानी है पर मज़हब किसे कहते हैं अब तक तुमने सीखा ही नहीं । तुम्हारे जैसा अजीब आदमी मैंने पहले और कभी नहीं देखा था ।'

वह मुझे ग्रीक दूकानदार के घर तक पहुँचाने आया । यहाँ पर दूकान मालिक से उसकी बातें होने लगीं तब मेरा पीछा छूटा ।

मुझे इस बात से बड़ी चिढ़ हो रही थी कि सूडान में भी सिर्फ़ पतित व्यापार करने वालों से ही परिचय हो रहा था । मैं यह भी समझता था कि वास्तविक सूडान इनसे कहीं अधिक

दूर और शरीफ़ है। पर उसकी झाँकी लगा पाने का मुझे अपने सामने कोई रास्ता नहीं दिखाई दिया।

५

सबेरे नींद टूटने पर सबसे पहले उसी के चेहरे पर दृष्टि पड़ी। पहली झलक का मेरा अनुमान उत्तरोत्तर दृढ़ ही होता गया। रंग साँवला होने पर भी उसका काट किसी भी देश की सुन्दर से सुन्दर रमणी से प्रतिद्वंद्विता कर सकता था। फिर भी इसकी ख़ास विशेषता यह थी कि शांत अथवा यों कहा जाय बिल्कुल मूक दिखाई पड़ने पर भी यह बड़ा ही सजीव जँचता था।

'यह भी क्या ख़रीद-बिक्री की चीज़ हो सकती है?' अपने आप यह प्रश्न मेरे भीतर उठने लगा। इसी समय ग्रीक दूकानदार की आवाज़ सुनाई पड़ी—

'नहीं जमाल! तुम इसका बहुत ज़्यादा दाम माँग रहे हो।'

'यह कुछ भी ज़्यादा नहीं—' जिस बूढ़े से पिछली संध्या को मेरी बात हुई थी वह कहने लगा—'मैं आपसे कभी ज़्यादा दाम थोड़े ही कह सकता हूँ! कॉफ़ी मैंने आपको कितनी सस्ती दी—खाल उतनी बड़ी-बड़ी कितने सस्ते दाम में बेच दी, फिर इस एक चीज़ का दाम मैं ज़्यादा कहूँगा? यह हो नहीं सकता।'

'अच्छा जितना कहा है उस पर तुम्हें बख़्शीश में एक बोतल और दे दूँगा।' ग्रीक ने बूढ़े से कहा, फिर दूसरी ओर ख्रिस्टोगोलस से पूछा--

'यह बिक तो जायगी न ?'

'हाँ, हाँ, अभी तो इसका बाज़ार बहुत गरम है, जितनी भी तुम भेज सको--इटालियन ख़रीद लेंगे।'

मैं उठ बैठा। मेरी नज़र अब भी उसी पर थी। वह पत्थर की मूर्ति की तरह बैठी थी। मैं बिना किसी हिचक के ग़ौर से उसकी ओर देखता रहा।

'यह सौन्दर्य तो पिशाचों के लिए नहीं—' मैंने मन ही मन निश्चय किया—'शायद इसे पता नहीं कि यह कहाँ भेजी जा रही है।'

अपने नौकर ख़लीफ़ा को बुला उससे पुछवाया—'तुम किस जहन्नुम को भेजी जा रही हो, तुम्हें कुछ पता भी है ?'

उसने बड़े ही सरल भाव से नकार सूचित करने के भाव में सर हिलाया। साथ ही यह व्यक्त कर देने से भी अपने को नहीं बचा सकी कि वह जहाँ भी जाय उसके लिए एक सा ही है।

ग्रीक दूकानदार अभी भी बूढ़े अरब के साथ मोल-मोलाई कर रहा था—

'अच्छा दो बोतल बख़्शीश दे दूँगा ! इससे ज़्यादा अब

कैसे बढ़ सकता हूँ—पहले ही तुमसे मैंने इसका दाम पचास रियाल (पचास रुपये के लगभग) कह दिया है। अब उससे ज़्यादा तुम क्या चाहते हो ?'

'आपको इसमें बहुत नफ़ा होगा', बूढ़ा कहने लगा—'मैं तो इसलिए सस्ती बेच दे रहा हूँ कि आपने मेरा और सब माल ख़रीद लिया है। यही क्यों बाक़ी रहे ? इंशाअल्लाह ! यह भी आप ले लें तो मैं फिर माल लाद कर कल ही यहाँ से फिर अबीसीनिया चला जाऊँ।'

ग्रीक कभी बूढ़े के कान में कुछ कहता, कभी शराब की बोतल उसे चुपके-चुपके दिखाता और सौदा पक्का हो गया क़रार करा लेने के लिए हाथ आगे बढ़ाता। बूढ़े का हाथ अब भी आगे नहीं बढ़ रहा था।

दोनों मोल-भाव करने में इतने तल्लीन हो रहे थे कि उनका ध्यान हमारी ओर नहीं खिंचता था। मैंने ख़लीफ़ा की मदद से उस लड़की के सामने सैनिकों का चित्र खींचा। उनका ख़ूँखारपन दिखाया। वह सिहर उठी। शायद उसकी आँखें भी छलछला आईं—पर यह था बलि के लिए बाँधे गये जन्तुओं के जैसा, जो भली भाँति जानते हैं कि उनके रोएँ खड़े होने का, उनके आँसुओं का कोई मूल्य नहीं हुआ करता। मैंने उसका इतिहास पूछा। वह मूक रही, शायद इसलिए कि दूसरों को

इससे क्या मतलब हो सकता है यह बात उसकी समझ में नहीं आ रही थी।

'यदि तू आज़ाद कर दी जाये तो कहाँ जायगी?' मैंने उससे पूछा।

'आदिस अबेबा।'

'क्यों? वहाँ क्या है?'

'मेरी माँ।' उसने पहले की ही तरह सरल भाव से सर नीचे किये धीमे स्वर में कहा।

'इसकी राय की क्या परवा करते हो, जहाँ मर्ज़ी हो ले जाओ, ख़ुशी ख़ुशी जायगी।' ख़लीफ़ा ने मुझे समझाते हुए कहा—'देखते नहीं, यह ख़रीदी हुई ग़ुलाम है। मालूम नहीं कितने लोगों के हाथ ख़रीदी-बेची जाकर आज तुम्हारे सामने आई है।'

ख़लीफ़ा के लिए वह निर्जीव थी फिर भी मैंने उसका नाम पुछवाया। इस बार प्रश्न बिना अपनी ज़बान में सुने उसने धीमे से कहा—

'सोफ़ी।'

मुझे यह अपने देश का नाम जँचा, शायद इसी लिए वह लड़की भी बहुत निकट की दीखने लगी। मैंने आदिस अबेबा तक उसे पहुँचा देना मन ही मन तय कर लिया।

६

मेरा निर्णय सुन कर ग्रीक और अरब दोनों को बड़ा आश्चर्य हुआ। वे कहने लगे—

'आप तो अबीसीनिया ही जा रहे हैं। वह तो इसका सब से बड़ा बाज़ार है। यहाँ से कहीं सस्ती आपको वहाँ मिलेंगी। फ़जूल वहाँ ले जाना है।'

वे मेरी दलील नहीं समझ सकते थे। मैंने और अधिक उनसे दलील न कर अरब से उसका दाम पूछा। साठ रियाल, दो ऊँट और पाँच बोतल शराब ऊपर से बख़शीश दिये जाने पर सोफ़ी को मेरे सुपुर्द करने के लिए वह तैयार हो गया। ये चीज़ें मैंने उसे उसी समय दे दीं। वह बहुत ख़ुश हुआ और कहने लगा—

'इंशा अल्लाह! आप भी अबीसीनिया जा रहे हैं। तब तो हमारा आपका अच्छा साथ रहेगा। माल की बँधाई आज ही ख़तम कर कल मैं आपके साथ चल दूँगा।'

'ये बड़े नामी खबराल (कारवान नायक) हैं। इनके साथ रहने से आपका बड़ा काम निकलेगा।' ग्रीक ने हमें विश्वास दिलाया।

'पर गोंडार बचाते हुए चलना पड़ेगा', बूढ़े ने कहा—

'वहाँ से ही मैं इसे ख़रीद लाया हूँ—अगर लोग फिर इसे वहाँ देखेंगे तो मैं पकड़ जाऊँगा।'

'अच्छा! हम गोंडार बचाते हुए चलेंगे।' मैंने उसे इतमीनान दिलाया।

अगले दिन हमारे रवाना होने का वक़्त आया। मैंने ग्रीक दूकानदार का बिल चुकता किया। उसने जितनी चीज़ें लिखी थीं उन्हें एक-एक कर मैंने देखा भी नहीं क्योंकि उसके कथनानुसार वे सब इस यात्रा के लिए आवश्यक थीं और मैं उन्हें किसी भी हालत में छोड़ नहीं सकता था। ऐसी ही चीज़ों में शराब की बोतलों से भरा हुआ एक पूरा बक्स भी था। इसमें भी मैंने विशेष आपत्ति नहीं की।

मैंने पारापारी बदलने के लिए दो टट्टू लिये थे। इस समय एक पर सोफ़ी को बैठने के लिए कहा। उस टट्टू की पीठ पर औरतों के सुभीते से बैठने लायक़ हब्शी ज़ीन तैयार किया गया।

हमारे ऊँट और आदमी इकट्ठे हुए। असबाब के बाँधने, उन्हें तरकीब से लादने, ऊँटों का बोझ निर्धारित करने, सफ़री गगरों में पानी भरने और इसी तरह की बहुत सी चीज़ें ठीक-ठाक करने में कई घंटे लगे। तीसरे पहर का समय हो आया। फिर भी हम लोग इसी दिन रवाना हो जायँगे यह

तय था। यह निश्चय हुआ था कि उस दिन दस मील का रास्ता तय कर पड़ाव डालेंगे और दूसरे दिन सुबह तीन बजे रात को ही उठ कर आगे बढ़ेंगे। फिर आगे रेगिस्तान के सफ़रों की रफ़्तार के हिसाब से हमारा नियम बन जायगा।

दरवेश

१

यात्रा सूर्यास्त के समय आरम्भ करने में हमें इस प्रदेश में आसानी पड़ती थी। हम धूप और गरमी से बचते और बिना थकावट महसूस किये ठंढे में रास्ता तय करते। सूडान की क्षणिक सन्ध्या देखने का हमें रोज़ ही मौक़ा मिलता। सूर्यास्त हुआ नहीं कि रात हो आती। चाँदनी रहने के कारण हमें सहूलियत थी। सामने क्षितिज तक दिखाई देता जहाँ बालू और आकाश एक ही रंग में मिले रहते। हम उनकी ही ओर आगे बढ़ते जाते।

चारों तरफ़ घोर सन्नाटा छाया रहता। ऊँट और टट्टुओं के नरम पाँव सफ़ेद रेत के ग़लीचे पर पड़ते और धीमी 'थप-थप' की आवाज़ निकलती। यह चारों तरफ़ की निःशब्दता में बहुत ही कम खलल पहुँचाया करती। कभी-कभी उस मजबूरन लादी गई शांति से पीछा छुड़ाने के लिए हमारे साथ के अरब गाया

करते। इनके गाने में मुझे दुःख और सबके प्रति अविश्वास भरा हुआ दिखाई देता। अब तक इतनी अरबी आ गई थी कि उनके गानों का भावार्थ ठीक-ठीक समझ ले सकता था। हमारे ख़लीफ़ा का एक बहुत ही प्रिय गाना था—

"हवा ने खजूरों के कुञ्ज से निकल कर कहा—
प्रेयसी तुम्हारी मिलने आई है!
जानता हूँ मैं—शैतान हो हवा तुम महा,
तुमने तो हमारे दर्द की हँसी उड़ाई है।"

ये गाने तथा बालू और क्षितिज तक का रास्ता हमें अपने जीवन को एक नये दृष्टिकोण से देखने के लिए बाध्य किया करते थे।

एक दिन इसी तरह का एक गाना चल रहा था और मैं अपने विचार में निमग्न था। उस समय एक-ब-एक थोड़ी दूर से आवाज़ सुनाई दी—

'लूट लो! लूट लो! ये आगे न बढ़ने पाएँ।

कुछ निश्चय कर सकने के पहले ही सोफ़ी और मेरे टट्टू की लगाम दो आदमियों ने पकड़ ली।

'तुम लोग क्या चाहते हो?' मैंने उनसे पूछा। उनकी ओर से कोई उत्तर नहीं मिला। वे अपना शोर-ग़ुल मचाने में मशग़ूल थे। ख़लीफ़ा ने धीरे से मेरे कान में कहा—

'दरवेश !'

यह नाम मैं पहले सुन चुका था पर ये कौन होते हैं याद नहीं आ रहा था। तुरंत ही बड़े साफ़े, लम्बे सफ़ेद चोगे और भयानक मूँछ-दाढ़ी वाले एक सिपाही की शक्ल के व्यक्ति ने आकर मुझसे पूछा—

'फ़िरंगी ?'

'नहीं तो !'

'फिर ?'

'हिन्दी।'

वह नहीं समझ सका।

'मुसलमान ?' उसने पूछा।

'हाँ—' ख़लीफ़ा ने उसे इतमीनान दिलाया।

फिर भी उन्होंने हमें आगे नहीं बढ़ने दिया। बड़ी देर तक जिरह करते रहे। उनकी बातचीत से यह पता चला कि अगर हम फ़िरंगी हुए तो वे हमें लूट लेंगे और यदि और कोई हुए तो—'मालेश'—(कोई हर्ज नहीं)—हम आगे जा सकते थे। पर इस बात का भी वे स्वयं निर्णय नहीं कर पाते थे कि हमारी बातों पर विश्वास करें वा न करें। अन्त में उन्होंने हमें अपने शेख़ के सामने हाज़िर करने का फ़ैसला किया।

२

'तुम तो अभी भी पुराने सुडानी तरीक़े से सफ़र करते हो—औरत हर वक्त तुम्हारे साथ रहती है; लेकिन तुम्हें मालूम होना चाहिए, हमारा देश अब औरतों के लिए नहीं रहा।' डोका के शेख़ ने मेरी ओर देख अपनी राय ज़ाहिर की।

ये इस समय अपने झोपड़े के बाहर बैठे थे। इनकी आँखें ख़ूँख़ार दीखती थीं। सर पर हरे रंग का मुरेठा बँधा था। दाढ़ी में मिहदी लगी थी। एक हाथ में बहुत पुराना—आधा दीमकों के द्वारा चूसा हुआ क़ुरान शरीफ़ था और दूसरे हाथ में तसबीह थी। उमर साठ के ऊपर रही होगी।

यों ही उनका चेहरा विशाल दीखता था पर कुछ बोलते समय तो वह और भी भव्य बन जाता था। साधारण आवाज़ भी गरजने जैसी निकलती थी। ऐसी आकृति और आवाज़ वाले जाल-फ़रेब नहीं जानते; भोले-भाले, सरल मन और सहज ही विश्वास कर लेने की प्रकृति वाले हुआ करते हैं यह भी तुरंत ही स्पष्ट हो जाता था।

अरबों के सहवास में ऐसे लोगों के साथ पेश आने का तरीक़ा मैंने सीख लिया था। ये लोग तमीज़ और तहज़ीब का बहुत ख़याल रखते हैं। जिसका जैसा ओहदा हो उससे ठीक उसी प्रकार की ज़बान और तरीक़े से बात किया जाना ये बहुत

पसन्द करते हैं। उन्हें 'सलाम वालेकुम' कहते समय मैंने तीन बार हाथ हिलाया था। यह उन्हें बहुत ही अच्छा जँचा और इसका असर भी उनके ऊपर बहुत गहरा पड़ा। चेहरे का रुख़ तुरंत ही बहुत कुछ बदला हुआ दीखने लगा।

मेरा पूरा परिचय सुन लेने के बाद उन्होंने अपना फ़ैसला देने के पहले मुझे कई समस्याएँ हल करने को दीं। उनमें एक थी--

'तुम आज़ाद लेकिन ग़रीब रह कर रेगिस्तान में मारे-मारे फिरोगे वा अमीर लेकिन ग़ुलाम रह कर महल में मौज करना पसन्द करोगे?'

मैंने पहला पसन्द किया। तुरंत ही उठ कर उन्होंने मुझसे हाथ मिलाया और कहा—'शाबाश!'

फिर दूसरा प्रश्न किया—

'फिरंगियों के अरब वा दूसरी जातियों के ग़ुलाम बनाने के काम में तुम मदद तो नहीं पहुँचाते? तुम्हारा चेहरा पढ़े-लिखों जैसा दीखता है इसलिए तुमसे यह सवाल करता हूँ।'

मैंने सिर्फ़ 'नहीं' कहा। उन्हें विश्वास हुआ और दूसरी बार उन्होंने 'शाबाशी' दी। इस बार उन्होंने मेरी पीठ ठोकी। यह घूँसा मारने से कम ज़ोर का नहीं था।

अब आख़िरी सवाल—

'इटली और अबीसीनिया की अगर लड़ाई छिड़ी तो तुम किसकी मदद में रहोगे ?'

'अबीसीनिया की—'

'वाह बहादुर ! शाबाश'—उन्होंने छाती से लगाया और हुक्म के स्वर में कहा—'अब हमारे इलाक़े भर में तुम पर कोई उँगली तक उठाने की गुस्ताख़ी करे तो मैं ज़िन्दा उसकी खाल खिंचवा लूँगा। तुम शौक़ से आगे जाओ।'

हमारे आगे बढ़ने के पहले उन्होंने फिर हमें रोका और कहा—

'अब तुम हमारे दोस्त हुए। आज हमारी ख़ातिरदारी में यहाँ ही रुक जाओ। मैं तुम्हें और भी कुछ तालीम दूँगा।'

३

शेख़ उसमान का चेहरा देखते ही मालूम पड़ जाता था कि वे तन्दुरुस्त, बड़े साहसी और युद्धप्रिय हैं। आमने-सामने की लड़ाई में अपनी वीरता साबित करने के सिवा गोरिला वारफ़ेयर की कला में भी वे दक्ष थे। लड़ाई में एक बार मोर्चा रोप देने पर फिर उनके पाँव उखड़ने वाले नहीं थे।

उनके आसपास बैठे कई आदमी भी उसी ढंग के दीखे। इन सब में तकलीफ़ें बर्दाश्त कर सकने की अद्भुत क्षमता थी।

अभी इस रेगिस्तान में इन लोगों का जीवन जितना सख़्त था, किसी युद्धक्षेत्र में शायद ही उससे अधिक की कल्पना की जा सकती थी। पिछली शताब्दी के अन्त में (१८९८ ई० में) ये लोग अपने देश की आज़ादी के लिए अँगरेज़ों के ख़िलाफ़ बड़ी बहादुरी दिखाते हुए लड़े थे, पर कई कारणों से इन्हें परास्त होना पड़ा था। आज भी वह हार इन्हें खटका करती थी पर उसके कारण बुज़दिली उन्हें छू तक नहीं गई थी। उस लड़ाई से उन्होंने बहुत कुछ सीखा था और उम्मीद रखते थे कि किसी न किसी दिन वे फिर आज़ाद ज़रूर होंगे। ये लोग सूडान के 'महदी आंदोलन' के नेताओं में से थे।

उस लड़ाई का ज़िक्र करते हुए शेख़ ने कहा—

'उस समय हमें लड़ने का तरीक़ा नहीं मालूम था। अँगरेज़ों के पास हथियार अच्छे और अधिक मात्रा में हैं यह हमें मालूम था पर बजाय इसके कि हम गोरिला की नीति अपनायें—हम अपनी बहादुरी के जोश में आकर हमेशा सामना-सामनी की लड़ाई में कूद पड़ते थे। यह हमारी सबसे बड़ी ग़लती हुई। हमें चाहिए था कि हम अँगरेज़ों को मरुभूमि से हो कर रेलवे लाइन निकालने में बाधा पहुँचाते, उनकी रसद रात के समय लूट लेते, पानी की टंकी उँडेल दिया करते—लेकिन इसके बजाय हम उन्हें सामना-सामनी मैदान में उतर कर पैंतरा

बदलते हुए लड़ने के लिए ललकारते रहे; जवाब में वे मशीनगनों से हमें भून दिया करते।'

सूडान के महदी आंदोलन के बारे में अँगरेज़ों द्वारा लिखी हुई कुछ पुस्तकें मैं पढ़ चुका था। उनमें ये महदी ऐयाश और ग़ुलामों की तिजारत करने वाले बतलाये गये थे। दबी ज़बान मैंने इसका शेख़ से ज़िक्र किया। उन्होंने मुझे सम-झाते हुए कहा--

'सब जातियों के लड़ने का अलग-अलग ढंग हुआ करता है और नई जातियों के साथ की लड़ाई में ही आदमी नई-नई बातें भी सीखता है। हमारे यहाँ पहले प्रथा ही थी कि हम हमेशा लड़ा करते थे। यदि मिस्री सामने न मिले तो आपस में लड़ते रहते थे। यह लड़ना खाने-पीने जैसी हमारे यहाँ रोज़मर्रा की चीज़ हो गई थी। इसी लिए उसमें हम कोई विशेषता नहीं मानते थे। लड़ाई के दिनों में भी हमारा साधारण जीवन बहुत दूर तक क़ायम रहता था। हम इतमीनान से लड़ा करते थे। हमारी औरतें हमारी फ़ौज के साथ चला करती थीं—नदी, पहाड़, रेगिस्तान, लड़ाई के मैदान—सब जगह वे हमारे पास रहती थीं। हम जिस वक़्त तलवार-भाले चलाते होते, हमारी औरतें हमारे बग़ल में रसोई बनाया करतीं। अँगरेज़ों के आक्रमण तक हमारा यही सिलसिला था।

'पर यह बहुत बड़ी ख़राबी थी। इसे हम लोगों ने सबसे पहले समझा और इसी लिए 'फ़क़ीरी' अख़्तियार की। अँगरेज़ों से लड़ने के लिए हमने अख़्तियार की इसी लिए वे हमें 'दरवेश' कहते भी हैं। पर यह ऐयाशी ख़ास रुकावट नहीं थी, असली वजह हमारा आजकल की लड़ाई के हुनर का न जानना था।'

शेख़ की बातें अवश्य ही बहुत दूर तक सच जँचीं। जिन लोगों के चेहरे हमारी आँखों के सामने इस समय नज़र आ रहे थे वे ऐयाशी ढंग के नहीं थे। औरतों के साथ रहने और लड़ाई के मैदान में कूदने के बीच उन्हें यदि चुन लेने का मौक़ा दिया जाता तो स्वभावतः ही वे लड़ाई के मैदान में कूद पड़ना कहीं अधिक पसन्द करते।

मेरे ग़ुलामों के तिजारत करने की बात का ज़िक्र करने पर उन्होंने कहा—

'इन फ़िरंगियों को जिसके ऊपर हमला करना होता है उस पर ये सबसे पहले यही तोहमत मढ़ते हैं। ये इटालियन भी तो अबीसीनिया वालों पर यही तोहमत मढ़ कर हमला करने जा रहे हैं—पर देखते नहीं हो, अगर जाँच करके देखोगे तो यही पाओगे कि इस व्यापार में इटालियन पूँजी ही सबसे ज़्यादा लगी हुई है। वे ही इसे प्रोत्साहित करने वाले हैं और उनके ही ज़रिये, उनके ही जहाज़ में ये ग़ुलाम अभी भी अरेबिया तक

पहुँचाये जाते हैं। अबीसीनियन लोगों के लिए इस समय जैसे इटालियन हैं हमारे लिए ठीक उसी तरह के अँगरेज़ थे।'

इन बातों के ख़तम होने पर उन्होंने जैसा वादा किया था मुझे 'तालीम' दी—

'तुम लड़ाई के मैदान में जाओगे—मैं लड़ते-लड़ते बूढ़ा हो गया, दाढ़ी सफ़ेद हो गई—तुम अभी लड़के हो, इसलिए हमारी सलाह हर वक्त याद रखना। जब कभी गोली चलती हो वा जहाँ पर भीड़ की तरह डर से फ़ौज इकट्ठी होती हो उधर का कभी भी रास्ता न लेना। गोली हमारी हड्डियों से ज़्यादा मज़बूत होती है—एक बात! और दूसरी, जब काफ़ी आदमी एक जगह इकट्ठे होते हैं तो दुश्मन को अंधाधुंध बिना निशाना का ख़याल रखे ही गोली चलाने का मौक़ा दे देते हैं क्योंकि किसी न किसी को तो गोली लगेगी ही और ख़िलाफ़ तरफ़ के लोग मारे ही जायँगे। हमेशा वैसी जमा होती हुई जमात से दूर रहना। मैं भी ऐसा ही करता था, इसलिए देखो—मैं अब तक मरा नहीं पर पचासों बार मैदान में कूद चुका हूँ।'

'लेकिन आपकी दाईं बाँह पर तो गोली का दाग़ है—' अदब का ख़याल रखते हुए, पर बाँह पर उँगली दिखाते हुए, हमारे कारवान के नेता जमालहुसेन ने कहा—

'अजी, यह कुछ भी नहीं है। हम मिस्री लोगों का

सामना कर रहे थे। लड़ाई बड़े मज़े की थी। उस तरफ़ भी बड़े दिलेर लोग थे। मैं तो उनकी तारीफ़ करूँगा। लड़ते-लड़ते ही मैं उनसे हाथ मिला लेना चाहता था इसलिए—'

'फिर भी गोली से घाव तो बहुत गहरा हो गया है।' जमाल ने टोका—

'तुम ज़्यादा बकबक मत करो', शेख़ ने ग़ुस्से में आकर कहा—'मेरी बात में कोई टोक दे—यह बदतमीज़ी तुमने कहाँ सीखी? चुपचाप सुनो नहीं तो···', फिर मेरी ओर देख कहने लगे—'मैं उस मिस्री से हाथ मिलाने जा रहा था। वह भी उसी नीयत से हमारी ओर आ रहा था। हम दोनों की लड़ाई देखने के क़ाबिल थी। हम दोनों ही बहुत बहादुर थे और एक-दूसरे की बहादुरी की तलवार चलाते वक़्त भी तारीफ़ करते जा रहे थे। बहादुरों की क़द्र बहादुर ही जानते हैं। लेकिन ठीक इसी वक़्त एक बुज़दिल ने दूर से गोली चला दी। गोली हमारी बाँह में लगी फिर भी तलवार हाथ से नहीं छूटी। हमारे प्रतिद्वंद्वी ने ख़ुद उस पर पट्टी बाँधी और गोली चलाने वाले को सज़ा दे दी गई। यह था हमारा पुराना लड़ाई का तरीक़ा। लेकिन अब···। ख़ैर! तुम वैसे मत लड़ना। जैसा मैंने बतलाया है तुम लड़ाई के आजकल के क़ानून से लड़ना, नहीं तो मारे जाओगे।'

फिर रात के हमले, हुक्म देने के तरीक़े, दुश्मन का पीछा करने आदि की बातें बहुत देर तक मुझे समझाते रहे। आख़िर में उन्हें याद आया कि मैं तो अरब नहीं। पर इससे संतोष हुआ कि मैं अँगरेज़ों के पक्ष का नहीं।

'बड़ी सख़्त है! आज़ादी की लड़ाई बहुत ही सख़्त है! यह तुम ख़ुद ही अबीसीनिया में देखोगे।'—वे दुहराते-तिहराते रहे।

अंत में हमें अपने इलाक़े की सीमा तक पहुँचा आने के लिए चार सिपाही दिये और हमारी कल की गिरफ़्तारी का ख़याल कर मुसकराते हुए कहा—

'दोस्त! परदेश में सख़्ती झेलनी ही पड़ती है। लेकिन अब तुम हमारे दोस्त हो! ख़ुशी-ख़ुशी जाओ।'

थोड़ा रुक कर उन्होंने अपने सिपाहियों के साथ-साथ हमें भी सलाम करते देख हुक्म दिया—

'क्विक मार्च...मार्च...मार्च...सीधे। पूरब।' उन्हें यह अँगरेज़ी कमांड याद था और बड़े ध्यान से वे हमारा उसे पालन करना देर तक देखते रहे।

४

हमारी रेगिस्तान की मार्च लम्बी हुआ करती। हम बारह-बारह घंटे चलते रह जाते पर सामने का दृश्य एक सा ही

रहता। प्रकृति मटमैला कपड़ा पहने खड़ी मिलती—बदलने के लिए उसके पास शायद और साड़ियाँ ही नहीं थीं।

हवा की लहरों के चिह्न रेती पर खिंची धारियों के रूप में मिलते—पर ये भी सब के सब एक ही प्रकार के। छाया में इन्हें देख कर कभी-कभी अनुमान होता—शायद यहाँ से होकर कभी पानी बहा होगा! पल्ले सिरे का सूखापन देखते-देखते तबियत ऊब कर अपनी कल्पना में ही गीलापन ढूँढ़ने की कोशिश करती—पर वास्तव में मरीचिका ही मिलती। हम दम साधे आगे बढ़ते जाते।

इस छोटे से रेगिस्तान को पार करने के लिए भी दरवेशों के जैसी हिम्मत की आवश्यकता थी। शेख़ का कहना ठीक ही था—ये स्थान औरतों के लिए नहीं। यहाँ निवास करने की तो बात ही दूर रही—यहाँ से होकर गुज़रने में भी अपनी नसों को तान कर चलना पड़ता।

कई दिनों की यात्रा के बाद दूर पर कोई लंबी काली सी चीज़ खड़ी दिखाई पड़ी। यह पहली दृष्टि में रेगिस्तान की यात्रा की अभ्यस्त हुई आँखों को प्रकृति-विरुद्ध बात दिखाई दी।

'वह क्या है?' मैंने ख़लीफ़ा से पूछा।

'वहाँ से ही हब्शियों का देश शुरू होता है।' उसने उत्तर दिया।

हम रेगिस्तान पार कर आये थे।

५

सोफ़ी को आदिस अबेबा पहुँचा देने का मैंने अपना इरादा जतलाया। वह अवाक् हो बैठी रही। कुछ अन्यमनस्क सी भी दीखी। मेरी बातों पर शायद उसे विश्वास नहीं हुआ।

मैं सच्चे दिल से कह रहा हूँ, यह एतबार दिलाने के लिए मैंने अरबी ढंग से उसका हाथ अपने हाथ में लेकर वे बातें दोहराईं। वह एक ओर मुँह फेर सिसकने लगी। उसे शायद अपने भाग्य पर ही विश्वास नहीं हो रहा था। अशिक्षित रहने पर भी उसके चेहरे पर भावुकता और सजीव होने के ज़बर्दस्त प्रमाण विद्यमान थे।

मैंने उसका हाथ पकड़ कर उठाया। आँसुओं की कई बूँदें मेरे हाथ पर भी आ टपकीं। उसी दिन शायद उसने जीवन में पहले-पहल अनुभव किया होगा कि वे आँसू भी मूल्य रखते हैं। शायद इसी लिए वे रुक नहीं रहे थे।

उसे खींच ले चलने की आवश्यकता नहीं थी। अब वह मेरे मुँह से निकली चाहे जो कोई भी ज़बान समझ सकती थी।

'आ······' मैंने कहा।

शायद इतना कहने की भी ज़रूरत नहीं थी। वह मेरे इशारे पर ही साथ आने लगी।

चतुर्थ खण्ड

अम्बा की रानो

१

अम्बा हमें अबीसीनिया के सरहद पर ही मिले। समतल बालुकामय प्रदेश से ये अचानक सैकड़ों फ़ीट ऊँचे बर्छे की नोक की तरह सीधे खड़े हो गये थे। हाड़-हाड़ निकले, दुबले-पतले-लंबे-काले-नंग-धड़ङ्ग शक्ल होने के कारण ये बड़े ही भयावने दीखते। पगडंडियों से चलते समय ये हमें उसके दोनों किनारे 'ऐटेंशन' की हालत में खड़े संतरियों से पहरा देते दिखाई दिये।

शायद प्रकृति ने ग़ुस्से में आ कर इस प्रदेश की सृष्टि की थी। इन सूखे पहाड़ों की नुकीली चोटियाँ राक्षसों के दाँत सी विकराल सदा काट खाने के लिए तैयार खड़ी रहतीं। अँधेरे की तो बात ही दूर रही—दिन दोपहर को इन्हें देख कर भय लगता।

जहाँ तक दृष्टि जाती, हरियाली का कहीं भी नामोनिशान नहीं। जीव-जन्तु भी नहीं दिखाई देते। आकाश में एक पक्षी तक नहीं। हमारी तरह कोई भूलता-भटकता अभागा

आया भी होगा तो नुकीले पत्थरों पर से पाँव फिसल जाने के भय से यहाँ विश्राम न ले आगे उड़ता चला गया होगा।

मनुष्य की कीर्ति का कहीं भी कोई चिह्न नहीं दिखाई देता। रेगिस्तान में भी कारवान के रास्ते मिलते हैं—और नहीं तो ऊँटों के पाँव के छाप बालू पर उगे रहते हैं, पर यहाँ इनका भी पता नहीं।

विश्राम लेने का कहीं भी स्थान नहीं। कभी-कभी कई दिनों का रास्ता तय करने पर कीचड़ घुला खोह का पानी मिलता। बिरले कभी पाँवों के नीचे छोटे-छोटे हलकी तह में बिछे पत्थर मिलते—जो याद दिलाते कि यहाँ से होकर कभी पानी बहा होगा।

'यह प्रदेश ऐसे विचित्र ढंग का क्यों? दुनिया की सतह पर इसके रहने की क्या ज़रूरत? किस बेढंगे ने इनकी सृष्टि की?'

ये प्रश्न मन में उठते और सामने जो कुछ भी पड़ता उसे देख कर आश्चय होता। फिर आश्चर्य होता कि आख़िर मैं ही ऐसे बेढंगे देश में क्यों आया? क्या साधारण जीवन में रूखेपन की कमी है कि उसका तजुर्बा हासिल करने के लिए यहाँ आने की ज़रूरत पड़ी?

बेतुके इटालियनों को क्या हड्डी तोड़ने-तुड़वाने का दुनिया में और कोई इससे बढ़ कर सुन्दर अखाड़ा नहीं मिला? वे क्या करेंगे यह प्रदेश लेकर? दुनिया का कोई भी जन्तु तो इसे

पूछता नहीं दिखाई देता। सच ही उन्हें पागल कुत्ते ने काट खाया है।

अम्बा की शृंखलाओं का कहीं अन्त नहीं। इनकी कोप-दृष्टि से बचने के लिए कारवान को पीछे छोड़ टट्टू भगाता अकेले बहुत आगे निकल आया था। पर यहाँ भी वही सुनसान। इनसे यों छुटकारा नहीं।

'और यह भी संभव है कि मैं कभी अबीसीनिया से वापस ही नहीं लौटूँ—' मैं मन ही मन सोचने लगा। अपने आप पर तरस आने लगा। पर इससे अम्बा को तो तरस नहीं। वह तो अपना विस्तार आगे ही बढ़ाती जाती। इससे बचने के लिए मन ने पुरानी स्मृतियों की शरण ली। यह यात्रा जहाँ से आरंभ हुई थी, उस दिन की याद आने लगी।

'मैं आऊँगी।' विस्मृत कंठस्वर सुनाई दिया।

'नहीं, नहीं, इस वीरान ख़ूँखार प्रदेश में मत आना—' मैं ज़ोर से बोल उठा।

सोफ़ी मेरे बग़ल में आकर खड़ी हो गई।

२

वह पसीने से सराबोर हो रही थी। बालू के कण पसीने की बूँदों से सन उन पर अटक गये थे। सूर्य की रोशनी के कारण उनके ऊपर आँखें नहीं टिक सकती थीं।

'इन अम्बा की चहारदिवारियों के बीच यह एक-ब-एक क्योंकर पनप आई ?' मैं अपने आपसे पूछने लगा। उसे अपने उतने निकट देख कर आश्चर्य हुआ। अम्बा के भयभीत करने वाले शुष्क प्रदेश को देखते-देखते मैं भूल सा ही गया था कि प्रकृति के कोमल भाव को प्रदर्शित करने वाली, उसके द्वारा प्यारपूर्वक गढ़ी गई कीर्ति भी मेरे साथ सफ़र कर रही है।

मैंने और एक बार चारों ओर दृष्टि घुमाई। कोई भी हिस्सा नुकीली चोटियों से ख़ाली नहीं। हम लोहे की दीवारों से घिरे हुए थे। मालूम पड़ता था जैसे ये दीवारें मीलों ऊँची उठती हुई आकाश की ओर चलती चली गई हैं।

जिस पगडंडी पर हम चल रहे थे वह भी समतल नहीं। टट्टुओं के पाँवों के नीचे पड़ने वाले पत्थर एक भी आकार और मोटाई में दूसरे के समान नहीं। कहीं कहीं रास्ता इतना विकट था कि बहुत सम्हाल कर चलने पर भी इस इलाक़े के प्रवीण टट्टुओं तक के पाँव फिसलने लगते थे।

धूप भी बड़ी कटावनी थी। इस यात्रा का बिना पानी का हिस्सा दो दिन में पार कर लेने के इरादे से हम तड़के उठे थे और तीसरे पहर की धूप में छाया के लम्बी होते जाने तक लगातार एक तार से चलते जा रहे थे।

पहाड़ी के एक घुमाव के पास हमें थोड़ी छाया सी दिखाई

दी। मैं टट्टू से नीचे उतर आया। सोफ़ी भी उतरी। उसने दोनों टट्टुओं की लगाम अपने हाथ में ली और मुझे बैठ जाने का इशारा किया।

प्यास बड़े ज़ोरों की लग आई थी। इस प्रकार की यात्रा में एक सेर का बोझ भी अभ्यास न होने पर ढोकर ले चलना पहाड़ दीखता है इसी लिए मैंने अपना पानी का बोतल भी अपने नौकर—ख़लीफ़ा की गर्दन में झुला दिया था। उसे पैदल चलने की आदत थी और टट्टुओं के साथ-साथ ही चला करता था पर मालूम नहीं इस समय वह भी कहाँ पिछड़ गया था।

पर उसके लिए प्रतीक्षा करने के सिवा और कोई दूसरा चारा भी नहीं था। जहाँ तक दृष्टि जाती, दृष्टि दौड़ा आता पर पानी का कहीं नामोनिशान तक नहीं दिखलाई देता।

'दोज़ख़! असली दोज़ख़ यही है।' कहता हुआ ख़लीफ़ा पास आया। पत्थरों से उसके पाँव कट गये थे। कई स्थानों से ख़ून निकल रहा था। 'ख़ुदा हाफ़िज़! इससे मिलान करने पर तो रेगिस्तान को भी बहिश्त में ही गिनना चाहिए।'

'तुम्हारा सूडान ऐसा नहीं—क्यों?' मैंने उससे पूछा।

'अजी, तोबा कीजिए। हरगिज़ नहीं। यहाँ तो आदमी क्या एक जानवर, पक्षी, कीड़ा तक भी नहीं दिखाई देता। इस देश में तो भूत भी आकर भूखा-प्यासा मर जाये।'

संयोग से हमारे बोतल में अभी भी आधा बोतल पानी बचा था। हम तीनों ने उसे ही बाँट कर पिया। रसद-पानी वाले ऊँटों के आने तक प्राण बच सकते हैं—यह आशा अब फिर से दृढ़ होने लगी।

३

आँखें बन्द कर थोड़ा विश्राम करना चाहता था पर अम्बा-श्रृंखलाओं से पीछा छुड़ाने की चिन्ता ने पीछा नहीं छोड़ा। जिस घुमाव पर विश्राम कर रहा था उसके आगे के रास्ते की कल्पना करते ही कभी न अन्त होने वाला अगाध अम्बा-समुद्र दिखाई देने लगा।

'इनसे छुटकारा नहीं।' मैंने मन ही मन सोचा। फिर तय किया कि आगे भी यदि ऐसे ही स्थान मिलते जायँगे तो जहाँ बैठ गया हूँ यही स्थान कौन सा ख़राब है कि यहाँ एक रात डेरा न डाला जाय! इसकी व्यवस्था कर लूँ, फिर बिस्तरा डाल आराम करूँ—सोच कर मैंने आँखें खोलीं।

दृष्टि सोफ़ी पर पड़ी। दोनों टट्टुओं की लगाम पकड़े वह अभी भी खड़ी थी। ढीले-ढाले अरबी लिबास के भीतर से उसके शारीरिक गठन की चुस्ती झाँकी लगा रही थी। सर ढकने वाली पतली चादर से उसने पसीना पोंछ कर वही गीली चादर कंधे में लपेट ली थी। उसकी काली आँखें मेरे चेहरे

पर गड़ी थीं। उसकी इस दृष्टि में बच्चों के कुतूहल के साथ-साथ सहानुभूति और स्नेह भरा था।

अम्बाओं के प्रदेश में यह मुझे बिलकुल अनहोनी सी चीज़ दिखाई दी। इस प्रदेश की रूखी बदसूरती एक-ब-एक भूल गया और एकटक सोफ़ी की ओर निहारने लगा। वह बिना किसी संकोच वा हिचक के पहले की ही भाँति मेरी ओर देखती रही।

मैं उसके प्रति कृतज्ञता प्रकाश करना चाहता था, उसे बैठ जाने का इशारा करना चाहता था पर मालूम नहीं क्यों एक-ब-एक हँस पड़ा और उससे कहा—

'तू भी इस प्रदेश में अकेली ही है।'

वह इसका मतलब शायद नहीं समझ पाई। उसकी दृष्टि हम जिधर से आये थे उधर की ओर दूर तक दौड़ने लगी।

४

मेरा खबराल—कारवान-नायक—जमालहुसैन ऊँट की पीठ पर बैठा मस्ती से झूमता हुआ आया। इनके लिए सब रास्ता एक समान ही था। सामने के दृश्य की खूबसूरती-बदसूरती का इनके मन पर कुछ भी असर नहीं होता था। धूप, सर्दी और बरसात में इनकी गति एक सी रहती और यात्रा का ढंग भी एक ही रहता।

इस समय इन्हें काफ़ले के कई अरब घेरे हुए थे और ये उन्हें अपने झोले से निकाल कर एक-एक खजूर देते जा रहे थे। जो लम्बे थे उन्हें दो-दो मिल गये थे और नाटे लोगों को एक भी नहीं। इसी लिए वे काफ़ी शोर मचाते। जमालहुसैन लोगों के नाटेपन पर क़सूर मढ़ देते और दुबारा खजूर निकालने के लिए तैयार नहीं थे।

मुझे थका-माँदा बैठा देख वे स्वयं ऊँट से नीचे उतर पड़े और मेरी ओर आते हुए अपने लोगों को हुक्म दिया—'यह जगह बहुत ही सुन्दर है, आज डेरा यहीं डाला जायगा।'

अब उनका डील-डौल मैं भली भाँति देख पाया। ये लंबे-चौड़े तगड़े जवान थे। दाढ़ी बिलकुल सफ़ेद हो गई थी; उसके भीतर से मुसीबतों के द्वारा पड़ी हुई रेखाएँ बहुत स्पष्ट दीख रही थीं जिनके प्रति शायद ही कभी उनका अपना निज का ध्यान खिंचा होगा। मुरेठा सर पर ढीला-ढाला बँधा था, उसके भीतर से पसीना निकलता, गहरी रेखाओं के बीच हो ठीक नाली के समान बहता और ठुड्डी के पास पहुँचते-पहुँचते दाढ़ी के जंगलों में लोप हो जाया करता। पर इस समय वह दाढ़ी भी गीली होती दिखाई दे रही थी, उस पर हाथ फेरते हुए मेरे सामने आ उन्होंने कहा—

'देहना स्त्रीलिंग!'

सोफ़ी मुसकराने लगी। मैं समझ गया, यह अवश्य ही उसकी मातृभाषा का कोई शब्द है।

'यह हब्शी ज़बान है–' जमालहुसैन ने कहा—'इसका मतलब है—तुम स्वस्थ रहो।'

'मैं समझ गया—' हाथ मिलाने के लिए आगे बढ़ाते हुए मैंने कहा—'देहना...'

'तुम बेवक़ूफ़ कुछ भी नहीं समझे—' जमालहुसैन जी भर कर हँसने लगे—'तुम क्या जानो हब्शी तरीक़ा। अगर कोई देहना स्त्रीलिंग कहता है तो सिर्फ़ देहना कह कर चुप नहीं रहा जाता और हाथ भी आगे नहीं बढ़ाया जाता। तरीक़ा है कि तुम उससे गले-गले मिलो, उसे चूमो और सब समाचार पूछते हुए आख़ीर में आश्चर्य दिखलाओ कि अब तक वह आदमी ज़िन्दा है। लेकिन यह सब तो आहिस्ता-आहिस्ता सीखोगे। अभी यह बतलाओ कि तुम पीते हो वा नहीं। इटली से आ रहे हो तो वहाँ की कुछ शराब साथ लाये वा नहीं? मुझे दिलचस्पी अभी इस सवाल में है।'

मुझसे हँकार-सूचक उत्तर मिलने पर उन्होंने कहा—

'तुम बहादुर आदमी हो! शाबाश! चेहरा देख कर ही मैं समझ गया था कि तुम भलेमानस हो। हमारी तुम्हारी दोस्ती क़यामत के दिन तक आबाद रहे।' अपने झोले से

खजूर निकाल कर मेरे आगे बढ़ाते हुए उन्होंने कहा—'यह लो। खजूर खाओ। मैं इन्हें ख़ास तुम्हारे लिए गेदा-रेफ़ से लेता आ रहा हूँ।'

ऊँट पर के सब सामान वहीं उतार दिये गये। इटालियन काप्री शराब चखते हुए जमालहुसैन ने कहा—

'ये इटालियन असल में सभ्य हैं। इसका सबसे बड़ा सबूत यह शराब है। पर यह तो वे अपने घर में रखते हैं और हमारे यहाँ भेजते हैं हथियार! हथियार तो चाहे जो कोई भी बना ले पर शराब बनाने में हिकमत की ज़रूरत पड़ती है। तुमने ऐसी शराब बनाना नहीं सीखा?'

'नहीं।'

'फिर क्या ख़ाक छानने वहाँ गये थे? अगर सुभान होता तो सब सीख कर आता।'

'यह सुभान कौन?'

'यह खारतूम में बस जाने वाला हिन्दुस्तानी व्यापारी है। इससे हमारी बड़ी दोस्ती है। उसके बहुत बहुत से गुण हैं। जुआरी पहले सिरे का और चोर अव्वल दर्जे का है पर क्या मजाल कि कभी कोई उसे पकड़ ले। हिकमत सब तरह की जानता है, कोई भी दुनिया में ऐसा ताला वा दरवाज़ा न होगा जिसे वह बात की बात में न खोल दे। शराब तो वह ऐसी बेचता है

कि क्या बतलाऊँ। बिलकुल लाजवाब। अकेले खारतूम में उसने पैंतीस बीबियों से निकाह किया है। वैसे आला आदमी हमारे यहाँ तो हैं ही नहीं, तुम्हारे यहाँ भी शायद ही और कोई मिलेगा। तुम तो उसके मुक़ाबले में बिलकुल बेवक़ूफ़ हो। तुम्हें तो मैं ही अभी कितनी चीज़ें सिखला सकता हूँ।'

'मुझे क्या सिखलाओगे?' मैंने दिलचस्पी दिखलाते हुए पूछा—

'सबसे पहले ऊँट पर चढ़ना। फिर तुम्हें ऐसे सफ़र में कोई तकलीफ़ नहीं होगी। टट्टू तो औरतों की सवारी है और बड़ी तकलीफ़देह है। तब सिखाऊँगा तुम्हें ऊँट चुराना, दुश्मनों की औरतें लूट लाना। और अगर चाहोगे तो ख़ूबसूरत से ख़ूबसूरत औरतों से तुम्हारा निकाह कराता जाऊँगा। शराब तो तुमने बहुत अच्छी पिलाई दोस्त! अब एक दूसरा बोतल और नहीं खोलोगे?'

मैं वह भी उनके लिए खोलने लगा। दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए उन्होंने कहा—

'तुम बड़े ही क़ाबिल आदमी हो।'

सोफ़ी मेरे लिए सफ़री खाट लगा चुकी थी; अब उस पर बिस्तरा लगाने जा रही थी। उसकी ओर इशारा करते हुए जमाल ने कहा—

'और यह तुम्हारी औरत भी बड़े काम की है। यह तुम्हारी कैसी शादी है?' इस प्रकार की बातें वे मुझसे कर चुके थे—पर उसकी स्मृति उन्हें नहीं रही थी।

'मैंने आज तक शादी ही नहीं की और यह तो हमारी औरत नहीं।'

'लाहौल वेला ़कुवत! लाहौल बेला ़कुबत! यह क्या कह गये! तुम्हारे जैसा ख़ूबसूरत और क़ाबिल आदमी और अब तक एक भी शादी नहीं? अभी तुम्हारी उम्र कितनी हुई?'

'चौबीस।'

'तब तो तुम दो भैंसे के बराबर हो गये। तुम्हारी उम्र में तो मैं पैंतालिस औरतों को तिलाक़ दे चुका था।'

मुझे आश्चर्य हुआ। मैंने पूछा—

'अब आपकी वैसी औरतों की क्या तादाद होगी?'

'मैं ग़रीब हो गया, नहीं तो यह तादाद अब तक सौ के ऊपर पहुँच जाती। इनमें मैं हब्शी औरतों की गिनती नहीं करता। वैसी तो हम जिस गाँव से गुज़रते हैं वहाँ एक छोड़ आते हैं। मैं गिनती करता हूँ अरबी औरतों की। इनकी तादाद अभी पचहत्तर तक पहुँची है। मुझे यह कहते शरम लगती है; क्योंकि मुझसे और मामलों में नंबर टपाने वाला नहीं मिला पर इस मामले में कई दिखाई

दिये। फिर भी कोई हर्ज नहीं है। अभी मैं बूढ़ा थोड़े ही हुआ हूँ !'

'लेकिन दाढ़ी तो सफ़ेद हो चली।' मैंने उन्हें टोका।

'अजी, यह तो बुज़ुर्गी की सिफ़त है। बुढ़ापे से इसको क्या ताल्लुक़ ? बुज़ुर्गी बअक़्लस्त न बसाल। (हम में यह बुज़ुर्गी अक़्ल से है उम्र से नहीं) अगर ख़ुदा ने चाहा तो मैं बहुत दिन जीऊँगा और सौ से ऊपर निकाह करूँगा।' वे दाढ़ी पर हाथ फेरने लगे।

'लेकिन बूढ़े काका ! इसमें आपको कोई पाप नहीं मालूम होता।'

'पाप !' उन्होंने आश्चर्य में आकर कहा—'इसमें पाप कैसा ? निकाह करना पाप है ? ज़िन्दगी में मैं पहली मर्तबा सुन रहा हूँ। तुम पागल हो गये हो ! झूठ कहते हो कि हिन्दुस्तानी हो। अगर हिन्दुस्तानी होते तो सुभान की तरह शरीफ़ होते और हमारी बातें समझते। अभी भी तुम बड़े कम-अक़्ल हो।'

दूसरे अरबों को नमाज़ पढ़ते देख उन्हें याद आया कि उस वक़्त तक उन्होंने नमाज़ नहीं पढ़ी। जल्दी जल्दी सूखे हाथ वज़ू कर गमछा बिछा नमाज़ के लिए बैठ गये। उनका सर नवाने का तरीक़ा कुछ अजीब सा दिखाई दिया। मैं ठीक पहचान नहीं पाया कि आया वे क़ुरान की आयतों के हिसाब से झुक रहे थे अथवा शराब के नशे में ढुलक रहे थे। शराब के

भरे हुए गिलास की ओर से उनका ध्यान हटा नहीं था। बीच-बीच में आँखें खोल कर वे उसे देख लिया करते। नमाज़ ख़तम कर चुकने पर कुछ गंभीर हो मुझसे कहने लगे—

'पाप तो काफ़िर करते हैं। मैं तो ख़ुदा पाक से इतना डरता हूँ कि कभी कोई पाप कर ही नहीं सकता।'

'फिर भी इतने बार निकाह करने और तिलाक़ देने में आप अपने को ख़ुदाताला के सामने गुनाहगार नहीं पाते?'

'गुनाहगार?' चेहरे की नसें तन आईं और भवें चढ़ा कर वे कहने लगे—'तुम्हारे जितना बड़ा बेवकूफ़ मैंने अपनी इस लम्बी ज़िन्दगी में पहले पहल आज ही देखा। तुम्हें तो हमें अभी मज़हब भी सिखाना पड़ेगा। तुम तो इन जंगली हब्शियों से भी गये गुज़रे हो। लेकिन तीसरी बोतल अब खोलो। तुमने इतनी बोतलें साथ ले ली थीं यही सिर्फ़ तुम में क़ाबिलयत और इन्सानियत की बू साबित करता है।'

फिर से गिलास भर चुकने पर वे मुझे अपना दर्शन समझाने लगे—

'ख़ुदा ने मुझे बनाया और तुम्हें बनाया। हमारा काम मौज करना और हथियार ढोना है। औरतों को भी ख़ुदा ने बनाया लेकिन हमारे लिए। उनका काम है बच्चे पैदा करना और हँसुआ ले कर खेती करना। यही हमारे ख़ुदा का क़ानून

है। हमारे बाप-दादा इसी क़ानून को मानते आये हैं और हम भी इसे ही मानते हैं। तुम्हारे यहाँ के लोग अगर यह क़ानून नहीं मानते तो वे ख़ुदा के सामने गुनाहगार साबित होंगे। हम तो ख़ुदा का क़ानून मानते हैं, हम क्यों गुनाहगार होंगे ?'

सोफ़ी हमारे सामने आ कर खड़ी हो गई। उसे जिस प्रकार बताया गया था ठीक उसी भाँति उसने तश्तरी में खाना सजाया था। उसकी ओर देख कर जमालहुसैन ने कहा—

'यह हब्शी औरत भी बड़े काम की है। लेकिन मैं तुम्हारे लिए इससे भी अच्छी ढूँढ़ दूँगा। तुम्हारा जिससे निकाह कराऊँगा वह क़सीदा किया हुआ अलखला पहनेगी और मलमल की चादर ओढ़े रहेगी। क्यों ? तुम्हें पसन्द है न ?'

मैं मुसकराने लगा।

'हाँ, हाँ, तुम धनी आदमी हो। तुम्हारी औरत के घाँघरे में सुनहरी, रुपहली ज़री का काम होना चाहिए, देह पर चाँदी के गहने रहेंगे। आय···शराब कितनी बढ़िया है। इससे बढ़ कर दूसरा और कौन बहिश्त होगा ? लेकिन तुम अपनी औरत को शराब बनाना ज़रूर सिखाना। सोफ़ी किसी काम की नहीं। तुम्हारे लिए दूसरी अच्छी ढूँढ़ दूँगा। मैं जो कहता हूँ, उसे पूरा ज़रूर करता हूँ। जानते हो, आज से

तुम मशहूर खबराल सैयद जमालहुसैन के दोस्त हुए। आओ, हाथ मिलाओ!'

उन्होंने हाथ मिलाया।

'नहीं, हम तो भूले ही जा रहे थे कि हम अबीसीनिया पहुँच गये हैं। आओ, हब्शी तरीक़े से गले गले मिलें।'

गले गले मिल लेने के बाद ऊँटों पर से उतारे गये सामान से वे उठक गये। और मुझसे कहा—

'तुम बहादुर आदमी हो। लेकिन कल सबेरे ख़ूब तड़के नहीं उठे तो तुम्हें सज़ा दूँगा।'

शराब की बोतल हाथ से पकड़े ही वे खर्राटे लेने लगे।

५

मेरे नौकर ख़लीफ़ा और एक हब्शी नगादी के बीच इस प्रकार का घूँसा तानते हुए बहस चली कि आधी रात को ही मेरी नींद टूट गई। उनकी बातें मैं पूरी पूरी नहीं समझ पाता था पर इतना अवश्य सारांश निकाल लिया था कि उनकी बहस औरतों से ताल्लुक़ रखते किसी मामले पर चल रही है।

थोड़ी देर बाद जमालहुसैन का कर्कश स्वर सुनाई दिया—

'उल्लू कहीं के! गज्जाम के पहले तुम्हें औरतें मिलेंगी ही कहाँ कि उनके बाबत बहस कर रहे हो! तुम लोग बड़े फ़जूल आदमी हो।'

बहस कुछ ठंढी पड़ती सी दिखाई दी पर जमालहुसैन के झपकी लेते ही फिर गरमा-गरमी चलने लगी। अब मैंने उनकी बातें ध्यान से सुनीं और पता चला कि हब्शी औरतों से अरब लोगों के निकाह के बाबत झगड़ा चल रहा है। इसी समय जमालहुसैन ने अपना फतवा दिया—

'तुम लोगों को हज़ार बार मैंने मज़हब समझाया होगा पर अब तक तुम्हें अक्ल नहीं आई। निकाह और तिलाक़ अरब औरतों के लिए है क्योंकि वे अरबी ज़बान समझती हैं। जो यह ज़बान नहीं समझे उसे इन बातों से क्या ताल्लुक़! फिर, ख़ुदा ने हब्शी औरतों को भी मर्दों के लिए बनाया है—उनका अपने सुख के लिए तुम चाहे जैसे भी इस्तेमाल करो कोई हर्ज नहीं। सिर्फ़ गाला औरतों को नहीं छेड़ना नहीं तो सही सला-मत खारतूम नहीं लौट सकोगे, पर और चाहे जो भी मिलें सब हमारे लिए ख़ुदाताला ने बनाई हैं।'

इस फ़ैसले के बाद बहस की कोई गुंजायश नहीं रह गई। जमालहुसैन की पुरानी आदत से सब लोग वाकिफ़ थे। उनके फ़सला दे देने के बाद भी अगर कोई चूँ चपड़ करता तो वे उसे दुबारा बातों से नहीं बल्कि लाठी से समझाया करते।

उधर के मामले से निपटते ही उन्होंने मुझे पुकार कर कहा—

'अजी ! आज तुम्हें सज़ा होगी। तुम इतनी देर तक सोते रहे। आज हमें शाम होने के पहले किसी पानी के ठिकाने पर पहुँचना ही होगा नहीं तो हम सब पानी बिना मर जायँगे।'

मैं झटपट उठ बैठा।

'अब झटपट करने से क्या फ़ायदा ! तुम्हारे ऊपर तो सज़ा मढ़ दी गई। आज शाम को तुम्हें फिर मुझे तीन बोतल इटालियन देना पड़ेगा। पहला मर्तबा है इसलिए इतना जुर्माना कर ही तुम्हें बख़्श देता हूँ।'

सोफ़ी टट्टुओं को कस चुकी थी। उसने उन्हें मेरे सामने ला खड़ा किया। एक डब्बे से कुछ बिसकुट निकाल कर मैं खा रहा था। मैंने दो उसके दोनों हाथों पर रख दिये। वह उन्हें वैसे ही लिये खड़ी रही। शायद उसे पता नहीं था कि वह उन्हें ले कर क्या करे।

उसका चेहरा भली भाँति देख पाने लायक़ उजेला हो गया था। आज उसने हब्शी पोशाक पहनी थी। इसमें वह कुछ दूसरे ही प्रकार की लग रही थी। उसका गले के ऊपर का भाग बिलकुल खुला हुआ आज पहले पहल देखा। रंग हलका काफे के रंग का था। सब अङ्ग भरे हुए और हृष्ट-पुष्ट थे।

हाव-भाव में पुरुष-भाव पर्याप्त मात्रा में था और रेखाएँ

भी बहुत कुछ सख्ती की ओर खिंच रही थीं, पर इससे उसका सौन्दर्य कुछ कम होता हो वैसी बात नहीं थी। पहले दिन जिस प्रकार का कातर भाव उसके चेहरे पर देखा था आज वह बिल्कुल ही लोप हो गया था और वह आज मुझे अपने निज के स्वाभाविक स्वरूप में दिखलाई पड़ी।

अफ्रिका की अँधेरी रात जैसी काली घनी भँवों के बीच से उसकी बड़ी-बड़ी काजल पुती आँखें फाड़ फाड़ कर मेरी ओर निहार रही थीं। मैंने इशारे से उसे बिसकुट खाने के लिए कहा और स्वयं खाते हुए दिखलाया कि इसके खाने में कोई हर्ज नहीं।

बिसकुट काटने के लिए मुँह खोलने पर उसके दूध से सफ़ेद दाँत दिखाई दिये। मालूम नहीं क्यों इस समय वह अपनी स्वाभाविक आकृति में भी मुझे मुसकराती हुई नज़र आ रही थी। उसकी यह मुसकान बड़ी ही अद्भुत सुन्दर दीख रही थी।

जमालहुसैन का ध्यान भी उस ओर खिंचे बिना नहीं रहा। ऊँट पर सवार होते होते उसने मुझसे कहा—

'जंगली कहीं के! इतनी ख़ूबसूरत औरत के पास रहते भी फ़क़ीरों जैसे रहते हो। अगर ख़ुदा का ही डर है तो क्यों नहीं निकाह कर लेते। मुझे क़ुरान की कुछ आयतें याद हैं, इस जंगल के लिए उतना ही काफ़ी होगा। पढ़ूँ मैं?'

'नहीं, मैं शादी करना ही नहीं चाहता।'

'बेवकूफ़! बेवकूफ़! तुम में ज़रा भी आदमियत नहीं।' वह कई बार दुहराते तिहराते रहे।

६

जिसे लोग सभ्य संसार और समाज नाम दिया करते हैं उससे मैं बहुत दूर निकल आया था। उसकी चमक, लकधक, कृत्रिमता आदि के जो आघात मानसिक स्नायुओं पर हुआ करते थे वे अब बन्द हो चले थे। मनुष्य के प्रकृति के ख़िलाफ़ संग्राम—इसे बदल देने की प्राथमिक चेष्टाओं तक के चिह्न मुझे इन दिनों दिखाई नहीं देते थे। औरतों द्वारा पुरुषों के नचाये जाने का खेल भी मुझे अतीत में और बहुत दूर पर खेला जाता हुआ दिखाई दिया करता।

'सोफ़ी में वह कला नहीं। वह उनसे सैकड़ों मील दूर है।' बार बार सोचता।

मैं जब कभी टट्टू से नीचे उतरता, वह मेरे टट्टू की लगाम पकड़े खड़ी रहती। उसका इस रूप में मेरे सामने खड़ा होना मुझे बड़ा ही अद्भुत दिखाई देता। वह मुझे सुन्दर दीखती पर फिर भी सभ्य कही जाने वालियों से कहीं दूर। इसमें नारी-स्वभाव के उपयुक्त नरमी के स्थान पर सख़्ती थी। बिल्कुल

अल्हड़ और चाल में किसी प्रकार मेरी परिचित नारियों की क़िस्म का न होना मुझे बड़ा ही अजीब सा दीखता।

मैं कभी-कभी उसकी इस 'नासमझी' को बदल देने की सोचता और यह मुझे संभव भी दीखता। वह अपनी बुद्धि का उपयोग नहीं करती, पर उसमें यह पर्याप्त मात्रा में भी मौजूद है इसे कोई भी अस्वीकार नहीं कर सकता था। फिर उसका बदल डालना क्योंकर संभव नहीं?

कभी-कभी अपनी कल्पना में अपने प्रयत्नों के फलस्वरूप उसे यूरोप और एशिया के बड़े-बड़े लेखकों की मोटी मोटी पुस्तकें पढ़ता हुआ देखता। यह भी सोचता कि शायद वह एक दिन कालिदास की शकुन्तला सी बन जायगी। मुझसे संस्कृत में बातें करेगी। उच्च समाज के लोगों से उसका परिचय कराते समय मुझे अभिमान होगा। शायद उस समय तक वह हमारी प्राच्य नृत्य कला में भी प्रवीण हो जायगी। उसकी कला समझ सकने और उतनी बारीकी से व्यक्त करने के ढंग को देख कर मैं गद्‌गद हो उठूँगा। मालूम नहीं, मेरे ही जैसे और कितनों को रोमांच हो आयगा। लेकिन मैं उसका नाम क्या दूँगा?

'अम्बा की रानी।' थोड़ा सोच कर मैंने स्थिर किया।

'क्या फ़ज़ूल की बातें सब सोच गया।' तुरंत ही अपने

आप से कहने लगा। 'यह तो हब्शी औरत है, वहशी है, यह सभ्य कैसे बन सकती है ?'

हम लोगों का डेरा लगता। फिर से जमालहुसैन शराब ढालने लगते। अरब औरतों की चर्चा करने लगते। मैं थकावट के मारे खर्राटे लेने लगता।

अगले दिन डेरा कूच करने के समय सोफ़ी के संबंध में फिर वे ही विचार आने लगते जिन्हें शाम के 'फ़ज़ूल की बातें-' कह कर टाल दिया करता। उसकी काली चमकती आँखों को देख कर बार बार इसी नतीजे पर पहुँचता कि उसमें अवश्य ही कुछ छिपा है जिसे मैं समझ नहीं पा रहा हूँ।

यही सिलसिला अंबा की शृंखलाओं के पार करने तक रहा। जब जब सोफ़ी मेरे टट्टू की लगाम पकड़ कर खड़ी होती, विशेष कर सबेरे की यात्रा आरंभ करते वक्त--तो इच्छा होती उसे एक बार 'अम्बा की रानी' कह कर पुकारूँ।

गाला

१

बनावटी दुनिया से जितना ही दूर आ गया अपने को समझता, मन और शरीर दोनों उसी अनुपात में हल्के हुए दिखाई देते। सभ्यता का बोझा जबर्दस्ती अपने ऊपर लादते रहने के कारण भी बहुत अंश में सभ्य समाज के लोगों का जीवन भार सा बना रहता है। असमंजस में पड़े रहने, प्रकृति-विरुद्ध काम करते जाने और जीवन को जटिल बनाते जाने में ही वे अपनी बहादुरी समझते हैं क्योंकि उसी को वे सभ्यता के नाम से पुकारा करते हैं।

जिस प्रदेश की इस समय यात्रा कर रहा था और वहाँ के जैसे लोग साथ थे वा जिनका साथ रास्ते में हुआ करता उन्हें 'असभ्य' कहा जा सकता है। पर इतना होने पर भी उनकी एक बहुत बड़ी विशेषता थी। जीवन की ओर दृष्टि डालने का उनका ढंग बड़ा ही सरल था। शायद इसी लिए

वे मुझे सभ्य संसार से अधिक आज़ाद दिखाई देते और उनमें मुझे एक विशेष प्रकार का सौन्दर्य दिखाई देता।

धीरे धीरे अम्बा प्रदेश पीछे छूट गये। अब स्थान स्थान पर हरियाली मिलने लगी। पानी की भी कमी नहीं। एकाध स्थान पर जव जैसे अन्न भी बोये हुए दिखाई दिये, पर फिर भी आदमियों की बस्तियाँ नहीं मिलतीं।

'इस अन्न के बोने वाले कहाँ रहते हैं?' मैंने जमाल हुसैन से पूछा।

'ये जंगली हैं, मकान बना कर नहीं रहते, पेड़ पौधों के झोंझ में जीवन बिताया करते हैं।'

'मैंने समझा था ये ज़मीन के नीचे गड्ढा खोद कर रहते होंगे।'

'अभी इतनी अक़्ल इन्हें कहाँ! गड्ढा खोदने के लिए भी तो हथियार चाहिए।'

'फिर भी इन आदमियों को मैं देखना चाहता हूँ।'

'वे हमें देख कर छिप जाते हैं, पर चलो इससे आगे के इलाक़े के लोग कुछ ढीठ हैं, शायद वे ज़रूरत से ज़्यादा ढीठ हैं। उनके यहाँ तो हमें डेरा डालना ही पड़ेगा।'

एक दिन क्षितिज में एक विचित्र प्रकार का रंग दिखाई दिया। मैंने अनुमान किया शायद ये बादलों से ढके हरे भरे

पहाड़ हैं। 'ये अभी भी बहुत दूर होंगे।' मैंने मन ही मन सोचा। हम अभी एक पहाड़ी दर्रे से गुज़र रहे थे।

इस दर्रे से बाहर निकलते ही हवा एकदम हलकी हो गई सी दीखने लगी। शरीर में अजीब प्रकार की शीतलता लगी। सब रोएँ खड़े हो आये।

सामने मालूम पड़ा जिन पहाड़ों को मैं अभी बहुत दूर समझ रहा था मुश्किल से वे अब सौ गज़ की दूरी पर होंगे। यदि मैं लंबा होता तो शायद अगला क़दम उनकी चोटी पर रखता। ये चोटियाँ इस समय बादलों के साथ खेल रही थीं। इनकी रेखाएँ ठीक इन्हीं के रंग के बादलों से मिली हुई थीं।

इतने सजे सजाये रूप में और इतना एक-ब-एक ये मेरे सामने आकर खड़े हो गये थे कि मैं स्तब्ध हो उसी स्थान पर खड़ा हो गया। चोटी पर की हरियाली हवा और बादलों के खेल के कारण लहरा रही थी। इनमें प्राण था। मुझे ऐसा जान पड़ा मानों मैं इन्हें स्वप्न में देख रहा हूँ। कहीं धोखा तो नहीं!

मैंने आँखें भली भाँति मल कर देखा। पाँव से सर तक राजसी पोशाक डाले पहाड़ सामने खड़े थे।

उस ओर अवाक् हो मुझे निहारते देख ख़लीफ़ा ने कहा—'इसी पहाड़ के पच्छी तरफ़ त्साना झील है।'

मैंने उसकी बातें अनसुनी कर दीं। मुझे मालूम पड़ रहा था ये पहाड़ मुझे बुला रहे हैं। अपने टट्टू को मैंने सरपट इनकी ओर दौड़ाया। दूर। दूर! वे पहाड़ पीछे हटते जा रहे थे पर अपनी ओर आने का मुझे इशारा करते जाते। मैं हार मानने वाला नहीं था।

'यहीं से तो जीवन आरंभ होता है।' मन ही मन जपता हुआ मैं आगे भागता जा रहा था। इस प्रदेश में सड़कें नहीं हुआ करतीं। पगडंडियाँ भी बिरले ही मिलती हैं, अधिकतर अंदाज़ से ही काम चलाना पड़ता है। मुझे इस समय इनकी फ़िक्र करने की आवश्यकता नहीं दिखाई दी। पहाड़ मुझे उधर बुला रहे हैं तो अवश्य ही वही ठीक रास्ता होगा।

दो एक झोपड़ियाँ दिखाई दीं। 'पड़ी रहें' उन्हें कहता हुआ आगे बढ़ा। जानवरों की खाल का वस्त्र पहने एक औरत दिखाई पड़ी। उसके बिना नमस्कार किये ही उसे 'मौज करो' आशीर्वाद देता हुआ आगे निकला। बर्छा लिये कोई मर्द पेड़ों की ओट में खड़ा था। उसे मैंने कहा—'मस्त रहो' और आगे बढ़ा।

पेड़-पौधे—प्रत्येक पत्ते से मैं बात करता चलता था। ये सब मुझे परिचित दिखाई देते थे। हम एक दूसरे की ज़बान समझते थे। मैं इनसे ही चोटी पर जाने का रास्ता पूछता।

ये बड़े अदब और क़ायदे के साथ दो क़दम पीछे हटते और मौन रह कर आगे बढ़ते जाने का इशारा करते।

मैं कितनी देर इस भाँति दौड़ता रहा मुझे पता नहीं। चोटी पर पहुँच जाने पर टट्टू रोका। हम दोनों ही पसीने पसीने हो रहे थे। काँटों से कपड़ों में खरोंच लग गये थे जिनके भीतर से ठंढी हवा शरीर में लग रही थी। ये खरोंच ठीक झरोखों जैसा काम करते। मैंने उन्हें और भी थोड़ा बड़ा कर दिया। टट्टू को घास चरने के लिए छोड़ दिया और मैं स्वयं दृश्य देखने लगा।

हमारी बाँईं ओर बहुत दूर तक ढाल होता चला गया था। जहाँ यह ढाल समाप्त होता था वहाँ तीन ओर से ऊँचे ऊँचे पहाड़ों से घिरी नीले रंग की झील थी; इसका चौथा सिरा क्षितिज से मिला हुआ था। दाईं ओर और सामने ऊँचे ऊँचे पहाड़ों की शृंखलाएँ घूमती फिरती पेंच खाती क्षितिज तक पहुँच गई थीं। जिधर से आया था उधर मैदान दीखता था, मानों उधर कोई पहाड़ ही नहीं। मालूम होता अभी दस क़दम से ही चढ़ाई शुरू हुई है।

सोफ़ी और कारवान को बहुत पीछे छोड़ दिया था। उन्हें ढूँढ़ने लगा। वे कहीं भी दिखाई नहीं दिये।

'वे आते ही होंगे। और जायँगे कहाँ?' सोच कर मैं पास के सब से ऊँचे टीले पर जा बैठा।

२

अम्बा प्रदेश का ठीक उल्टा जितना कुछ कल्पना में लाया जा सकता है वही त्साना प्रदेश था। प्रकृति ने एक को जितना ही उजाड़ और वीरान बना रखा था दूसरे को उतनी ही दूर तक हरा-भरा और बसा हुआ बनाया था। शायद अम्बा की सृष्टि करते समय उसने मृत्यु, प्रलय अथवा संहार का ध्यान किया था और त्साना को बनाते समय जीवन और सृष्टि क़ायम रखने का ख़याल रखा था।

अपेक्षाकृत इतने कम फ़ासले पर ही प्रकृति का रुख़ इतना बदला रहेगा यह मैंने अनुमान तक नहीं किया था। त्साना प्रदेश की एक चोटी से निहारने पर यह स्पष्ट हो गया कि प्रकृति संसार में त्साना के समान शायद ही और किसी प्रदेश को उतना प्यार करती होगी। यहाँ की इंच-इंच ज़मीन को उसने सजाया था, शायद प्रत्येक पत्ते तक पर उसकी कृपादृष्टि थी और ये सदा पनपते फलते फूलते रहें इसकी उसने व्यवस्था कर दी थी।

पर यह सब उसने दुनिया के एक ऐसे कोने में सजाया था जहाँ इस सजावट की प्रशंसा कर पाने योग्य व्यक्ति बिरले ही कभी पहुँच सकते होंगे। मनुष्य की कीर्ति का यहाँ पर भी

शायद ही कहीं और वह भी अति पुरातन तरीक़े का चिह्न मिलता था।

बसा था यह प्रदेश पक्षियों और नाना प्रकार के जीव-जन्तुओं से। इनकी क़िस्मों की कोई सीमा नहीं। झुंड के झुंड रंग बिरंग के पक्षी उड़ते हुए त्साना झील की ओर जा रहे थे। वे इस समय बहुत ऊँचे पर उड़ रहे थे फिर भी जिस स्थान पर मैं बैठा था वहाँ से वे नीचे ही दीखते थे।

एक तितली आ कर मेरे दाँये हाथ पर बैठ गई। इसका भी रंग और सौन्दर्य और देशों की तितलियों की अपेक्षा भिन्न और कहीं अधिक चमकता हुआ दिखाई दिया। मैंने उसे पकड़ना चाहा पर वह उड़ गई। मैं उसके पीछे पीछे दौड़ा। वह एक झाड़ी पर जा बैठी।

तितली तो लोप हो गई किन्तु मेरी दृष्टि पड़ी एक अद्भुत व्यक्ति पर। हाथ में लम्बा भाला लिये वह एक टाँग पर खड़ा था। शरीर पर सिवा एक कमर में लगे फटे हुए कोपीन के और कुछ भी नहीं। शरीर का रंग अम्बा की चट्टानों के समान।

'यह यहाँ कहाँ से टपक पड़ा?' मैं आश्चर्य–चकित हो अपने आप से पूछने लगा। वह एकटक मेरी ओर देखता रहा। मौन। इशारे से मैंने उसका कुशल-क्षेम पूछा, पर फिर

भी वह मौन ही रहा। वह जिस पाँव पर भार दे कर खड़ा था वह अवश्य ही थक गया होगा पर उसने उसे भी बदला नहीं। मेरी तितली उसके खुले शरीर पर जा बैठी। उसने उसे हटाने की कोशिश नहीं की। अम्बा के शिखरों के समान एक तार से खड़ा वह व्यक्ति पहरा दे रहा था।

मैं लौट कर पुन: अपने टीले पर जा बैठा। चारों तरफ़ की झाड़ियों से खरखराहट की आवाज़ आई। मैंने सोचा शायद मेरे काफ़ले के लोग आ रहे हैं पर देर तक फिर कोई चिह्न नहीं। जो पत्नी थोड़ी देर पहले मेरे पास से उड़े थे उनका झुंड त्साना झील पर पहुँच गया था, वे अब वहाँ नीचे उतरने लगे थे। उनके बहुत छोटे आकार में हो कर लोप हो जाने पर मेरा ध्यान अगल बगल की झाड़ियों की ओर गया। जिस प्रकार का व्यक्ति मैंने थोड़ी देर पहले एक झाड़ी के पास देखा था उस प्रकार के इस समय मेरे चारों तरफ़ एक दर्जन पहुँच गये थे।

उन्होंने मुझे घेर लिया था। जब उन्हें पता लग गया कि मैंने उन्हें देख लिया है तो वे मेरे सामने आये। एक बूढ़े ने अपनी ज़बान में मुझसे कुछ पूछा। मैं उसका सिवा 'सूलू मूलू कुल कूलू' की तरह आवाज़ के और कोई अर्थ नहीं समझ सका।

उसने दो-तीन बार ठीक उसी तरह की आवाज़ की।

शायद इसका तात्पर्य मुझसे कुछ प्रश्न पूछना था। पर मैं मौन ही रहा। उन व्यक्तियों में कई चमड़े की माला की तरह की कोई चीज़ पहने थे, वे आगे आकर ध्यान से मेरी ओर देखने लगे। मैं अभी भी मौन ही रहा।

बूढ़ा मेरे और भी निकट आ गया। उसके दोनों तरफ़ के दो नवजवान भाला भाँजने लगे। अब मेरी समझ में आया—मामला कुछ गोल-माल ज़रूर है। मैंने भी अपने पाकेट से रिवाल्वर निकाल लिया। इसका उन लोगों पर कुछ भी असर नहीं हुआ। जब एक ने मेरे ऊपर निशाना कर भाला ताना तो मैंने भी उसकी ओर रिवाल्वर ताना। उसने इसे शायद कोई जादू वाली चीज़ समझा और वह दो क़दम पीछे हट कर जा खड़ा हुआ।

चारों तरफ़ बिल्कुल स्तब्धता छाई थी। आपस में वे लोग कुछ तय करने लगे। मैंने आगे की ही भाँति उनकी ओर रिवाल्वर का मुँह ताने रखा। देर तक जब मेरे हाथ के जादू वाले यंत्र का कोई खेल उन्होंने नहीं देखा तो फिर उन्होंने साहस किया और वे आगे क़दम बढ़ाने लगे। इस बार मुझे पूरा विश्वास हो गया कि वे मेरे ऊपर वार करना चाहते हैं। मैंने रिवाल्वर का मुँह आकाश की ओर फेर घोड़ा दबाया। बड़े ज़ोर का धमाका हुआ।

प्रतिद्वंद्वी सहम गये और एक दूसरे का हाथ पकड़ कर सहारा लेने लगे। मैंने उन्हें बैठ जाने का इशारा किया। रिवाल्वर का मुँह मैंने फिर से उनकी ओर फेर लिया था शायद इसी लिए इस बार वे मेरा इशारा समझ गये और जहाँ खड़े थे वहीं बैठ गये। शायद मेरी ओर से ही बातचीत शुरू करने का वे इंतज़ार कर रहे थे।

मैंने इशारे से उन्हें अपना अपना भाला ज़मीन पर रख देने के लिए कहा पर इस बार उन्होंने विद्रोह किया और मेरा कहना नहीं माना। बूढ़ा आगे आने की कोशिश कर रहा था पर मैंने उसे अपने स्थान पर ही बैठे रहने का इशारा किया। वह मान गया।

हम लोग एक दूसरे की आँखों में बड़े ध्यान से और बड़ी देर तक देखते रहे। फिर मालूम नहीं क्या सोच कर मुझे हँसी आ गई। बूढ़ा भी मुसकराया पर उसके और सब साथी गंभीर हो बैठे रहे।

मैंने अपनी भाषा में उनके सामने व्याख्यान देना शुरू किया। वे आपस में एक दूसरे का मुँह देखने लगे। पर यह मुझे पता चल गया कि मेरे डाँट कर और ज़ोरों से बोलते रहने का उनके ऊपर उल्टा असर हुआ। वे मेरी ओर से निर्भय होने लगे। एक ने त्साना झील की ओर देख कर आवाज़ भी की—

'अइयो उइयो हू हू हू...'

यह आवाज़ वे अपने गाँव वालों को बुलाने के लिए दे रहे हैं अथवा आक्रमण करने के पहले लड़ाई का नारा लगा रहे हैं, मैं ठीक ठीक अन्दाज़ा नहीं लगा सका। इतना फ़र्क़ ज़रूर देखा कि उन्होंने भाला तान लिया और तितर-बितर न रह सब एक दूसरे से सट कर खड़े हो गये। मैंने अन्दाज़ लगाया शायद यह आक्रमण करने के पहले की उनकी व्यूह-रचना है। मैं भी रिवाल्वर तान कर उनके आक्रमण की प्रतीक्षा करने लगा।

इसी समय सोफ़ी वहाँ आई। रिवाल्वर के धमाके ने उसे मेरा पता बता दिया था। वह शायद मेरे प्रतिद्वंद्वियों की ज़बान भी जानती थी। वह एक टट्टू पर सवार थी और मेरा टट्टू अपने दूसरे हाथ में लिये थी। मुझे पता नहीं, मेरा टट्टू स्वयं भाग गया था अथवा आक्रमणकारियों ने उसे वहाँ से भगा दिया था।

प्रश्न के रूप में दो-चार मामूली बातें सोफ़ी से हो जाने पर प्रतिद्वंद्वी आपस में एक दूसरे का मुँह देखने लगे। क्या उत्तर दें अथवा क्या करें शायद यह तय करना उनके लिए कठिन हो रहा था। सोफ़ी की बातों का ताँता आगे भी जारी रहा। मैंने आज पहले पहल उसके मुँह से उतने शब्द और

वह भी लच्छेदार रूप में सुने। उसने मेरी ओर देख कर और प्रतिद्वंद्वियों की ओर चुपके से इशारा करते हुए कहा—

'गाला—'

मैं इसका कोई अर्थ नहीं समझ सका। पर उसके चेहरे का रुख़ देख कर अंदाज़ लगाया कि विपत्ति अभी टली नहीं है इसलिए वह बहुत भयभीत है। भय के कारण वह काँप रही थी और अधिकाधिक मेरे निकट चिपकती आती थी।

इसी समय जमालहुसैन भी हमें ढूँढ़ते हुए वहाँ पहुँचे। आक्रमण के लिए तैयार बैठे लोगों से उनकी भी बातें हुईं, पर वे सबका तात्पर्य मुझे समझाते गये।

वे अम्बा शिखरों की शक्ल सूरत वाले गाला जाति के थे और मुझे मार कर अपनी बहादुरी साबित करना और मेरी एक निशानी रख लेना चाहते थे। उनकी दलीलों के अनुसार इसमें मुझे कोई एतराज़ नहीं होना चाहिए था। बहुत दिन पहले उनके यहाँ और एक 'फिरंगी' आया था तो उसने अपनी जान इन्हें दे देने में ज़रा भी चूँ-चपड़ नहीं की थी। उसके अंग से काट ली गई एक निशानी भी माला के रूप में एक गाला ने पहन रखी थी जिसे उसने इस समय मुझे बड़े अभिमान के साथ दिखलाया।

हमारे दो जबनिया (व्यक्तिगत रक्षा के लिए भर्ती किये

गये सिपाही) भी मेरे पास पहुँच गये थे। उनसे मैंने अपनी दो बंदूक़ें अपने हाथ में ले लीं। बंदूक़ों से शायद ये गाला परिचित थे क्योंकि उन्हें देखते ही वे कुछ दूर जा बैठे।

उनसे जमालहुसैन की बड़ी देर तक बहस चलती रही। उसने उन्हें समझा कर कहा कि जिस फ़िरंगी की उन गाला लोगों ने बहुत वर्ष पहले जान ली थी उसके घर और गाँव वाले बहुत सी बंदूक़ें लेकर बदला लेने के लिए आ रहे थे पर उन्हें मैंने ही रास्ता भटका दिया। वे फ़िरंगी अब वापस लौट रहे हैं। दूसरी बात यह कि मैं भी उनका ही मज़हब मानने वाला मुसलमान हूँ, फ़िरंगी नहीं। अगर उन्होंने मेरे ऊपर हमला किया तो दुनिया भर के मुसलमान 'जेहाद' बोलते हुए आ पहुँचेंगे और एक भी गाला ज़िन्दा नहीं बचेगा; वे सब की बोटी बोटी काट डालेंगे। तीसरी बात गाला लोगों को यह समझाई गई कि मैं वहाँ से बहुत बहुत दूर अम्बा वाले देश का राजा हूँ और हमारी फ़ौज में भी गाला लोग रहते हैं। अगर इन लोगों ने मुझे मारा तो हमारी फ़ौज के गाला लोग बाँस से भी ऊँचे ऊँचे भाले लेकर आयेंगे और दर्जनों गाला को एक एक में गाँथ कर ऊँट पर लाद याददाश्त के रूप में ले जायँगे।

जमालहुसैन के व्याख्यान का गाला लोगों पर बहुत बड़ा और तुरंत ही असर हुआ। झुक कर वे मुझे सलाम करने

लगे। बूढ़े ने अपने लोगों को डाँटा और ज़मीन तक झुक कर मुझे सलाम करने के लिए उसने उन्हें हुक्म दिया। फिर वह जमालहुसैन से कहने लगा—

'इन्होंने हमसे कहा क्यों नहीं कि ये गाला के राजा हैं। हम बकरे, भेड़, हिरन और भैंसे मार कर लाते और इनकी ख़ातिरदारी करते। हमारे यहाँ इन जानवरों की कमी नहीं। हमारे खुद के पास दो दर्जन बकरे हैं।'

'ख़ैर, इसमें अभी कुछ देर थोड़े ही हुई है।' जमाल हुसैन ने उन्हें उत्तर दिया—'लेकिन एक बात कहे रखता हूँ, इनके खुश रखने में ही तुम लोगों की ख़ैरियत है।'

जुलूस बना कर हम लोग वहाँ से चले। गाला मेरे शरीर-रक्षक बने। इस समय तक सूरज ढलने लगा था। छाया लंबी होती जा रही थी। इन गाला लोगों के ही गाँव में टिकना हम लोगों ने निश्चय किया।

२

सिर्फ़ त्साना के ही छिपे हुए प्रदेश में नहीं बल्कि सारे अबीसीनिया के विकट प्रदेशों में गाला निवास करते हैं। सोलहवीं शताब्दी में इस जाति का अबीसीनिया के ऊपर सर्वप्रथम धावा हुआ था; कुछ दिनों के लिए उन्हें अपना आधिपत्य जमाने

में सफलता भी मिली थी, पर किसी भाँति की संस्कृति से ताल्लुक़ न रहने के कारण अपेक्षाकृत सभ्य अमहारा लोगों पर इनका आधिपत्य नहीं रह सका। गाला लोगों का काम देश को उजाड़ बनाना रहा। अमहारा लोगों से उस समय जो झगड़ा चला वह आज तक समाप्त नहीं हुआ है।

गाला मुसलमान मज़हब मानते हैं और अमहारा क्रिश्चियन संप्रदाय की एक शाखा के अनुयायी हैं--यह विभेद रहने के कारण भी झगड़ों की जड़ बहुत नीचे तक पहुँची हुई है। आधिपत्य जमाने के झगड़े इसी मज़हबी आड़ में चलते रहे हैं इसलिए इनका महत्त्व आज भी बहुत अधिक है।

गाला-अमहारा संघर्ष में अमहारा विजयी होते गये और गाला लोगों को वीरान अथवा जंगली इलाक़ों में खदेड़ते गये। शुरू शुरू में लुक-छिप कर रहने और जीवन बिताने की जो आदत गाला लोगों को लगानी पड़ी वह आज भी वर्तमान है। बाहरी दुनिया से इनका आज भी कोई ताल्लुक़ नहीं। जिसने सोलहवीं शताब्दी में इन्हें देखा होगा वह यदि आज भी आ जाये तो इन्हें ठीक उसी हालत में देखेगा। इतनी शताब्दियों के बाद भी इनके रहन-सहन अथवा बाहरी वेष-भूषा में परिवर्तन नहीं हुआ है।

४

हम लोग गाँव के सरदार और आसपास की कई गाला बस्तियों के नेता अब्बा हुसैन के घर में टिके। पहाड़ की चोटी के टीले पर इनसे मेरी चार आँखें हो चुकी थीं और इनके मुख पर एक बार मुसकान की रेखा देख लेने के कारण इनका चेहरा मेरे मन पर भली भाँति अंकित हो चुका था।

इनका घर एक झरने के किनारे बड़े ही रमणीक स्थान पर बना था। दूर से देखने पर कोई यही अन्दाज़ लगाता कि यहाँ पर एकान्त में प्रकृति का कोई सौन्दर्योपासक निवास करता है। यह घर हिमालय में पाये जाने वाले साधु महात्माओं की कुटिया से मिलता-जुलता था पर ख़ास फ़र्क़ यह था कि इसकी बनावट किसानों के अन्न रखने वाले बेढ़ी-बखारी जैसी शक्ल की थी। साधु की कुटियाओं में चबूतरे वा ओसारे जैसी चीज़ों का यहाँ पर अभाव था।

बाँस की शक्ल की जंगली लकड़ियाँ गोलाकार रूप में खड़ी कर दी गई थीं। एक दूसरे से बाँधने के लिए इन्हीं लकड़ियों की पतली लम्बी डालियों से काम लिया गया था। ऊपर के छप्पर पर पत्तों की छवाई की गई थी। एक तरफ़ नीचे की ओर से थोड़ी जगह ख़ाली छोड़ दी गई थी जो इस घर का

स्वरूप खोह वा माँद सा बना देती पर वह वास्तव में भीतर जाने आने का दरवाज़ा था।

निकट जाने पर और उस घर के देखने पर मुझे बड़ी निराशा हुई। यह ठीक बकरी बाँधने के घर जैसा दीखा। वास्तव में ही दो बकरे इस समय उसके भीतर घुस रहे थे।

बाहर सूर्य की रोशनी पर्याप्त मात्रा में रहने पर भी भीतर बिलकुल अँधेरा था। घर के बीच में आग जल रही थी, उसी के प्रकाश में चेष्टा करने पर कुछ देखा जा सकता था। एक तरफ़ से एक गाय के डकारने की आवाज़ आई। तुरंत ही पास के मुर्गों ने इसका जवाब दिया। दरवाज़े के किनारे खोद कर साफ़ किये अपने स्थान से कुत्ते भी भूँकने लगे। इसी के एक किनारे हम लोगों का भी सामान रखा गया।

इस घर में टिकने के लिए बाहर से और अधिक हिम्मत बाँध कर आने की ज़रूरत थी—इसी ख़याल से मैं तुरंत ही बाहर भी निकल आया।

'गाला बेत' (गाला का घर है)—सोफ़ी ने कहा। उसे भी इस घर को देख कर निराशा हुई थी। पर जमाल हुसैन को न जाने क्यों यह ख़ूब पसंद आया था। वे ख़ीमा डालने के विरोधी थे। और रात उसी घर में बिताना चाहते थे। एक तरफ़ मुझे किनारे ले जाकर उन्होंने कहा—

'अब तुम अबीसीनिया पहुँच गये हो, इस समय से लेकर यह देश छोड़ने तक किसी का भी एतबार न करना।'

उनकी राय के मुताबिक़ उस दिन हम लोगों का कोई भी सामान खोला नहीं गया। उनका कहना था कि जब सामान बँधा रहता है तो गाला उसे चुराने की कम ही हिम्मत करते हैं क्योंकि उसमें उन्हें संदेह रहता है कि कहीं कोई जादू न भरा हो। खुले सामान को चुरा लेने में उन्हें कोई हिचक नहीं होती।

सामान रखवाने की व्यवस्था कर चुकने पर उन्होंने कहा कि गाला लोगों का मेरे ऊपर और मेरी शक्ति के ऊपर पूरा पूरा विश्वास उस समय तक नहीं जमा है। रात को वे धोखा दे सकते हैं इसलिए उन्हें बंदूक़ की एक आध करामात दिखला देना लाज़िमी है।

सूर्यास्त उस समय तक नहीं हुआ था। मैं शिकार के लिए भेजा गया। मेरे साथ पाँच गाला भी मुझे रास्ता दिखाने के ख़याल से चले। उनके कहने से यह भी पता चला कि उस दिन सुबह को उन्होंने एक स्थान पर एक चीता देखा था। उस चीते की खोज में हम लोग बड़ी देर तक घूमते रहे पर उसकी कोई निशानी नहीं दिखाई दी।

गाला हमें वैसे रास्ते से लेकर चले जहाँ कोई पगडंडी भी नहीं थी। हम लोग जंगल ही जंगल घूम रहे थे और जंगल घना

होने के कारण अधिक दूर तक हम नहीं देख पाते थे। साथ ही अंधकार भी धीरे धीरे होता आता था। गाला लोगों के लिए वह कोई ख़ास बाधा नहीं होती क्योंकि उनके भाले अंधकार में ही अधिक कुशलतापूर्वक चमका करते हैं। मेरे बंदूक़ के निशाने के लिए यह अवश्य ही असुविधा-जनक था पर और कोई उपाय भी नहीं था।

लगभग डेढ़ घंटे तक घूमते रहने के बाद एक हिरन दिखाई दिया। गाला लोगों ने चुपके चुपके उसे मुझे दिखाया। साथ ही इशारे से यह भी जतलाया कि बिना घेरे हुए उसका मारा जाना संभव नहीं। शिकार रेंज के बाहर नहीं था फिर भी फ़ासला काफ़ी था। मैंने निशाना लगाया। लग गया। गाला आश्चर्य-चकित हो गये। एक को साथ ले कर मैं घर की ओर लौटा, बाक़ी शिकार ढो लाने के लिए वहीं रुक गये।

घर के भीतर जा कर देखा--गाय, बैल, बकरे, बकरी, मुर्ग़ा, मुर्ग़ी और कुत्ते की जमात में आधे दर्जन भेड़, एक टट्टू और एक गदहा भी शामिल कर दिया गया है। घर का आधे से ज़्यादा हिस्सा उन्होंने ही घेर रखा था। अपनी अपनी ज़बान में इन सबने आपस में मालूम नहीं किस विषय पर वाद-विवाद आरंभ कर दिया था। हमारे जैसे नये अतिथियों को देख कर उनके कितने सदस्य भड़क भी रहे थे।

गाला लोगों की मजलिस जानवरों की मजलिस से सटी हुई ठीक बीच घर में आग के चारों तरफ़ लगी हुई थी। उन्होंने अभी अभी एक बकरा काटा था और उसकी खाल उधेड़ रहे थे। कई उसका कच्चा गोश्त काट काट कर मुँह में डाल चखते जाते। कई उसे आग में भूनने की तैयारी कर रहे थे।

'यह तुम्हारी अगवानी की ख़ुशी में काटा गया है—' जमालहुसैन ने मुझे सुनाया।

बदबू के मारे नाक फटती जा रही थी। मैंने दरवाज़े के पास अपनी सफ़री खाट लगवाई। पर बाहर पानी बरस रहा था। घर में किवाड़ लगाने के कला-कौशल तक गाला की कारीगरी विकसित नहीं हुई थी। दरवाज़े के बदले वे दरवाज़े के माप की जंगली लकड़ी रखते थे और उसे ही सजा कर किवाड़ के स्थान पर जोड़ दिया करते।

वे इस समय उस दरवाज़े को बंद करने जा रहे थे पर मेरे आग्रह करने पर रुक गये। सफ़री लालटेन जला मैंने अपनी नोटबुक में कुछ लिखना आरंभ किया। गाला लिखे हुए काग़ज़ के टुकड़ों के लिए अपना हाथ आगे बढ़ाने लगे। मैं इसका कोई मतलब नहीं समझ सका। जमालहुसैन से पूछने पर पता चला कि चाहे जो कुछ भी क्यों नहीं लिखा जाये, गाला उसे मंत्र लिखना ही समझते हैं। एक बूढ़े गाला ने कहा भी—

'पता नहीं तुम किस बेतुकी चीज़ पर और बेतुकी कील के जैसे हथियार से भूत बना रहे हो! हमारे यहाँ बहुत बहुत पहले—सिर्फ़ हम बूढ़ों को ही यह बात याद है—बहुत बहुत दूर गजाम देश से एक अमहारा आया था। उसके पास बहुत बड़ी फ़ौज थी जिसके डर से उसकी जान हम लोगों ने बख़्श दी थी। हमारे इस काम से ख़ुश होकर उसने पत्ते पर और लकड़ी से भूत बना कर दिया था। उसे हम लोगों ने गाँव के बीच में गाड़ दिया है और उस दिन से हमारे यहाँ कोई चीता हमारे बच्चों को उठाने नहीं आता। तुम हमें अब कौन सा भूत देने जा रहे हो?'

इसका जवाब मेरी ओर से जमाल ने दिया। उसने जितने गाला भूतों के नाम याद कर रखे थे सबके नाम का एक एक पुर्जा मुझसे लेकर गाला लोगों को दिया। पुर्जे को गाला लोगों के हाथ में थम्हाने के पहले वह अपनी ओर से भी कुछ मंत्र पढ़ दिया करता था।

मैं जब सोने की कोशिश करने लगा उस समय गाला लोगों ने गाना आरंभ किया। जमालहुसैन ने मुझे जगा कर उसका मतलब समझाया—

'हू...ही...ही ही—ही...हुई...हुआ...हू। हुन्डी था हमारे गाँव का मेठ। जवानी में उसने एक हाथी मारा था। जब वह गाँव के किनारे बैठा तो असादा (गाला लड़की का

नाम) आई। उसने हुंडी के सर में मक्खन नहीं लगाया। और कहा कि तुम आदमी मार उसकी जवानी काट कर गले में पहन कर आओ तो मैं तुम्हारे साथ रहूँगी। हुंडी ने दूर दूर गजाम देश से आते हुए एक राही अमहारा को, जब वह सो रहा था, भाले से गाँथ दिया और उसकी जवानी काट कर पहन गाँव के किनारे जा बैठा। समूचे गाँव की लड़कियों ने उसके सर में मक्खन चबोता लेकिन हुंडी असादा को ही अपने घर लाया। बहादुर हुंडी पहाड़ में दूर दूर तक और यहाँ तक कि बहुत दूर अबाई नदी के उस पार भी मशहूर हुआ और उसके मुर्ग़ी के अंडों जितने लड़के पैदा हुए।

'हू...ही...ही...हुई.. हुआ...हू।'

आख़िरी लाइन गाते गाते कई गाला अपने लंबे लंबे भाले हाथों में ले उठ खड़े हुए और छप्पर को बचा कर, जितना भी उछला जा सकता था, उछलने लगे। मैं भी उठ बैठा और बंदूक़ अपने पास खींच लाया।

'यह अब मस्ती से नाच रहे हैं।' जमालहुसैन ने समझाया।

गाला लोगों के नाच गाने के लय में उस घर में बाँधे गये सब जानवर सुर मिलाने लगे। दो चार गाला औरतें एक कोने में सट कर बैठी थीं, वे अब टीन बजाने लगीं।

मैं झुँझलाया पर मुझे रोकते हुए जमाल ने कहा—'यह ग़लती कभी न करना। अब एक बोतल इटालियन निकालो और हम दोनों पियें। वही इस समय अकेली दवा है जो हमें फ़ायदा पहुँचायगी।'

बोतल हाथ में दे देने पर उसने कहा—

'अब तुम सोओ। निश्चिन्त होकर सोओ। मैं सारी रात पहरा दूँगा।'

५

'इस जंगली औरत को क्यों साथ लिया है?' अब्बा-हुसैन ने सोफ़ी को दिखलाते हुए जमाल द्वारा मुझसे पुछवाया।

'टट्टू की रखवाली के लिए।'

'ठीक है, यह काम यह अच्छा जानती है।' अब्बा-हुसैन ने कहा—'लेकिन शादी करने लायक़ नहीं है। इसने आज तक अपने सर में मक्खन नहीं चबोता।'

थोड़ी देर रुक कर वे स्वयं मुझसे कहने लगे —

'तुम हमारे यहाँ रह जाते तो ज़रूर चीता और हाथी मार डालते। यही क्यों, हमारे लिए तुम अमहारा और फ़िरंगी, जितने भी आते सबको ज़रूर मार डालते। फिर अगर तुम चाहते तो हमारे गाँव भर की लड़कियाँ तुम्हारे सर में मक्खन

चबोत देतीं और तुम अपने लायक़ एक चुन लेते। इसके बाद हममें से कोई भी तुम्हें मारने की हिम्मत नहीं करता।'

बहादुरी की डिग्री मुझे अभी भी वे देने के लिए राज़ी नहीं थे; क्योंकि अब तक उन्होंने असल में सिर्फ़ एक हिरन मारते हुए मुझे देखा था जो वे भी बड़ी आसानी से कर सकते थे। पर मेरी जादूवाली बन्दूक़ पर उनका विश्वास जम गया था।

हमें आगे का कुछ दूर तक रास्ता बतलाने के लिए कुछ साथियों के साथ अब्बाहुसैन स्वयं चले। बिना इनकी मदद के इस इलाक़े से पार होना भी बहुत कठिन था। सुडान की सीमा के बाद सड़क नाम की कोई भी चीज़ हम लोगों ने नहीं देखी थी। पगडंडियाँ मिलती थीं पर इस इलाक़े में वे भी कहीं कहीं ही दिखाई देतीं।

अब्बाहुसैन हमारे बग़ल में अपने टट्टू पर चढ़े त्साना झील से निकली छोटी अबाई नदी की धारा तक पहुँचाने आये। नदी में पानी कम था, फिर भी अब्बाहुसैन ने मुझे टट्टू से उतार लिया और अपने कंधे पर चढ़ा कर पार कराया।

बख़्शीश के बारे में पूछने पर उन्होंने कारतूस का एक ख़ाली टोटा और एक काग़ज़ का टुकड़ा माँगा। काग़ज़ पर उन्होंने 'अमहारा भूत की तालिस्मा' बनवाई और उसे ख़ाली टोटे में भरा। फिर उसे एक पत्ते में लपेट एक लता से अपने

गले में लटका लिया। अब उन्हें अमहारा लोगों से कोई डर नहीं रह गया था।

जिस दूर-दूर देश गज्जाम की बातें गाला गाया करते थे वह छोटी अबाई के पार करते ही आरंभ हुआ। सामने अभी भी बहुत ऊँचे ऊँचे पहाड़ थे पर उनका सौन्दर्य त्साना के किनारे के पहाड़ों जैसा नहीं था। उनकी ओर दिखाते हुए जमालहुसैन ने कहा—

'वहाँ अमहारा लोगों की आबादी है। ये गाला से कहीं ख़तरनाक होते हैं।'

अब्बाहुसैन ने भी जाते-जाते यही चितावनी याद दिलाई और एक व्याख्यान सा ही दे डाला जिसका भावार्थ था कि अमहारा जंगली होते हैं। अब्बाहुसैन स्वयं अपने को उस 'जंगली' से कहीं ऊँचा मानते थे।

अमहारा

१

'देहना स्त्रीलिंग—' (स्वस्थ रहो)।

'देहना स्त्रीलिंग—'

'अच्छे तो हो न !'

'धन्यवाद ! तुम अच्छे तो हो न !'

दोनों एक दूसरे का आलिंगन करते हैं।

'तुम्हारी बीबी तो अच्छी हैं ?'

'धन्यवाद ! तुम्हारी बीबी तो अच्छी हैं ?'

'तुम्हारे बच्चे तो अच्छे हैं ?'

'धन्यवाद ! तुम्हारे बच्चे तो अच्छे हैं न ?'

आलिंगन करने में कंधा बदलते हैं।

'तुम्हारा खेत तो अच्छा है न ?'

'हाँ, तुम्हारा खेत तो अच्छा है ?'

'धन्यवाद ! तुम्हारा घर तो आबाद है ?'

'शुक्रिया ! तुम्हारा घर तो आबाद है न ?'

कस कर एक दूसरे के छाती लगाते हैं ।

'तुम्हारा ऊँट तो अच्छा है न ?'

'शुक्रिया ! तुम्हारे टट्टू तो अच्छे हैं न ?'

'तुम्हारे बैल तन्दुरुस्त हैं न ?'

'तुम्हारे बैल तन्दुरुस्त हैं न ?'

'तुम्हारी बकरी कैसी है ?'

'तगड़ी ! तुम्हारी मुर्ग़ी कैसी है ?'

'अच्छी ! तुम्हारी मुर्ग़ी के बच्चे तो अच्छे हैं न ?'

और कुछ देर तक इसी प्रकार का विस्तार से समाचार पूछते रहने के बाद जिससे मुलाक़ात होती है वह नये आये हुए अतिथि से पूछ बैठता है—

'और तुम अब तक ज़िन्दा हो ?'

'तुम अभी जिन्दा हो न ?' दूसरा उत्तर में पूछता है ।

'मरियम की दुआ है ।'

'ईसू का शुक्रिया—सब ज़िन्दे हैं ।'

एक दूसरे के गाल पर चूमते हैं। सारी बातें शुरू से आख़ीर तक और दो बार मंत्र रूप में जल्दी-जल्दी पूछ लेने पर अमहारा लोगों की आपस में वा अतिथियों से मिलने की रस्म पूरी होती है। हमारे जमालहुसैन प्रत्येक अमहारे से—चाहे

वह मर्द हो वा औरत—यदि उसे जीवन में पहले एक बार भी देखा होता तो उससे इसी प्रकार मिला करते। इनके किसी परिचित गाँव में पहुँचने पर कभी कभी सौ क़दम का रास्ता तय करने में घंटा डेढ़ घंटा लग जाया करता।

इन्हीं अमहारा जाति के लोगों का अबीसीनिया में प्रभुत्व था। प्रत्येक क़दम पर ये अपने को और दूसरी जातियों से श्रेष्ठ साबित करने के लिए लम्बी लम्बी रस्में अदा किया करते। इनका ज़्यादा समय ही इस प्रकार की लम्बी रस्मों में बीतता। स्वभाव से ही ये आरामतलब दीखते। घर के मामूली काम-काज के लिए मध्य श्रेणी के अमहारा भी घर में गाला, दनकाली वा निग्रो की भाँति दिखाई देने वाले दास दासी रखा करते। इनमें से कितने ही दास ख़रीदे हुए ग़ुलाम रहते।

गजाम प्रदेश में प्रवेश करने के बाद प्रायः प्रत्येक बड़े गाँव में इन अमहारों के कुछ घर मिला करते। इनमें कोई न कोई जमालहुसैन का परिचित अवश्य रहा करता। कितनी जगह अपने घर में टिकाने वाली औरतें मिलतीं। इनका परिचय देते हुए जमालहुसैन ने पहले दिन मुझसे कहा था कि वे सब 'होटल वाली' मालकिन हैं।

जमालहुसैन को अपने इन परिचितों का गर्व रहता। वे बड़े नाज़-नख़रे और पूरे अमहारा रीति-रस्म के साथ बैठ कर

उनके साथ तज और ताल्ला (अपने घरों में तैयार की गई शराब) पिया करते। वे मुझे भी अपने उस आनन्द में शरीक होने का निमंत्रण देते पर मुझे उससे बड़ी नफ़रत हो गई थी। जो दासी तज लाती वह पहले एक घूँट स्वयं पी लेती और इसके बाद वह सुराही सा दीखने वाला बर्तन मालकिन तथा अतिथियों के सामने रखा जाता। आगे चल कर मुझे पता चला कि अमहारा लोगों का अपने दास दासियों पर अविश्वास का रहना ही इस रस्म की नींव में है। मालिक-वर्ग को सदा यह डर बना रहता है कि उनके दास कहीं उन्हें विष न खिला दें इसी लिए जो चीज़ भी उनके सामने लाई जाती है उसे सबसे पहले लाने वाले से चखवाया जाता है।

तज का नशा चढ़ आने पर जमालहुसैन की बातें मस्ती से भरी हुई रहा करतीं। वे अक्सर ही मुझे अपनी पिछली यात्राओं का वर्णन और अपनी जवानी के संस्मरण सुनाया करते और जब मैं उनकी किसी बात पर अविश्वास किया करता तो अपने सामने बैठी अमहारा औरत से उसकी तसदीक़ कराया करते। औरतें उनकी बात की तसदीक़ करने के लिए हमेशा ही तैयार रहतीं।

'मैं तुम्हारे जैसा बुद्धू और बेवकूफ़ कभी नहीं रहा—' उनकी बातें इसी ढंग से आरंभ होतीं—'जवानी में यात्रा करते

समय मैंने जो मौज की है वह तुम ख़्वाब में भी नहीं देख सकते। सबसे बढ़िया ऊँट और टट्टू हमारा रहा करता। सबसे बढ़िया पीतल और चमकते हुए लोहे का गहना यहाँ की औरतों को मैं दिया करता। खारतूम से लाया हुआ मिट्टी के तेल का सेंट मैं लोगों को मुफ़्त दिया करता। तज और ताम्बा मेरे जितना कोई भी नहीं पी सकता और सबसे बहादुर मैं ही था। लड़कियाँ सबसे अधिक मुझे ही पसंद किया करतीं।

'मैं यहाँ के इलाके में अरबी डकैत के नाम से मशहूर था। और बड़ा दानी था। लोग मेरे नाम की चर्चा चलने पर कहा करते—'कौन जमालहुसैन? वही न जो अपना ऊँट एक बोतल शराब से बदलता है।' मैं यहाँ अपने देश से कहीं ज़्यादा मशहूर था। जवानी में मैंने किस चीज़ की लूट और डकैती नहीं की! ऊँट दिन दहाड़े छीन लेना तो मेरा बाँयें हाथ का खेल था। मैं औरतों की लूट किया करता था।

'बड़े बड़े अमहारा अफ़सर और प्रांतों के अधिपतियों से हमारी दोस्ती थी। हम लोग एक ही गिलास से तज पिया करते। लेकिन उनका खाना मैं पसन्द नहीं कर सकता। ये हरामी सिर्फ़ लाल मिर्च पानी में घोल कर घास के जैसी रोटी के साथ खाया करते हैं! और नमक कितना खाते हैं! तोबा!

तोबा ! औरतों के होंठ भी इसी वजह से कभी कभी तीते रहते थे ! थू ! थू ! तोबा ! तोबा !'

'लेकिन फिर भी तुम उनकी ही चोरी किया करते थे ?' मैं उन्हें टोक देता।

'चुप रह पाजी कहीं के ! मैं चोरी के लिए मशहूर नहीं।'

'डकैती ही सही !'

'चुप रहता है कि नहीं ! शैतान कहीं के। ये बातें भी कोई ऐलान करके कहता है !'

और वे उसी नशे में घर-मालकिन की गोद में अपना सर रख सो जाते।

२

गजाम की राजधानी डेबरा मारकोस की कल्पना करते समय जमालहुसैन के दिमाग़ पर बहुत कुछ बहिश्त का ख़ाका खिंच जाया करता।

'दुनिया में वैसी कोई भी चीज़ नहीं जो वहाँ नहीं मिलती हो—' वे कहा करते—'हमारे तिजारत के ख़याल से तो वह आदिस अबाबा से भी अच्छा शहर है। डेबरा मारकोस में आदमी मिट्टी बेच कर भी मालामाल हो जा सकता है।'

रसद का सब सामान वहाँ मिल जायगा इसी उम्मीद में

उन्होंने सब ख़र्च कर दिया। शराब की भी वहाँ कमी नहीं यह विश्वास दिला कर उन्होंने इटालियन शराब की बची बोतलें भी ख़र्च कर डालीं।

पर उनके हज़ार आशा दिलाते रहने पर भी डेबरा मार-कोस की पहली झलक से मुझे बड़ी निराशा हुई। शहर के बीच में इस सारे गज्जाम इलाक़े के मालिक—रास हयलू की गिब्बी (महल) थी। वहीं ईंटों के मकान थे; नहीं तो बाक़ी सब अबीसीनियन ढंग के बाँसों के बने और मिट्टी से पोते हुए अन्न रखने की बेढ़ियों के समान 'तुकुल' थे।

ऐसा ही एक तुकुल फ़ितूरारी (कर्नल) बीरू का भी था। जमालहुसैन के बहुत पुराने दोस्तों में ये थे इसी लिए हम लोग उनके ही यहाँ टिके।

साधारण बंदगी और कुशल-क्षेम में एक घंटा बिता चुकने पर उन्होंने तज पीने का निमंत्रण दिया। मुझे और सोफ़ी को अपने सामने बैठाया। हम दोनों ने नाहीं कर दी। यह उन्हें बुरा लगा और जमालहुसैन से उन्होंने कहा—

'इस प्रकार हमारी बेइज़्ज़ती करने का मतलब?'

मैंने उन्हें समझा कर कहा कि हमारे देश में लोग तज पीते ही नहीं, इसी लिए मुझे भी उसकी आदत नहीं—यदि कभी धोखे से पी लेता हूँ तो सर चकराने लगता है।

मेरी दलील सुन कर वे ज़ोरों से हँस पड़े और कहा—

'तज नहीं पीते तो वहाँ के धनी लोग जीते कैसे हैं ? मुझे तो एक दिन न मिले तो मैं ज़िन्दा न बचूँ। और लोग इतने कमज़ोर हैं कि उन्हें इससे चक्कर आने लगता है ? मैं तो चाहे जितना भी क्यों नहीं पीऊँ—पाँव भले ही डुलमुलाने लगें, लुढ़क पड़ूँगा पर चक्कर मुझे नहीं आयगा।'

उनमें और जमालहुसैन में पीने की बाज़ी लग चुकी थी। पर सोफ़ी की ओर देख कर उन्हें याद आया—

'लेकिन यह तो हमारे देश की है, यह क्यों नहीं पियेगी—इसे तो पीना ही पड़ेगा और अगर पीते-पीते लुढ़क भी पड़ी तो क्या हर्ज है ? यह मिट्टी का घड़ा तो नहीं कि टूट जायगी !'

मुझे पता नहीं तज पीने में सोफ़ी को क्या बाधा थी। पहले मैंने समझा शायद अपने देश के ओहदाधारियों के समान स्थान पर बैठने में उसे संकोच हो रहा है। पर यह धारणा तुरंत ही भूल मालूम पड़ने लगी। वह स्वच्छंदतापूर्वक खुल कर बातें कर रही थी। गजाम पहुँचने के बाद उसके बात करने का ताँता बहुत ही कम टूटता था।

'इसे तो तुमने तज न पीने की बड़ी बुरी आदत लगा दी—' फितूरारी कहने लगे— 'न पीकर यह हमारे ख़ान्दान में रहेगी कैसे ? इसे अभी ला कहाँ से रहे हो !'

'अपने मुल्क से—'

'लेकिन देखने में यह कितनी भद्दी है! देह पर गोश्त बहुत कम है। कम गोश्त का कोई भी जीव सुन्दर नहीं होता। चाहे वह मुर्ग़ी हो, बतक हो, बकरी, गाय वा आदमी ही क्यों न हो। ख़ास कर के औरतें तो जो मोटी न हों बड़ी ही भद्दी दीखती हैं। यह तो कुछ काम भी नहीं कर पाती होगी?'

'नहीं, काम तो ख़ूब करती है—' जमालहुसैन ने उसकी तारीफ़ करते हुए कहा—'टट्टुओं की बड़ी हिफ़ाज़त रखती है।'

'अजी वह भी कोई काम में काम है! इसका चेहरा ही क्यों नहीं देखते—देह पर तो गोश्त है ही नहीं!' सोफ़ी की बाँह टटोलते हुए उन्होंने कहा—'हमारे देश में इसे कोई भी नहीं पूछेगा। हम सिवा ख़ूब मोटी औरतों के और किसी को ख़ूबसूरत मान ही नहीं सकते। और सेंट लगाना इसको अब तक नहीं सिखाया?'

'सरकार!' सैादा बेचने वालों के जैसी ज़बान में जमाल-हुसैन ने कहा—'वैसी क़ीमती चीज़ हम बाँदियों को दे सकें यह हमारी हैसियत कहाँ! बड़ी मुश्किल से बचाते बचाते एक बोतल आपके लिए लेता आया हूँ।'

उन्होंने किरासन तेल का बोतल निकाला। फितूरारी ने उसमें से थोड़ा निकाल के पहले सूँघा फिर अपने कपड़ों पर

छिड़कते हुए उसकी तारीफ़ करने लगे। उन्होंने हमारे भी लगाना चाहा लेकिन मैं सख़्त एतराज करता रहा। उन्होंने जमालहुसैन से उनके कान में धीमे शब्दों में कहा––

'यह कैसा जंगली है—सेंट का भी इस्तेमाल नहीं जानता !'

सोफ़ी के ना-ना करते रहने पर भी उन्होंने थोड़ा उसके कपड़ों पर भी छिड़क ही दिया। सोफ़ी को किरासन तेल की गंध कुछ ख़राब लगी हो ऐसा दिखाई नहीं दिया। पर वह उसकी सुगंध की ओर से भी अन्यमनस्क थी।

शायद फ़ितूरारी द्वारा की गई उसके संबंध की टिप्पणी उसे इस समय खटक रही थी।

'सफ़र औरतों के लिए नहीं—' फ़ितूरारी ने कहा – 'इससे वे और भी दुबली हो जाती हैं। उनकी हालत ठीक माल लादे जानी वाली घोड़ियों जैसी हो जाती है—पाँव बाँस की तरह पतले हो जाते हैं और उनमें कोई दम नहीं रह जाता।'

जमालहुसैन ने हुँकारी भरी और तज की दूसरी सुराही मँगाने का प्रस्ताव किया। साथ ही फ़ितूरारी की पीठ ठोकते हुए कहा––

'तुम्हारे जैसे समझदार सारी दुनिया में इने-गिने हैं। इसी लिए तो हमारी तुम्हारी ख़ूब छनती है।'

'अभी कहाँ ?' फ़ितूरारी ने उत्तर दिया—'तुम आदिस में सब माल खपा कर लौट आओ तो देखना कैसी छनती है। मैंने अभी से सौ जानवर मोटे होने के लिए छोड़ दिये हैं।'

जमालहुसैन ने दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए कहा—

'इंशा अल्लाह—'

३

'तुम सोफ़ी को बेच दो—' जमालहुसैन ने मेरे कान में कहा। उसके मुँह से अभी भी तज की गंध आ रही थी। मैं उससे दो क़दम दूर जा खड़ा हुआ और बोला—

'तुम नशे में हो!'

'अजी नहीं, जमालहुसैन नशे में ऐसी काम की बातें नहीं कर सकता!'

'फ़ज़ूल की बातें कर रहे हो!'

'फ़ज़ूल की कैसे ? पहले मेरी पूरी बात तो सुन लो! मैंने तुम्हारी इतनी मदद की। वैसे रास्ते से तुम्हें ले आया जहाँ कोई भी विदेशी अकेले पाँव रखने की हिम्मत नहीं कर सकता। मेरी इतनी बड़ी सेवा के लिए तुम्हें कुछ तो अच्छी बख़्शीश देनी चाहिए। अब मैं छोटी सी चीज़—सोफ़ी—तुम से माँग रहा हूँ और तुम इसे फ़ज़ूल की बात कहते हो।'

'सोफ़ी के लेकर तुम क्या करोगे ?'

'अब तुम ठीक रास्ते पर आये।' एक क़दम आगे आ वह कहने लगा—'पहले तो अभी नक़द दे कोड़ी रियाल उसके लिए फ़ितूरारी से मिल जायँगे। मैं सच कहता हूँ—और यह भी समझो मैं बहुत तजुर्बेकार आदमी हूँ—यह दाम तुम्हें सारे अबीसीनिया ही क्यों, मिस्र में भी मुश्किल से मिलता। आख़िर, सोफ़ी में रखा ही क्या है ? दो कोड़ी रियाल में चार ऊँट ख़रीदे जा सकते हैं और आदिस अबेबा में दे कोड़ी बोतलें विलायती शराब की उस दाम में मिल जायँगी। कहो मेरा हिसाब दुरुस्त नहीं ?'

'अभी भी तुम बेकार की बातें कर रहे हो।' मैंने झुँझला कर कहा—

'अगर तुम मुझे सोफ़ी के यों नहीं देना चाहते तो उसे मेरे हाथ बेच दो—इसके बाद मैं आगे निबट लूँगा।'

'फिर यह निबटना कैसा ?'

'सब तुम अभी जान जाओगे ? यह दो दिली दोस्तों के बीच की बात है। मैं उससे निकाह कर लूँगा।'

मैं सारी बातें समझ गया। अब तक जिस बात के मेरी धाक की वजह से वह खुल कर नहीं कह पाता था उसे ही तज पीने पर निकलने का मौक़ा मिला था।

'सोफ़ी ख़रीद-बिक्री की चीज़ नहीं—' मैंने उसे वहाँ से टालने की ग़रज़ से कहा।

'फिर कैसी चीज़ है ? क्या तुम उसी से निकाह करके सारी ज़िन्दगी बसर करोगे ?' मेरी ठोड़ी पकड़ उसने कहा—'ये बड़ी ही बेवफ़ा होती हैं—आदिस पहुँच कर देखना यह कभी भी जो तुम्हारी हो। अबीसीनियन औरतों की ख़ास सिफ़त यही होती है कि जो उन्हें अधिक दिन तक मुहब्बत करता रह जाये उसे वे ज़हर दे देती हैं। इसी लिए उनके साथ हफ़्ते दो हफ़्ते से ज़्यादा कोई ताल्लुक़ नहीं रखना चाहिए। यदि तुम ये सब बातें नहीं जानते तो मुझसे सीखो।'

'यह सब मैं नहीं सुनना चाहता !'

'तो झेलोगे। जमाल का कहना जो नहीं मानता वह झेलता है—रेगिस्तान में प्यास से तड़प तड़प कर मरने से भी बुरी मौत उसकी होती है।'

'ख़ैर, वैसा मौक़ा आयगा तो देख लिया जायगा—' कह कर मैं स्वयं वहाँ से टलने लगा, पर उसने मेरा हाथ पकड़ मुझे खड़ा रखा और अब कुछ धमकी देते हुए कहा—

'वह मौक़ा आयगा नहीं—बल्कि आ गया है। इस छोटी सोफ़ी के लिए तुम्हारी दोस्ती मेरे साथ ख़तम हो जाये, यह बहुत ख़राब होगा। तुम हरगिज़ आदिस अबेबा अकेले नहीं पहुँच सकते।'

'वहाँ मुझे पहुँचाने का दाम अब तुमने बहुत अधिक बढ़ा दिया है।'

'इसे तुम अधिक दाम की समझते हो?' उसने मेरा मख़ौल उड़ाने जैसी हँसी दिखाते हुए कहा—'आदिस में मैं तुम्हें इससे कहीं अच्छी-बहिश्त की हूरों की शक्ल की ढूँढ़ दूँगा। सोफ़ी की यहाँ ही क़ीमत है, आदिस में कुछ भी नहीं लगेगी। उसे तो तुम्हें बेचना ही पड़ेगा।'

'मैं राज़ी नहीं।'

'तब हमारी-तुम्हारी...'

उसके वाक्य पूरा करने के पहले ही फ़ितूरारी उसे पकड़ कर और भी तज पिलाने ले गये।

४

अगले दिन मैं आगे के रास्ते के लिए रसद जुटाने की फ़िराक़ में निकला। जमालहुसैन उस समय भी तज के नशे में थे, उनसे इस मामले में कोई मदद मिल नहीं सकती थी। मैं अपने साथ ख़लीफ़ा और सोफ़ी को लेकर 'शहर' के मुख्य बाज़ार में गया।

जितनी दूकानें रास्ते के किनारे और मैदान में बिछी थीं उनमें नमक, लाल मिर्च और जव के सिवा ख़रीदने की और

फा० १४

कोई चीज़ नहीं थी। किसी-किसी दूकान में लोग 'अंजीरा' (अबीसीनियन ढंग की रोटी) बेच रहे थे पर उसे खाने की तो बात ही दूर रही उसकी बू से ही मेरी तबीयत घबरा जाती थी।

कम से कम एक हफ़्ते भर के लिए मुझे रसद की ज़रूरत थी। शहर में विदेशियों की दूकान के बारे में दरियाफ़्त करने पर पता चला कि वैसी वहाँ एक भी नहीं थी। जिन दुकुलों की सूरत-शक्ल बाहर से दूकान जैसी दिखाई दी उनके भीतर घुसने पर पता चला कि वे बदचलन औरतों से बसी हैं और सिर्फ़ तज और ताल्ला वहाँ बेचा जाता है।

बहुत छान-बीन करने पर चना और मकई मिला। फ़ितूरारी ने सावाँ जैसे अन्न का आटा दिया। मुर्ग़ और बकरे हम जितने भी साथ लेना चाहते वे देने को तैयार थे। तज और ताल्ला से भरे घड़े वे न चाहने पर भी साथ लगा ही देते।

ये तैयारियाँ पूरी हो गईं पर जमालहुसैन वा उनके साथी डैबरा मारकोस से डेरा उठाना नहीं चाहते थे। पहले दिन तो वे नशे में इतने चूर थे कि उनसे बात करना ही बेकार था। दूसरे दिन सबेरे उन्होंने मेरे टट्टू और ऊँट दूर जंगल में चरने के लिए भेज दिये जिनके लाते-लाते ही बारह बज गये। तीसरे दिन हम लोग फिर रवाना होना चाहते थे पर

जमालहुसैन हमें आगे के रास्ते में चोरों का भय दिखाने लगे। जब उनका यह डर मैं अपनी बंदूक़ दिखा कर दूर करने लगा तो वे अबाई नदी की बाढ़, उसके मगर, वहाँ के साँप और और भी कितने तरह के जानवरों का डर दिखाने लगे। दलील उनकी कोई भी नहीं टिकती, यह भी वे स्वयं समझते थे। इसी लिए तीसरे दिन बहुत तंग करने पर उन्होंने स्पष्ट कहा—

'तुम्हें जल्दी पड़ी हो तो तुम अकेले आगे जा सकते हो। हम अरब उस तरह की जल्दबाज़ी में सफ़र नहीं किया करते। हम लोग तीन बार रवाना होने के लिए उठते हैं लेकिन असली रवानगी चौथी बार हुआ करती है।'

किसी क़दर पाँचवें दिन हम वहाँ से रवाना हुए।

५

पहाड़ों की ऊँची-ऊँची श्रृंखलाओं से हमारा पीछा नहीं छूट रहा था। सामने देख कर हम अन्दाज़ लगाते—बस, इसी पहाड़ के बाद हमें मैदान मिलेंगे, लेकिन मैदान की कौन कहे, उस पहाड़ को पार करते ही और भी पचीसों ऊँची-ऊँची चोटियाँ दिखाई देने लगतीं। कभी-कभी तो हमें समुद्र की सतह से पन्द्रह हज़ार फ़ीट की ऊँचाई पर रात बितानी पड़ती।

इन दिनों वर्षा भी आरम्भ हो गई थी। रास्ते की दिक़्क़तें

इससे बढ़ गईं लेकिन एक बड़ा फ़ायदा यह हुआ कि सामने के पहाड़ त्साना प्रदेश के पहाड़ों की तरह सजीव दीखते और दृश्य मिनट-मिनट बदलते रहने से तबियत ऊबा नहीं करती। सामने जिस किसी चीज़ पर भी क्यों न नज़र जाती वह धुली हुई सी दिखाई देती।

अब तंबुओं में रात बिताना कुछ कठिन अवश्य हो रहा था पर फिर भी यह संभव था। लेकिन जमालहुसैन को यह पसंद नहीं आता था। रात को सर्दी के समय तंबू में कंबल ओढ़ कर सोने की अपेक्षा गाला अथवा अमहारा लोगों के तुकुल में रात बिताना वे अधिक पसंद करते। वहाँ आग भी जलाई जाती जिसके धूँएँ से रात भर तबाह रहना पड़ता।

मुझसे उनकी बातचीत भी बंद सी हो चली थी। एक दिन उन्होंने साफ़ कहा भी—

'अब दोस्ती कैसी ? तुम्हारे पास इटालियन शराब है नहीं और सोफ़ी को मेरे सुपुर्द करने के लिए तुम तैयार नहीं।'

फिर भी हम लोगों का साथ नहीं छूट रहा था, इसका कारण यह था कि मुझे रास्ता दिखाने वाले की ज़रूरत थी और उन्हें चोरों के आक्रमण के समय मेरी बंदूक़ की मदद की उम्मीद थी।

हमारी यात्रा की रफ़्तार पहले की अपेक्षा धीमी हो जाने

पर भी हम अपेक्षाकृत जल्दी, और ख़ास बात यह थी कि निरापद अबाई नदी (यह त्साना झील से निकली है और आगे चल कर इसी का नाम नीली नील पड़ गया है) के किनारे जा पहुँचे। पहाड़ों में वर्षा आरंभ हो जाने के कारण नदी का पाट काशी की गंगा जितना चौड़ा हो गया था। पर यह वैसा ख़तरनाक नहीं। नदी के बीच में भी पानी की गहराई कमर भर से ज़्यादा नहीं थी, पर धार अवश्य ही तेज़ थी। पाँवों के नीचे के पत्थर भी बहुत ऊँचे-नीचे बिछे थे जिन पर पाँव टिका पाना बड़ा कठिन होता था।

पर यहाँ के पहाड़ी और जगहों के पहाड़ियों के समान पानी से डरने वाले नहीं थे। वे दो-दो वा तीन-तीन आदमी एक साथ हो जाते और एक-दूसरे का हाथ जकड़ कर पकड़े हुए नदी पार कर जाते। टट्टू पर पार करने की अपेक्षा इसी भाँति नदी पार करना मैंने अधिक आसान समझा।

हम लोग इस प्रदेश के लिए अजनबी आदमी थे इसलिए हमारा पार उतरना देखने के लिए पास के गाँवों से बहुतेरे आदमी किनारे पर आ इकट्ठे हुए थे। उनसे बात करने पर यह भी अन्दाज़ मिला कि थोड़ी बख़शीश में ही वे हमें निरापद पार उतार देंगे। पर वे हमें नदी पार करते समय लूटने के लिए तैयार होकर न आये हों यही संदेह मेरे भीतर से दूर नहीं

हो रहा था, उनके द्वारा निरापद पार कराये जाने की बात तो मैं सोच भी नहीं सकता था।

जमालहुसैन पानी से डरने का बहाना कर पीछे रह गया। वह पहले हमें पार उतरा देख कर फिर पानी में उतरना चाहता था। हमारा एक जबनियाँ उस पार चला गया था और दूसरा घड़ियालों को देखते रहने का और उनसे हमें बचाने का मौक़ा न आ जाय, यह सोच कर इसी पार रहा। ऊँट और पूरी रसद उस पार पहुँचाई जा चुकी थी। मैं भी दो गाला लोगों को साथ ले पानी में उतरा। अपने बर्छे से वे पानी की थाह लेते और मुझे सहारा देते चलते। मुझसे कुछ क़दम आगे सोफ़ी थी। वह टट्टू पर थी और उसके दोनों तरफ़ जमालहुसैन के ऊँटों के दो रखवाले थे।

बीच नदी तक हम हँसते-खेलते पहुँच गये। कोई भी मगर नज़र नहीं आया। पर इसी समय जिस किनारे से हम चले थे वहाँ ज़ोरों से मेरी बंदूक़ की आवाज़ हुई। गोली मेरे कान के पास से सनसनाती निकल गई। चौंक कर मैंने पीछे देखा—बंदूक़ जमालहुसैन के हाथ में थी।

'डरो नहीं, घड़ियाल भगा रहा हूँ।' जमाल ने चिल्ला कर कहा।

उसके जो साथी सोफ़ी के साथ थे उन्होंने धमाका सुनते ही

टट्टू छोड़ दिया और 'घड़ियाल--घड़ियाल—' करते हुए एक ओर भागे। जाते-जाते वे सोफ़ी के टट्टू को भी भड़काते गये। वह उससे नीचे उतर आई। पर उसके पाँव तेज़ धार में नहीं टिक सके। टट्टू की लग़ाम अभी भी उसके हाथ में थी। अगल-बग़ल के आदमी अभी भी चिल्ला रहे थे।

उन्हें मना करने के पहले ही मैंने देखा—आगे-आगे टट्टू और उसके पीछे-पीछे सोफ़ी प्रवाह में बहने लगी।

'बह गई! वह गई!' मेरे दोनों ओर के गाला चिल्ला चिल्ला कर मुझे उधर दिखाने लगे। किनारे खड़े लोग भी हल्ला करने लगे।

'अब वह गई। नहीं बचेगी!' गाला लोगों ने इशारे से मुझे समझाया। उनका हाथ छोड़ कर मैं सोफ़ी को पकड़ने के लिए आगे बढ़ा। मेरे पाँव भी अब टिके नहीं रहे। मैं तैरने लगा। डर डूबने का नहीं बल्कि पानी में छिपी हुई चट्टानों से टकरा जाने का था।

ऐसी कई चट्टानें सामने दाँत बाये खड़ी थीं।

६

बहुत दूर तक बह जाने पर भी मैं सोफ़ी को नहीं पकड़ पाया। किनारा अभी भी दूर था। पत्थरों से

वह अपने को बचा लेती थी इससे मैंने समझा वह तैरना जानती है।

उसके निकट पहुँचने पर देखा वह ऊब-डूब कर रही थी। मुझे देख हाथ उठा उसने कुछ इशारा भी करना चाहा पर मैं उसे समझ नहीं सका। बड़ी सी चट्टान ठीक सामने आठ-दस गज़ की दूरी पर दिखाई दी। 'अगर मैं लपक कर नहीं पकड़ूँगा तो वह टकरा जायगी—' मेरे मन में उठा और साथ ही मैं लपका भी। इस समय टट्टू मेरे अधिक निकट था, मैंने उसकी लगाम पकड़ ली। पानी यहाँ अधिक नहीं था। टट्टू खड़ा हो गया।

सोफ़ी इतने कम पानी में भी डूबती सी दिखाई दे रही थी इससे मुझे आश्चर्य हुआ। पर उसका प्रवाह के साथ बहना रुक गया था। मैंने उसके बाल पकड़ कर खींचे। फिर भी उसने मेरी ओर मुँह नहीं फेरा। मटमैले रंग के पानी में कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। पर टट्टू के छटपट करने के साथ-साथ सोफ़ी का छटपटाना देख मैंने उसे गोद में ऊपर उठाया। उसका पाँव टट्टू के अबीसीनियन ज़ीन की एक रस्सी में उलझ गया था। उसे छुड़ा कर टट्टू और सोफ़ी दोनों को किनारे लाया। सौभाग्यवश इस स्थान पर धार वैसी तेज़ नहीं थी।

किनारे पर लाते ही वह लोट गई। मुझे भय होने

लगा। मैंने उसकी नाड़ी टटोली। उसने छोड़ देने और रुकने का इशारा किया। उसके अंग में कहीं-कहीं पर चोट आ गई थी और वह पानी भी बहुत पी गई थी। वह देर तक आँखें बंद कर लेटी रही।

टट्टू हाँफ रहा था। उसे चला कर देखा—पाँव में कोई ज़ख़्म नहीं आया था। उसे मैंने एक पेड़ से बाँध दिया।

फिर सोफ़ी की ओर लौटते समय वह, अबाई और ऊँचे-ऊँचे पहाड़—तीनों एक दृष्टि में ही सामने पड़े।

ये अफ़्रिका के पहाड़, यह अफ़्रिका की नदी और यह अफ़्रिका की रहने वाली है। संसार के इस हिस्से में तो निष्ठुरता ही अकंटक राज्य करती है फिर ये पहाड़ी नदियाँ भी लोगों को सताने से क्यों बाज़ आयें? और इन प्राणियों का मूल्य ही क्या है? मर गये तो मर गये, बच गये तो बच गये। यहाँ कौन किसकी खोज रखता है?

कई घंटे बाद भली भाँति स्वस्थ होने पर उसने पहला प्रश्न किया—'और टट्टू?'

मानो टट्टुओं की क़ीमत उसकी जान की क़ीमत से अधिक होती है।

मैंने उसे पेड़ से बँधा दिखाया। वह साथ चलने के लिए उठ खड़ी हुई पर पाँवों पर बोझ पड़ते ही उसे पता चला

कि वहाँ मोच आ गई है। मैंने उसे टट्टू पर बिठा दिया। हम अबाई की धारा के प्रतिकूल उसके किनारे-किनारे अपने कारवान की ओर चले।

थोड़ी दूर पर एक तुकुल दिखाई दिया। 'यहाँ अमहारा बसते हैं—' मैंने मन ही मन निश्चय किया। फिर सोफ़ी की ओर दृष्टि गई।

वह इस समय मुसकरा रही थी।

७

इस स्थान पर नदी पेच खाती गई थी। थोड़ी दूर के फ़ासले में ही उसमें बहुत से घुमाव आ गये थे। किनारे पहाड़ की तरह सीधे तन कर खड़े थे, जहाँ कुछ समतल सा भी था वहाँ काँटे और जंगल थे जिस कारण किनारे-किनारे कोई रास्ता नहीं था। हमें बड़ी सावधानी से नदी के घुमाव का अन्दाज़ा लगाते हुए पीछे लौटना पड़ा।

कारवान के पास पहुँचते-पहुँचते कई घंटों की देर हो गई। इस समय तक हमारे मर जाने में किसी को भी सन्देह नहीं रह गया था। जमालहुसैन तो शायद हमारी लाश सूडान के बहर एल अजरान (नीली नील का अरबी नाम) में उतराती देखने लगे थे। उसके आगे वे कभी गये नहीं थे, उनकी

दुनिया की सीमा वहीं समाप्त हो जाती थी इसलिए और अधिक दूर बह जाने का वे अनुमान नहीं लगा सकते थे।

अबीसीनियन लोगों की दुनिया और भी छोटी थी। उसका दायरा अधिक से अधिक छोटी अबाई के संगम तक पहुँचता था—इसलिए उनका हमें उस दुनिया के पार पहुँच गया समझ लेना स्वाभाविक ही था। ये ख़तरे का आह्वान कर उसमें मज़ा लेने वाले लोग नहीं होते। उन्होंने अबाई में उस प्रकार फँस कर ज़िन्दा निकलते टट्टुओं तक को भी नहीं देखा था फिर आदमियों के बारे में तो संदेह की कोई गुंजायश ही नहीं थी।

जो गाला हमें पार उतरने में मदद पहुँचाने आये थे उनकी कल्पना में हम लोग कब के घड़ियाल के पेट में पहुँच चुके थे और अब मिट्टी भी बनने लगे थे।

यदि अँधेरा हो जाने पर हम लौटते तब तो इन सब लोगों ने हमें वास्तव में ही भूत बन कर आया हुआ मान लिया होता। हमारे भाग्य से इस समय तीसरा पहर था इसलिए हमारे ज़िन्दा लौट आने में उनके संदेह करने की कोई गुंजायश नहीं रह गई थी।

जिस समय हम पहुँचे हमारी सम्पत्ति का बाँट-बखड़ा लग रहा था। ऊँट, टट्टू और रसद के बाँट लेने में कुछ अधिक

झंझट नहीं लेकिन बंदूक़ों का मामला लेकर कठिन समस्या आ उपस्थित हुई थी। उसके वारिस चार निकल आये थे लेकिन बंदूक़ें सिर्फ़ दो थीं। आख़िर में वे यह तय कर रहे थे कि क्यों न उसके पुर्ज़े-पुर्ज़े अलग कर दिये जायँ और तौल कर बराबर बराबर बाँट लिया जाय। यह तरकीब जिस गाला ने हमें पार उतारने का बीड़ा उठाया था उसके दिमाग़ की उपज थी। यह आसपास की बस्तियों में सबसे अधिक होशियार गिना जाता था और लोग इसे माथाअली कह कर पुकारते थे।

हमारे कारवान के पास पहुँचने पर उसी की दृष्टि सब से पहले हमारी ओर गई। हमें देखते ही उसका रंग, स्याह तो पहले से था ही, इस समय आबनूस से भी बदतर दीखने लगा। वह चुप हो अपने स्थान पर बैठा रहा।

हमारी जमात के नौकर आकर मेरे पाँव पर लोटने लगे। मैंने उन्हें सब सामान तुरंत लादने के लिए कहा। वे सन्नाटे में आ गये। जमालहुसैन ने इसका सब से पहले विरोध किया। वे वह रात उसी स्थान पर बिताने के पक्ष में थे, पर मुझे भय था। भय सबसे अधिक गाँव वालों का था, मैंने यह अकेले जमालहुसैन के कान में कहा। उन्होंने पुरानी अरबी कहावत दुहराते हुए कहा—'ख़ुदा में एतबार रखो और ऊँटों की टाँग में रस्सी बाँधे रहो—सब ठीक से निबह जायगा।'

अब जमालहुसैन पर मेरा विश्वास नहीं रह गया था इस-लिए वहाँ से डेरा कूच करने पर मैं ज़ोर देता रहा। इस बार उसने कहा—

'लेकिन आगे का तो मैं रास्ता जानता ही नहीं—'

बात शायद सच थी। मुझे याद आया कि जिन दिनों हमारी उनकी ख़ूब बनती थी उस समय भी अपनी दुनिया की सरहद वे अबाई नदी तक ही बतलाया करते थे।

बहुत कोशिश करने पर माथाअली हमें रास्ता दिखाने के लिए तैयार हुए। वे भी अपने इलाक़े से बहुत दूर तक नहीं गये थे फिर भी आदिस अबेबा की ओर का तीन दिन का रास्ता वे जानते थे और उनके कथनानुसार चौथे दिन आदमी आदिस अबेबा पहुँच जा सकता था। वहाँ पर और जितने लोग थे उनमें किसी को भी एक दिन का भी आगे का रास्ता मालूम नहीं था।

माथाअली मिहनताने के लिए एक ऊँट चाहते थे। तीन दिन का रास्ता पार कर चुकने पर एक ऊँट उन्हें देना हम लोगों ने स्वीकार कर लिया। शहर तक जाने के लिए वे किसी भी हालत में तैयार नहीं थे; क्योंकि डर था कि वहाँ लोग उन्हें पकड़ कर ग़ुलाम बना लेंगे और तब उन्हें चीते के समान दीखने वाले ख़ूँख़ार फ़िरंगियों के सामने डाल देंगे—जहाँ इनका

भाला काम नहीं दे सकता और ये उस विचित्र चीते द्वारा कच्चे चबा डाले जायँगे।

बात पक्की हो जाने पर उनकी भी राय हुई कि उसी समय कूच करना चाहिए। इन्हें डर था कि अगर अबाई के किनारे वे टिके तो अनिष्ट से किसी भी प्रकार एक आदमी भी ज़िन्दा नहीं बच सकता। ये जानते थे कि नदी में रहने वाले मगरों को टट्टू और ऊँट के गोश्त बहुत अच्छे लगते हैं इसलिए वे इनकी गंध पाकर ज़रूर आयँगे और आधी रात को इन जानवरों के साथ आदमियों को भी टाँग पकड़ कर खींच ले जायँगे। उनके कथनानुसार वहाँ से दो घंटे के रास्ते पर हमें फिर पानी मिल सकता था।

रास्ता दिखाने वाले के तैयार होते ही किसी को आगे बढ़ने में हिचक नहीं रह गई। डेरा कूच करते-करते जमाल-हुसैन ने मेरा हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा—

'तुमने आज भारी ग़लती की थी। सोफ़ी की क्या क़ीमत थी कि उसके पीछे तुम अपनी जान देने गये? मैं तो तुम्हें हज़ार मना करता रहा, तुमने हमारी एक भी नहीं सुनी। हमेशा हमारी सलाह मानते रहोगे तो हमारी तरह बहुत दिन तक ज़िन्दा रहोगे—किसी को ख़तरे में देख कर उसके पास कभी न फटकना, नहीं तो मौत आती है।'

'ख़ैर—' कह के मैं चुप रह गया।

'अलहम्‌दोलिल्लाह (ख़ुदा को धन्यवाद), तुम ज़िन्दा सही-सलामत लौट आये इससे मुझे कितनी ख़ुशी हुई तुम्हें क्या बतलाऊँ। तुम्हारी ग़मी में, मैं सच कहता हूँ, आज मुझे ताला ज़रा भी अच्छी नहीं लगती।'

'ख़ैर—अब तो बीत गया!' मैंने सोफ़ी की ओर देखते हुए उत्तर दिया।

'इंशाअल्लाह! अब तुम सही-सलामत आदिस अबेबा पहुँच जाओगे और बहुत दिन जिओगे।'

थोड़ा आगे बढ़ने पर अपने ऊँट पर से झूमते हुए उन्होंने कहा—

'आज अगर तुम्हारे पास लाल इटालियन बोतलें होतीं तो फिर हम यह ख़ुशी कितनी अच्छी तरह मनाते!'

सिर्फ़ काप्री की याद आ जाने पर देखते-देखते उनके मुँह से लम्बी लार टपक कर उनकी दाढ़ी पर आ अटकी।

सोफ़ी खिलखिला पड़ी। मैं उसका वह चेहरा अवाक् हो देखने लगा। उसकी इस समय की हँसी जंगली झरने जैसी स्वच्छ, निर्मल, स्वच्छंद दीखी। उसके वास्तविक सौन्दर्य पर शायद उसी मुहूर्त पहले-पहल मेरी दृष्टि पड़ी थी।

मन ही मन मैं उसकी खिले फूल से तुलना करने लगा।

दनकाली

१

नये फूल को हब्शी आदिस अबेबा कहते हैं। हमें आशा थी कि वह तीसरे दिन दिखाई देगा। बड़ी उत्सुकतापूर्वक हम उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। पर तीसरे दिन जो आँखों के सामने आया उसे देख कर हमें अवाक् और हतबुद्धि हो खड़े रह जाना पड़ा।

जो दृश्य हमारे सामने था उसे न देखे रहने के ही कारण हमें अम्बा प्रदेश वैसा शुष्क दिखाई दिया था। इसकी तुलना में अम्बा को भी आबाद की गिनती में लेना पड़ेगा।

जहाँ तक दृष्टि जाती वहाँ तक राख के रंग की भूमि कहीं घुटने, कहीं कमर, कहीं पोरसा भर कुरेदी हुई दीखती। आदमियों में ताक़त नहीं कि वे इस भाँति ज्वालामुखी के पत्थरों को कुरेद सकते। शायद स्वयं प्रकृति की ही ध्वंस-शक्ति के

साथ कुश्ती हुई थी और उसी के चिह्न-स्वरूप यह अखाड़ा बन गया था; विजय ध्वंस की ही हुई होगी।

पाँवों तले स्लेट के जैसे पत्थर थे जिन पर चलते समय 'खन···खन···' की आवाज़ हुआ करती। इन पर चलते समय टट्टू और ऊँट तक तलमलाने लगते। माल लदे टट्टुओं में से कई उलट गये। एक की यहीं मौत भी हो गई।

धूप भी बहुत सख़्त थी। रेगिस्तान की धूप से भी इसमें ज़्यादा आग थी। हम लोग उसी में ज़िन्दे उबाले जा रहे थे। इच्छा रखने पर भी कहीं पर विश्राम लेना असंभव था, क्योंकि फिर संध्या के पहले हम किसी वैसे स्थान पर नहीं पहुँच पाते जहाँ हमें पानी मिलता।

इस क़दर गरमी का सामना मुझे उस दिन जीवन में पहले-पहल ही करना पड़ रहा था। इसकी तुलना में अपने यहाँ की ज्येष्ठ वैशाख की लू के दिन सर्दी के मौसिम गिने जायँगे। इसी धूप से यहाँ की सारी चीज़ें जलकर ख़ाक हो गई थीं। एक भी हरे पत्ते का कहीं नामो निशान नहीं था। यदि कहीं पौधे की शक्ल का कुछ दीखता भी तो वह था बबूल की तरह काँटों वाला सूखा ठूँठा दरख़्त। काटने से उसका मर्मस्थल तक सूखा हुआ ही मिलता। ये उगे हुए थे सिर्फ़ हम लोगों के रास्ते में और भी अधिक

बाधा डालने के लिए। आदमी का कहीं नामो-निशान भी नहीं था।

'कहीं हम रास्ता तो नहीं भूल गये हैं?' मेरे मन में बार-बार उठता, पर यदि भूल भी गये हों तो भी कोई चारा नहीं था। इस प्रदेश के गाँवों के नाम भी नक़्शे में नहीं दिये गये थे जिनसे कुछ पता लगा पाते कि हम अमुक गाँव में हैं।

यही संदेह जमालहुसैन को भी हुआ। उनके पूछने पर हमारे गाला पथप्रदर्शक ने इतमीनान के साथ उत्तर दिया—

'पहली यात्रा में ये स्थान हमें यहाँ पर नहीं मिले थे।' शायद उसका ख़याल था कि ये स्थान इस बीच और कहीं से उठ कर चले आये हैं।

मुझे विश्वास हो गया कि हम रास्ता भूल गये हैं। पर पीछे भी नहीं लौट सकता था। पानी हमने जहाँ पर छोड़ा था वह वहाँ से डेढ़ दिन का रास्ता था और हमारे साथ में एक बूँद भी पानी नहीं रह गया था। 'अभी आगे दो घंटे के रास्ते पर पानी मिलेगा'—इसी का विश्वास दिलाता हुआ हमें माथाअली वहाँ तक लेता चला आया था।

अब उसकी नीयत पर भी हमें अविश्वास होने लगा। प्यास के मारे गला सूखा जाता था। दो बजते-बजते आँखों के सामने अँधेरा छाने लगा। मैंने आँखें मूँद लीं। कुछ

देर बाद तीन चार आदमी एक साथ अरबी, अमहारिक और गाला ज़बान में बोलने की कोशिश करने लगे तो मैंने आँखें खोलीं। जमालहुसैन से पूछने पर पता चला कि हम लोग दनकाली रेगिस्तान के रास्ते पर जा रहे थे।

सब लोग एक साथ ही माथाअली पर बिगड़े। मार डाले जाने की धमकी देने पर उसने ठीक दो घंटे के भीतर पानी के अड्डे पर पहुँचा देने का वादा किया।

इस बार सौभाग्यवश उसका घंटा बहुत लम्बा नहीं साबित हुआ। दूर से मिट्टी की बनी कमर भर ऊँची वीरान हुई सी दो-चार दीवारें दिखाई पड़ीं। उन्हें दिखाते हुए माथा-अली ने कहा—

'वहाँ पर पानी ज़रूर है लेकिन वह दनकालियों के टिकने की जगह है। हमें देखते ही वे बर्छा फेंक कर हमें मार डालेंगे।'

प्यासे मरने की अपेक्षा बर्छे से मरना उस समय मैं कहीं अधिक पसंद करता। हमारे साथ के लोगों में दनकालियों के भय से खलबली मच गई थी। वैसे ही वे उनका नाम सुन कर काँप जाते थे, इस समय तो हमें उनका सामना करना था। मैंने जीवन में कभी दनकाली देखे नहीं थे पर फिर भी उनके बर्छे की अपेक्षा अपनी बंदूक़ और रिवाल्वर में ज़्यादा ताक़त मानता था इसलिए बहुत कुछ निश्चिंत था।

ज्यों ज्यों वह स्थान नज़दीक आता जाता, हमारे साथी जल्दी जल्दी--'या अल्लाह--या अल्लाह' जपते जाते। गला बिलकुल सूख जाने के कारण यह आवाज़ उनके मुँह से बड़ी धीमी और अस्पष्ट रूप में निकल रही थी।

२

हमारे सामने का सोता बहुत छोटा था। पत्थरों के बीच में एक छोटा सा गड़हा था; उसी से पानी बुदबुदा रहा था। पानी इतने धीरे धीरे निकल रहा था कि एक छोटी सी बाल्टी के भरने में पहर बीत जाता। इस रेगिस्तान में यही मिला, इतना ही बहुत था। हम लोग अपने को इसके लिए भाग्यशाली समझने लगे।

सोते के आसपास उसी के पानी से सींचे जाकर कुछ पौधे उग आये थे। उनमें पत्ते लगे थे और वे हरे दीखते थे। इस समय इन जंगली पौधों को ही हम लोग संसार का सब से सुन्दर पौधा मान लेने के लिए तैयार थे।

इन पौधों की छाया में कुछ आदमी बैठे थे। इस शक्ल में भी आदमी हो सकते हैं यह पहचानने में ज़रा देर लगती थी। इनके अङ्ग सूख कर काँटे हो रहे थे। बिना किसी प्रकार की भूल की आशंका किये उनके देह के प्रत्येक अङ्ग की

हड्डियाँ गिन ली जा सकती थीं। जिनकी उम्र ज़रा कम दीखती थी उनके चमड़ों में भी सिकुड़न आ गई थी और किसी किसी के तो झूलने तक लगे थे।

अङ्ग पर वस्त्र का एक चिट भी नहीं। सितुहे और कौड़ियों में छेद कर सूखी लताओं से उन्हें गूँथ वे कमर में पहने थे—इसी से उनकी जितनी लज्जा निवारण होने का अनुमान किया जा सकता था हो रही थी। इसी प्रकार के सितुहे और कौड़ियों की मालाएँ उनके गले में भी झूल रही थीं। इस समय ये जव सा एक प्रकार का अन्न बाँये हाथ में लिये दाँये हाथ से एक एक दाना ले पक्षियों के जैसा चुगते जा रहे थे। अपने अपने बर्छे उन्होंने अपने पास रख दिये थे जिन्हें वे बड़ी आसानी से तुरंत उठा ले सकते थे।

हमारे साथ के लोग उन बैठे हुए लोगों से थोड़ी दूरी पर ही रुक गये और कानाफूसी की आवाज़ में कहने लगे—

'दनकाली! दनकाली बैठे हैं!'

ये दनकाली साक्षात् भूत से दीखते भी थे, इसी लिए उनसे भयभीत होना भी स्वाभाविक ही था। प्रकृति के कठोरतम आघात बर्दाश्त करते करते उनके चेहरे अत्यन्त निष्ठुर बन गये थे। 'दया' अथवा 'कोमल हृदय' नाम की भी कोई चीज़ मनुष्यों के भीतर होती है इसका उनकी कल्पना में भी अनुमान करा

देना असंभव था। ये वास्तव में ही भूख और दरिद्रता के मारे ख़ूंख़ार बन रहे थे।

इनके घर-द्वार कहीं नहीं हुआ करते। ये रेगिस्तान में ही इधर उधर मारे मारे फिरते हैं। किसी किसी के पास कारवान वा गाला लोगों से लूट कर लाये गये ऊँट वा टट्टू मिलते हैं, पर ये जानवर भी इन आदमियों की ही हालत में रहते हैं और उनके जीवन की मियाद अधिक नहीं हुआ करती।

घास और चुगने के लिए दानों की तलाश में ये दनकाली सदा घूमते रहते हैं और मौक़ा मिलने पर अपेक्षाकृत उपजाऊ इलाक़ों पर धावा बोल दिया करते हैं। उनकी आपस की लड़ाइयाँ पानी के झरनों पर क़ब्ज़ा करने के लिए हुआ करती हैं। इन लड़ाइयों में एक गाँव का दूसरे गाँव के साथ अथवा यदि पानी की और भी अधिक क़िल्लत हुई तो कई गाँवों का दूसरे गाँवों के गुट्ट के साथ युद्ध हुआ करता है जिसमें बहुतेरे आदमी मारे जाते हैं। पानी, दाने और घास की ही फ़िराक में वे रहते हैं, उसी पर और उसी के लिए वे जीते हैं।

जो उनके इलाक़े का न हो वैसे प्रत्येक आदमी को वे अपना शत्रु समझते हैं। अपने उस रेगिस्तानी इलाक़े में किसी भी बाहरी व्यक्ति को वे घुसने नहीं देते। हमें वहाँ देख कर उन्हें आश्चर्य हुआ पर हम से कुछ पूछताछ

करने की उनकी हिम्मत नहीं हुई। वे चुपचाप अपने स्थान पर बैठे रहे।

हमारे साथियों में किसी की भी, उतने प्यासे रहने पर भी, पानी के पास जाने की हिम्मत नहीं हो रही थी। प्रत्येक आदमी को भय था कि वह पानी के पास पहुँचा नहीं कि दनकालियों ने उस पर आक्रमण किया।

जिस ऊँट पर मेरी रसद लदी थी वह मेरे पास में ही था। मैंने उसमें से चना निकलवाया और एक एक मुट्ठी दनकालियों को दिया। वे उसे बड़े शौक़ से चुगने लगे।

अब मैं निधड़क हो गया। दनकालियों की मेरे प्रति की दृष्टि भोले-भाले बच्चों सी हो गई। बिना किसी भय के मैं सोते के पास जा गिलास भर कर पानी पीने लगा। मेरी देखा-देखी मेरे साथ के सब लोगों ने वैसा ही किया। फिर हम अपने ऊँट और टट्टुओं को पिलाने के लिए बाल्टी में पानी भरने लगे। इस पर एक दनकाली कुछ गुर्राया। माथाअली दूर जा खड़ा हुआ।

'तुम किस गाँव के हो कि यहाँ पानी पीने आये हो? यह तो तुम्हारी जाति का सोता नहीं।' एक दनकाली ने प्रश्न किया।

हम लोगों की नीयत उनसे झगड़ने की नहीं थी इसलिए

मीठे शब्दों में अपनी परिस्थिति हम लोगों ने उन्हें बतला दी। इस पर उन्हें विश्वास नहीं हुआ।

'कल उस सामने के गाँव के दो आदमियों को इसी पानी के लिए हम लोगों ने मार डाला है, कहीं तुम उनकी मदद में तो नहीं आये हो?' दनकालियों की ओर से दूसरा प्रश्न हुआ। हम लोगों ने इसका भी उन्हें समुचित उत्तर दे दिया।

'अपनी जवानी में हम लोगों ने एक फिरंगो को यहाँ मार डाला था—' एक बूढ़ा दनकाली कहने लगा—'उसी का हम से बदला लेने के लिए ये लोग उस फिरंगी के देश से आये हैं।'

इस शंका का भी हम लोगों ने समाधान किया और उन्हें जहाँ तक संभव हुआ विश्वास दिलाया कि हम उनके दोस्त हैं। दोस्ती का नाता पक्का करने के इरादे से हम लोगों ने उन्हें और भी एक एक मुट्ठी दाने दिये।

उनका हमारे ऊपर विश्वास जम रहा है वा नहीं, हम लोग कुछ निश्चय नहीं कर पाये थे कि उसी समय वे लोग वहाँ से उठ कर चल दिये। हमारे साथ के लोग उनका उस तरह से जाना देख कर बहुत भयभीत हो गये। इन्हें पूरा विश्वास हो गया कि अन्धकार होते ही अथवा आधी रात को दनकाली हमारे ऊपर अवश्य हमला करेंगे। पर जो थोड़ा बहुत उनका हाल जानते थे वे कहने लगे—

'अँधेरे में दनकाली किसी की जान नहीं लेते, सामान चाहे वे भले ही लूट कर ले जायँ।'

ख़ैर, हमें इसका भी तजुर्बा करना था।

३

उस दिन बड़ी सावधानी से और उस परिस्थिति में जहाँ तक संभव था, फ़ौजी इंतजाम कर हम लोग सोये। सारी रात के लिए पहरे भी बाँट दिये गये।

अँधेरा होते ही थकावट के कारण मुझे नींद आने लगी। गरमी के कारण अभी भी पसीना चल रहा था पर फिर भी बिछौने पर लेटते ही मुझे नींद आ गई।

आधी रात को कुछ गोलमाल सा सुनाई दिया। उस समय भी हमारे पास के कई आदमी जगे थे। उनके लिए चाहे कितनी भी थकावट क्यों न हो, दनकालियों के डर से सो पाना असंभव था। दूर पर शायद उन्हें कुछ हलचल सी दिखाई दी। मुझे भी उन्होंने जगाया।

सिरहाने से रिवाल्वर निकाल हाथ में ले मैं उठ बैठा। अंधकार के कारण सामने कुछ भी दिखाई नहीं देता था। मेरी बंदूक़ जहाँ सोफ़ी सोई थी उसके पास रह गई थी। मैंने उसे मेरे पास बढ़ाने के लिए कहा। उसने उसका क्या मत-

लब समझा, मुझे पता नहीं। ठीक इसी समय हमलोग जहाँ सोये थे उसके पाँच क़दम के फ़ासले पर एक बर्छा गिरा। हमारे साथी 'अल्लाह-अल्लाह' चिल्लाने लगे। सोफ़ी ने अब तक मुझे बंदूक़ नहीं दी थी। मैंने पुकारा—

'सोफ़ी ! बंदूक़ दे !'

उसने शायद इसका मतलब निशाना लगाना समझा। बड़े ज़ोरों का धमाका हुआ। निशाना भी लग गया, यह भी अंदाज़ हमें तुरंत ही लगा। जिधर से हलचल सुनाई पड़ी थी उधर से एक आदमी के चीख़ने की आवाज़ आई। तुरंत ही आदमियों के दौड़ कर भागते जाने की भी आहट मिली। स्लेट से पतले पत्थर बड़े ज़ोरों से 'कर्र...कर्र' बज रहे थे।

पर तुरंत ही फिर सब सन्नाटा हो गया। लोग आक्रमण की चर्चा करने लगे।

'सोफ़ी ! तू ने तो ग़ज़ब ढाह दिया—' जमालहुसैन ने कहा—'अब ये दनकाली हमारा कच्चा गोश्त चबा डालेंगे। हड्डियाँ तक नहीं छोड़ेंगे !'

मैंने उन्हें धीरज बँधाया। उन लोगों को फिर भी इसके बाद नींद नहीं आई। थोड़ा उजेला होते ही डेरा कूच करने का हम लोगों ने निश्चय किया। पर उसमें भी अभी देर थी।

मुझे फिर से थोड़ी झपकी आने लगी। तंद्रा में दन-

कालियों को देखने लगा। मालूम पड़ा जैसे वे सोफ़ी का कच्चा मांस चबाये डाल रहे हों।

मेरा सारा अंग सिहर उठा।

४

'माथाअली...हू...हू.. हू...' जबनिया पुकार रहा था। मेरी नींद टूटी। पता चला कि पिछली रात किसी वक़्त हम लोगों का पथप्रदर्शक भाग गया है। अथवा उसे दनकाली पकड़ ले गये—यह भी निश्चित रूप से कहा नहीं जा सकता था।

अंधकार दूर होते ही हम लोगों ने अपना सब सामान लाद लिया था पर रास्ता जानने वाले के सिवा जिस रास्ते आये थे वहाँ पहुँच पाना भी कठिन था। कुरेदे हुए पत्थरों में सिर्फ़ दिशा का अन्दाज़ा लगाकर हम लोग चल सकते थे लेकिन ज़रा सी भूल हो जाने पर पानी बिना दनकाली रेगिस्तान में भटक कर मर जाने की संभावना अधिक थी।

सूर्योदय होने के पहले ही देखा, बहुत से दनकाली हमसे कुछ दूर आ इकट्ठे हुए हैं। कुछ देर आपस में सलाह करने के बाद उनमें से चार आदमियों ने पिछली रात मारे गये दनकाली की लाश उठाई और वहाँ से चले गये। बाक़ी लोग ज्यों के त्यों खड़े रहे। वे एकटक हमारी ओर देख रहे थे।

उनसे सुलह कर लेने में ही भलाई थी, क्योंकि रेगिस्तान में उनसे झगड़ कर पार पाना असंभव था। दोपहर के समय धूप से प्राण बचाना ही बड़ा कठिन हो रहा था, उस समय आक्रमण से बचने की कोशिश करने की तो बात ही दूर रही। फिर यदि धोखे से भी एक आदमी पिछड़ जाता तो उसकी जान दनकाली निश्चय ही ले लेते। रात को हमें कहाँ टिकना पड़ेगा यह भी नहीं मालूम था—और यदि वहाँ के पानी पर उन्होंने क़ब्ज़ा कर लिया अथवा उसे छिपा दिया तो और भी अधिक मुसीबत। सोफ़ी ने उनसे चिल्लाकर कहा—

'हम तो शांति चाहने वाले हैं, तुम से हम मेल करना चाहते हैं।'

'तू डायन है—' उधर से जवाब मिला—'तू ने ही गोली चलाई है, हम तेरी जान लेंगे।'

बहुत समझाने बुझाने पर उनमें से एक बूढ़ा उनका अगुआ बन कर हमारे पास आया। मारे गये दनकाली की क़ीमत एक ऊँट और आधा बोरा चना लगाया गया। हम लोग यह रक़म हर्जाने के रूप में देने के लिए तैयार हो गये और इसी बात पर सुलह भी हो गई।

दनकालियों ने चने आपस में बाँट लिये और मारे गये दनकाली परिवार को ऊँट मिला। अब उनका हम लोगों के

प्रति रुख़ भी नरम हुआ। दूसरी शर्त उन्होंने हमारे सामने रखी कि हमें उसी मुहूर्त कूच कर देना होगा और हम उस पानी के झरने के पास और कभी नहीं आयें, नहीं तो और और गाँवों के दनकाली जो लड़ाई की ख़बर सुन कर जुटने लगे हैं उन्होंने हमें मार डाला तो इसके वे लोग जिम्मेवार न होंगे।

इस शर्त के उनके कहने की भी ज़रूरत नहीं थी। हम लोगों ने अपने पथप्रदर्शक का गुम होना बतलाया। उन्हें आश्चर्य नहीं हुआ। उनकी ओर से बूढ़े ने कहा—

'उसे हम कल जो दनकाली मारा गया है उसके बदले आज मार कर बदला लेंगे।'

बूढ़े में एक बात अच्छी थी कि वह हमारी युक्ति समझता था और भोले-भाले स्वभाव का था। रास्ता दिखाने की दिक़्क़त पेश करने पर उसने कहा—

'फिर तुममें से दूसरा कोई ही उसके बदले में अपनी जान देने के लिए आगे आये। हमारे न्याय के अनुसार तो हमें एक जान अब लेनी ही है—यह चाहे जिस किसी की ही क्यों न हो!'

पीछे यह भी पता चला कि उनके हमले के समय माथा-अली स्वयं हम लोगों की जमात छोड़कर भाग निकला था—उसे उन्होंने रास्ते में पकड़ कर गिरफ़्तार किया और एक खाई

में छिपा रखा था। उसी दिन पंचायत बैठाकर माथाअली के मारे जाने के तरीक़े पर दनकाली विचार करने वाले थे। किसी किसी की राय थी कि उसे बर्छे से मार कर फिर दोनों लाशें एक साथ ही पत्थर के नीचे गाड़ दी जायँ।

बहुत समझाने बुझाने और आधा बोरा चना और देने पर माथाअली को उन्होंने अपनी क़ैद से छोड़ा। पर अब वह हमें आगे रास्ता दिखाने के लिए तैयार नहीं था। उसे भय था कि भटक कर कहीं वह फिर दनकालियों के चपेटे में न आ फँसे।

समझदार बूढ़े ने आधा बोरा मकई और एक बन्दूक़ बख़शीश में दिये जाने पर हमारे साथ पथप्रदर्शक देना तय किया। इनकी इस समय चाहे जो भी शर्त होती हम मानने के लिए तैयार थे। मकई और एक बन्दूक़ पर प्रदर्शक मिलने की शर्त तो बहुत सस्ती थी।

हमारे साथ दो दनकाली प्रदर्शक चले जिनमें एक का नाम मूसा था। उसकी शक्ल मुझे महीनों से उपवास द्वारा दुर्बल हुए शेर के ढाँचे की दिखाई पड़ी। वह जितनी ही जल्दी हमारा अविश्वास करता उतनी ही जल्दी फिर विश्वास भी कर लेता। जितनी ही जल्दी ग़ुस्सा करता उतनी ही जल्दी शांत भी हो जाता। प्रति क्षण ही उसका रुख़ बदला करता।

किसी मुहूर्त जितना ही दयालु बन गया दीखता उसके अगले क्षण ही निर्दयता उसी परिमाण में उसके चेहरे से टपका करती। गाँव के बूढ़े से हमारी शर्त हुई कि आदिस अबेबा जैसे ही दिखाई देने लगेगा, मैं एक बन्दूक़ मूसा के हवाले कर दूँगा। मकई उसी समय इन्हें दे दी गई।

हम लोग किसी भी गाँव से हमेशा दूर दूर का ही रास्ता लेते चले। इसी लिए अपनी सीमा समाप्त हो जाने पर भी दनकालियों को हमारे साथ आगे चलते आने में ऐतराज नहीं हुआ। यात्रा की रफ़्तार तेज़ कर हम लोग चले। दो दिनों की यात्रा हम एक दिन में पूरी करने लगे। सूर्योदय के पहले ही डेरा कूच करते और अँधेरा हो जाने तक चलते रहते। इस प्रकार हम तीसरे दिन शाम को अन्टोटो पहाड़ पर जा पहुँचे।

अन्टोटो नज़दीक आते ही जमालहुसैन ने कहा—

'इन्शाअल्लाह! यहाँ ही हमारा आख़िरी पड़ाव होगा।'

वहाँ से आदिस अबेबा दिखाई देने लगा था।

५

प्रकृति ने वहाँ एक क्यारी बनाई थी; आक्रमणकारियों से बचाने के लिए इसके चारों ओर पहाड़ों की चहारदिवारी खड़ी कर दी थी। बीच की ज़मीन उसने आसपास के

इलाक़ों से बिलकुल भिन्न—उर्वरा और शस्य-श्यामला बना रखी थी।

अन्टोटो पहाड़ की जिस चोटी पर मैं इस समय खड़ा था वहाँ से ही अबीसीनियन सम्राट् मनेलिक ने पिछली शताब्दी के अन्तिम चरण में प्रकृति द्वारा बनाई गई इस सुन्दर क्यारी को देखा था। उस सम्राट् को निर्णय करने में देर नहीं लगी। प्राकृतिक सौन्दर्य और फ़ौजी, दोनों ही दृष्टि से यह स्थान अबी-सीनिया की राजधानी बनने के उपयुक्त था। मनेलिक ने यही किया और इसका नाम आदिस अबेबा (नया फूल) रख दिया!

यह नाम इसके उपयुक्त था। नगर के चारों तरफ़ यूकेलिप्टस के पेड़ लगाये गये। शहर में भी स्थान स्थान पर इसी के 'पार्क' लगा दिये गये। अब वे वृक्ष बड़े हो गये थे। उनकी छाया में बहुत सी इमारतें भी बन कर तैयार हो गई थीं। इन इमारतों की सफ़ेद दीवालें यूकेलिप्टस वृक्षों की घनी झोंफ के भीतर से बहुत दूर से ही झाँकती हुई नज़र आती थीं।

इस नगर के बसाने में प्रकृति और मनुष्य दोनों ही समान रूप से प्रयत्नशील रहे हैं। अबीसीनिया की भूमि पर पाँव रखने पर यही सबसे पहला स्थान दिखाई दिया जहाँ प्रकृति की

कीर्ति के साथ साथ मनुष्य की कीर्ति भी किसी स्थान-विशेष को सजाने में काम कर रही थी।

इस शहर को देख कर मानवी सभ्यता की भी मुझे फिर से याद आने लगी। पहली दृष्टि में ही मुझे स्पष्ट हो गया कि अबीसीनिया के और स्थानों की भाँति यह बाह्य संसार से पृथक् रहने वाला प्रदेश नहीं है। पता नहीं—इस शहर से परिचित न रहने पर भी क्यों पहली झलक से ही इसके प्रति मुझे एक विशेष प्रकार का आकर्षण हो रहा था और इसमें मैं बहुत अपनापन देखने लगा। सोफ़ी को मैंने इशारे से उस ओर दिखाया।

'आदिस—' उसने कहा।

उसकी आवाज़ मुझे संगीत सी सुनाई दी। मुझे विश्वास नहीं हुआ कि यह उसी 'वहशी' लड़की की आवाज़ है जिसके साथ मैं कई सप्ताह से परिचित हो चुका हूँ। यह आवाज़ जितनी ही नवीन उतनी ही मधुर भी लगी।

मैंने उसकी ओर देखा। उसके चेहरे पर एक-ब-एक इतनी नरमी कहाँ से आ गई? आँखों में अपनी ओर ज़ोरों से और एक ही झटके में किसी को भी खींच लेने की शक्ति दिखाई दी। वह मेरी ज़बान नहीं समझ पाती, इस पर मुझे विश्वास नहीं हो रहा था। 'वहशी' तो दूर रहा, उसके 'हब्शी' होने की भी मैं कल्पना नहीं कर सकता था।

इस समय उसका वेष मुझे 'अम्बा की रानी' से भी अधिक सुन्दर दिखाई पड़ा। मैं 'अम्बा की रानी' में भी बहुत अंशों में एक सिफ़त देखता था जिसे मैंने मन ही मन 'अफ्रिकन' मान रखा था। इस कारण वह थोड़ी खटकती थी और सौन्दर्य भी निखूँट नहीं ग्राह्य होता था।

पर आज कुछ भी सुर में खटका देने वाला नहीं था!

'तू सुन्दरी है,' मैंने उससे कहा।

वह इसका मतलब नहीं समझ सकी, पर मुसकराई।

६

उसी रात को मूसा और माथाअली ने मुझसे बिदा ली। आदिस अबेबा की झलक देखकर आनन्द के बदले उन्हें डर लगा था। माथाअली ने तो सहमते सहमते उस ओर दृष्टि भी डाली थी पर दनकाली तो अँधेरा हो जाने तक सर नीचा किये रहे। मालूम पड़ता था जैसे आदिस अबेबा की ओर देख लेने से उन्हें भयानक पाप लग जायगा।

जितना उनसे वादा हुआ था उससे अधिक पुरस्कार पथप्रदर्शकों को दिया गया। एक बन्दूक़ दनकाली मूसा को दी गई। जितना कुछ भी उन्हें पुरस्कार मिला वह उनकी आशाओं से कहीं अधिक था। ख़ुशी ख़ुशी वे मेरे यहाँ से रवाना हुए।

मेरी आँखों के सामने उनका चेहरा बड़ी देर तक नाचता रहा। फिर सोफ़ी और आदिस अबेबा की बातें सोचने लगा। एक खिला फूल और दूसरा नया फूल था। दोनों की विशेषताएँ सोचते सोचते मुझे नींद आ गई।

७

दूसरे दिन नींद टूटने पर शरीर बड़ा हल्का मालूम हुआ। मालूम पड़ा मानो सारी यात्रा की थकावट उतर गई है। आँखें खुलीं। सोफ़ी नहीं दिखाई पड़ी। यह बात तुरंत ही खटक गई। जब से उसका साथ हुआ था, आँखें खुलने पर उसी का चेहरा पहले देखा करता था।

पूछने पर भी कोई उसका पता नहीं बतला सका।

'अजी, हब्शी औरतें बड़ी बेवफ़ा होती हैं।' जमालहुसैन ने कहा—'यह तो मैंने तुम से पहले ही कहा था। कहीं भाग गई होगी।'

यों ही बिना कुछ कहे चली जायगी इस पर मुझे विश्वास नहीं हुआ।

'उसकी इच्छा के विरुद्ध तो कोई बात नहीं हुई?' मैं मन ही मन सोचने लगा।

उसे ढूँढ़ने के लिए जबनिया को भेजा। उसके लौटने में देर हुई तो मैं स्वयं निकला। आस-पास में दिखाई न पड़ी

तो टट्टू कसने के लिए कहा। आज मुझे यह कहना पड़ा; और दिन वह कसा कसाया मेरे सामने खड़ा रहता था।

बड़ी देर तक खोज करने पर भी कुछ पता नहीं चला। मैं फिर लौट कर डेरे पर आया। उस समय तक जवनिया नहीं लौटा था। एक ऊँचे स्थान पर खड़ा हो मैं चारों तरफ़ देखने लगा। जमालहुसैन भी मेरे पास आया।

'अजी छोड़ो उसकी फ़िक्र', उसने कहा—'हब्शी औरत थी, हब्शियों से मिल गई होगी। तुम उसे चाहे जितनी भी अच्छी तरह क्यों न रखो वह क्या कभी तुम्हारी हो सकती थी?'

उसकी बातें न सुन मैं चारों तरफ़ आँखें दौड़ाने लगा। घने यूकेलिप्टस के जंगल के बीच लाल रंग का सूर्य ऊपर आ रहा था। यह ख़ून के समान टहटहे लाल रंग का था।

हम जहाँ खड़े थे वहाँ से नीचे की ओर दूर पर एक पीपल का पेड़ दीख रहा था। उसके नीचे कुछ आदमी इकट्ठे होते जाते थे।

'वहाँ क्या है?' मैंने एक हब्शी नौकर से पुछवाया।

'वह एक भूत का स्थान है। उसकी पूजा अमहारा, गाला, दनकाली—क्या क्रिश्चन क्या मुसलमान सब करते हैं।'

टीन बजाया जा रहा था और 'अइयो-अइयो—हू हू-हू...' लोग चिल्ला रहे थे।

'और यह चिल्लाना कैसा ?'

'शायद कोई बलि दी जायगी।' हब्शी ने उत्तर दिया।

उसका वाक्य समाप्त होने के पहले ही मैंने देखा—पीपल के पास कोई औरत खड़ी की जा रही है। उसकी ओर आँखें गड़ा भी नहीं पाया था कि एक ज़ोरों का धमाका हुआ। यह मेरी ही बन्दूक़ की आवाज़ थी। धूँआँ और ख़ून एक साथ ही दिखाई दिया।

टट्टू छोड़कर मैं उस ओर दौड़ा। भय के कारण आँखों के सामने अँधेरा छाता जा रहा था। 'सब समाप्त हुआ—' मन यह भी कह रहा था।

एक चीख़ सुनाई पड़ी।

'उसे मार डाला।' ख़लीफ़ा चिल्लाया।

'दनकाली ने अपने भाई का बदला लिया है।' जमाल-हुसैन की आवाज़ सुनाई पड़ी।

मैं दौड़ता गया।

८

मेरे वहाँ पहुँचते पहुँचते दनकाली भाग गये थे। जब-निया ने जंगल में दूर तक उनका पीछा किया। पर वे पक-ड़ाई नहीं दिये।

सब समाप्त हो चुका था। उसे अपने हाथों दफ़ना कर वापस आया। गीली मिट्टी और यूकेलिप्टस की गंध मेरे सारे शरीर से निकल रही थी। सब कुछ बिना कुछ सोचे यंत्र की भाँति करता जा रहा था।

सामान बाँधने के लिए कहा। जबनिया से बन्दूक़ ले ली। टट्टू पर सवार हुआ।

'ख़ुदा हाफ़िज़!' मैंने जमालहुसैन से कहा। 'दर-सल्लाम आह। यों तुम्हें थोड़े ही बिदा होने दूँगा—आओ! मैंने एक लाल बोतल बचा रखी है।'

'नहीं।' मैंने उत्तर दिया—'ख़ुदा...'

'अजी कुछ याददाश्त तो देते जाओ। और न हो अपनी बन्दूक़ ही दे दो। तुम्हें और कितनी यहाँ मिल जायँगी।'

मैंने बन्दूक़ उसे दे दी। दूसरे साथ के सब आदमी घेर कर खड़े हो गये और माँगने लगे—

'बख़्शीश! बख़्शीश!'

मैंने अपना सारा सामान उन्हें आपस में बाँट लेने का इशारा किया।

'ख़ुदा हाफ़िज़!' मैंने उनसे कहा। यह आवाज़ उनके कान तक नहीं पहुँची; वे इस समय तक मेरे सामान पर टूट पड़े थे।

'ख़ुदा हा ज़!' मैंने जमालहुसैन से आख़िरी बार कहा। मेरी ओर दृष्टि बिना फेरे हुए ही उसका उत्तर मिला—'ख़ुदा हाफ़िज़!'

मैंने आदिस अबेबा की ओर रुख़ कर टट्टू आगे बढ़ाया।

एक बार और पीछे फिर कर देखा। बिदा ले चुकने वाली आँखें कहीं भी दिखाई न पड़ीं।

पंचम खण्ड

गराजमाच

१

गीली मिट्टी से सनी तीखे यूकेलिप्टस की सुगंध चारों ओर से आती। हवा में शहद के समान तीव्र मिठास भरी रहती। चारों ओर लगे यूकेलिप्टस के पेड़ बर्छों के समान खड़े और नुकीले दिखाई देते। हम चाहे जिस दिशा में भी निकलते, आदिस अबेबा की यही विशेषताएँ सब से पहले ध्यान में आतीं।

रास्तों पर चलने वाले लोग ख़ाली पाँव रहते। शरीर पर चुस्त पाजामा और तिनकलिया मिरज़ई रहती जिसमें बेल्ट की जगह बंदूक़ के टोंटे खुँसी पट्टियाँ बँधी होतीं। ये टोंटे पुराने रहते और कितने छूटी हुई गोलियों के बचे रहते। बहुत से लोगों के हाथ में बंदूकें रहतीं जिनमें कितनी इस भाँति की थीं कि वे बारूद की ईजाद के समय की बनी मालूम पड़तीं। ये न तो कभी साफ़ की गई होतीं और न कभी उनकी मरम्मत की

गई होती। बंदूक़ और पट्टियों में लगे टोंटे भिन्न भिन्न माप और नम्बर के रहते। शायद ही किसी बंदूक़ से एक आध गोली छोड़ी जा सकती थी।

कहीं कहीं टट्टुओं पर सवार हुए इस देश के 'रईस' दिखाई देते। उनके कपड़े चमकते होते और हाथों में वे ढाल-बर्छा लिये रहते और उनकी बग़ल में तलवार लटकती होती। इनके पीछे पीछे एक भारी जमात दौड़ती चलती। इन दौड़ने वालों के हाथ में भी भाले-बर्छे, पुराने राइफ़ल, वा पट्टियों में दो चार कारतूसों के ख़ाली टोंटे बँधे रहते। जिस 'रईस' का जितना बड़ा ओहदा होता उसके पीछे चलने वालों की संख्या उतनी ही अधिक रहती।

२

मैं राजमहल की ओर चला। पहले फाटक पर पहुँचने के पहले से ही हाते के भीतर बनी हुई इमारतें दिखाई देने लगीं। इन इमारतों में सब तरह की कारीगरी और बनाने के ढंग से काम लिया गया था। जो सबसे सुन्दर थी वह ग्रीक गिर्जेघर के समान दीख रही थी। ये सब की सब एक पहाड़ी पर बनी थीं।

मैं उस ओर देख ही रहा था कि उसी समय पीछे कुछ गोल-माल सा सुनाई दिया। तुरंत ही उधर से एक मोटर निकली

जिसके पीछे पीछे सैकड़ों आदमी दौड़ते आ रहे थे। मोटर के फाटक पर पहुँचते पहुँचते आसपास खड़े सब आदमी उसके पीछे हो लिये। चार पाँच आदमी उस मोटर के पाँवदान पर भी खड़े हो गये।

भीड़ के साथ मैं भी आगे खिंचता जा रहा था। चारों तरफ़ से इस तरह की धक्कमधुक्की चलने लगी कि खड़ा हो पाना मुश्किल था। और कोई उपाय न देख मैं मोटर के पीछे सामान लादने वाले लोहे से लटक गया। मोटर धीरे धीरे आगे बढ़ती जा रही थी।

दूसरे फाटक पर भीड़ कम हो गई। अब मोटर के पीछे पीछे सिर्फ़ चालिस पचास आदमी दौड़ रहे थे। सुविधा पाकर मैं भी नीचे उतर आया। मोटर जब तीसरा फाटक पार करने लगी उस समय मैं रोक दिया गया। बंदूक़ लिये पाँच हब्शी सैनिकों ने मुझे पकड़ा। वे मुझ से प्रश्न करने लगे। उनकी ज़बान न जानने के कारण मैं उन्हें कोई उत्तर नहीं दे सका। वे पकड़ कर मुझे अपने नायक के पास ले आये।

नायक का चेहरा बड़ा ही भयंकर था। सर पर चमकते हुए पीतल का मुकुट के समान कनटोप लगा था। दाढ़ी सफ़ेद किन्तु छाती तक लटकने वाली थी। शरीर पर ड्रेसिंग गाउन के समान किन्तु लाल और कसीदों से भरा हुआ एक

कोट था जिसके दाँयें तरफ़ तीन हाथ लम्बी तलवार लटकती थी। बाँयें हाथ में टोकरी के आकार की एक ढाल थी जिसके पीछे कंधे से एक बन्दूक़ झूल रही थी।

वे इस समय रुई पर किरासन तेल छिड़क उसे अपनी नाक में खोंस रहे थे। मेरी ओर देख इन्होंने भी प्रश्नों की झड़ी लगा दी। उत्तर में मैंने आठ दस ज़बानों में अपनी सफ़ाई देनी चाही पर वे उसमें से एक भी नहीं समझते थे। फिर मैंने अपने पाकेट से तरह तरह के रंग-बिरंग के कागज़ निकाले—इनसे तथा मेरे पासपोर्ट में तरह तरह की मुहरें देख कर वे प्रभावित हुए। उसी में एक जगह पर अपने देश की पताका चंगुल में दबाये उन्हें यूडा का सिंह भी मिला। वे उसे ध्यान से देखते रहे—पर इससे उनका संदेह और भी बढ़ गया। बहुत कोशिश करने पर थोड़ी बहुत अरबी समझने वाला एक हब्शी मिला। उसी के ज़रिये नायक से मेरी बातचीत शुरू हुई—

'आपका कौन सा ओहदा है?' उन्होंने मुझ से पूछा।

'मैं अख़बारनवीस हूँ।'

'ऐं-ऐं-' करते हुए अपनी नाक की रुई हाथ में ले वे कहने लगे—'यह ओहदा तो मैंने आज तक नहीं सुना। मैं बूढ़ा हो गया हूँ फिर भी आज तक नहीं सुना। ज़रूर यह कोई ओहदा नहीं है। तुम्हारे हुक्म में कितनी फ़ौज रहती है?'

'फ़ौज तो हमारे हुक्म में कोई भी नहीं रहती।'

'फिर किस अख़्तियार से आप शाम को महल के तीसरे फाटक तक चले आये? आपका कोई ओहदा नहीं तो फिर यह अधिकार भी आपको नहीं।'

वे यही बात बारबार उलट पुलट कर मुझे समझाने की कोशिश करते रहे। जब ग़ुस्सा आता तो अपनी नाक में खोंसी हुई रुई बाहर निकाल लेते और शांत हो जाने पर उसे फिर लगा लेते। जब उनके हज़ार समझाने पर भी उनकी दलील मानने के लिए मैं तैयार नहीं हुआ तो अबोसीनियन ढंग की पंचायत से उन्होंने मेरा फ़ैसला करना चाहा।

संयोग से हमारे पास की जमात देख कर अबीसीनियन प्रेस विभाग के मंत्री उधर से आ निकले। उन्होंने आते ही बूढ़े को बड़े अदब और क़ायदे के साथ नमस्कार किया। इससे प्रभावित हो उन्हीं को बूढ़े ने पंच माना। फिर मेरा मुक़दमा सामने लाते हुए कहा—

'एक तो इनका ओहदा नहीं, दूसरे इन्होंने हमें जो कागज़ दिखाया है वह भी दुरुस्त नहीं।'

'कागज़ क्यों दुरुस्त नहीं?' मैंने टोका।

'वह इसलिए कि उसमें जो यूडा का सिंह है उसका मुँह खुला हुआ है। यह तो बहुत भारी अपशकुन है।'

प्रेस-मंत्री ने मेरा पासपोर्ट देखा और उसे ध्यान से बूढ़े को दिखाते हुए कहा—

'नहीं, गराजमाच (कैप्टेन) बीरहान! सिंह का मुँह बंद है। यह मोहर इस पर नेगुस ने लगाई है।'

बूढ़े ने फिर से ध्यानपूर्वक सिंह को देखा और उसका मुँह बन्द देख कर उन्हें तसल्ली हुई।

'तब तो बिलकुल ही बात दूसरी है—' उन्होंने कहा—'और जब ख़ुद नेगुस ने उस पर छाप दिया है तब तो इसका मतलब ही है कि इनका हमारी बराबरी का ओहदा है। ऐसा इन्होंने पहले कहा क्यों नहीं।'

'मैंने तो यह पहले ही कहा था।'

'तुम लोग बेवक़ूफ़ हो—' बूढ़े ने ग़ुस्से में आकर जो सिपाही मुझे पकड़ लाये थे, उन्हें डाटते हुए कहा—'तुम सब को हाथ पाँव बाँध कर उस पहाड़ पर से लुढ़का देना चाहिए। इतने बड़े ओहदे वाले आदमी को तुम्हें पकड़ लाने का क्या हक़ था? किसने तुम्हें यह हक़ दिया?'

उन्होंने बर्छा तान लिया पर प्रेस-मंत्री ने उसे पकड़ लिया। फिर उन्होंने तलवार खींची, यह भी पकड़ ली गई।

'और अब तक तुम लोग उल्लू की तरह खड़े हो!' बूढ़े ने डाटते हुए कहा—'सलाम करो।'

सिपाहियों ने सलाम किया और माफ़ी माँगी।

'इतना ही नहीं—' प्रेस-मंत्री ने कहा—'नेगुस ने इन्हें अपने यहाँ दावत भी दी है।'

'देखना बेवकूफ़ो! फिर कहीं ग़लती न हो!' बूढ़े ने अपने सिपाहियों को हिदायत दी और उन्हें वहाँ से चले जाने के लिए कहा। फिर एकान्त में मुझसे पूछा—

'लेकिन आपका ओहदा है तो आपके पीछे चलने वाले लोग कहाँ हैं?'

'मैं दूर देश से आ रहा हूँ। वे मोटर के पीछे दौड़ नहीं सके इसलिए पिछड़ गये हैं।' अब मैं उनसे बातचीत करने का ढंग सीख गया। इसी सिलसिले में मैंने उन्हें एक बार 'गराजमाच' कह कर संबोधन किया। इससे उन्हें बड़ी ख़ुशी हुई। अबीसीनियन ढंग पर गले मिलते हुए उन्होंने मुझे इतमीनान दिलाया—

'अब बिना रोकटोक के आप राजमहल में आइए। चौथे दरवाज़े तक आप ख़ुशी ख़ुशी जा सकते हैं। पर देखिए, अपने आदमियों को ज़रूर साथ लेते आइए। हमारे यहाँ का यही क़ायदा है, नहीं तो ओहदा जल्दी पहचान में नहीं आता।'

वे अपने सवा सौ सिपाहियों के साथ मुझे मेरे ठहरने के स्थान तक पहुँचाने आये। वहाँ पर फिर से मुझसे माफ़ी

माँगी और सिपाहियों को और एक बार डाटा। यह सिलसिला उन्होंने तीन दिन तक जारी रखा और इसके बाद मामले का अन्त हुआ माना।

उनसे परिचय हो जाने पर मेरा भी बहुत काम निकला। उनकी पहुँच अबीसीनिया के ऊँचे से ऊँचे मिलिटरी अफ़सरों तक थी, सब उनकी क़द्र करते थे और इसी लिए मुझे भी अपने काम में सुविधा हो गई।

मेरे पीछे अँटके हुए सिपाहियों की बात उन्होंने मुझसे कई बार पूछी पर यह विश्वास दिलाने पर कि—दूर का रास्ता है, वे राह भूल गये होंगे—उन्हें संतोष हो गया।

दोस्ती पक्की करने के लिए अपने आदमियों में से दस उन्होंने मुझे मेरे घोड़े के पीछे पीछे दौड़ने के लिए दिये।

३

गराजमाच बीरहान का इलाक़ा राजधानी से बहुत दूर था। आधुनिक सभ्यता की तो बात दूर रही, मध्यकालीन युग की सभ्यता भी अब तक वहाँ नहीं पहुँच पाई थी। यह इलाक़ा अब भी अबीसीनिया के वैसे हिस्सों में था जहाँ के लोग इन दिनों भी खाल पहना करते, कच्चा गोश्त खाते और अधिकतर काठ के बने हथियार इस्तेमाल करते।

इस इलाक़े के लोगों से तुलना करने पर अवश्य ही गराजमाच कहीं 'आधुनिक' थे। ये कई बार आदिस अबेबा आ चुके थे। इन्होंने मोटर सिर्फ़ देखा ही नहीं था बल्कि उस पर एक बार चढ़ तक लिये थे। अमेरिका के बने कपड़े ख़रीद कर पहने थे और सबसे बड़ी बात यह थी कि उन्हें 'ओहदे' का ज्ञान हो गया था। यदि इन बातों को बाद दे दिया जाता तो अवश्य ही गराजमाच की गिनती छठवीं सातवीं शताब्दी के लोगों में की जा सकती थी।

पर इसका मतलब यह नहीं कि ये राजनीति से भी बिल्कुल अपरिचित रह गये थे। इटली के साथ १८६६ में अबीसीनिया की जो लड़ाई हुई थी उसमें ये लड़े थे और उसकी कहानियाँ अब भी अपने दोस्तों को सुनाया करते थे।

'इटालियन तो ज़नानों की जात है—' वे कहा करते—'उनके ज़्यादातर सिपाहियों के मूँछें नहीं, दाढ़ी नहीं—और तो और, वे दूध से चेहरा धो धोकर सफ़ेद बनाया करते हैं। बेवक़ूफ़ कहीं के—दूध पीने की चीज़ है कि उससे चेहरा धोया जाता है! इतनी भी तमीज़ नहीं। देह भी उनकी ठीक औरतों जैसी नरम होती है। हमारा यह भाला तो वहाँ छुआ नहीं कि भीतर धँस जाता था। हमारी देह में कोई वैसा घुसा तो ले! और वे हलके भी होते हैं। मैं तो उन्हें बर्छे में गाँथ ऊपर

उठाकर घुमा सकता था। कितनों को मैंने वैसा गाँथ गाँथ कर अड्डुआ में घुमाया।'

इन्हें इस बार इटालियन लोगों का सामना करने के लिए नेगुस ने बुलाया था। ये जल्दी ही अपनी फ़ौज के साथ दक्षिणी मोर्चे पर जाने वाले थे। पर इसमें इन्हें कोई विशेषता नहीं दिखाई देती थी और न इसमें उनकी दृष्टि से तैयारी करने अथवा अधिक विचार करने की आवश्यकता थी। इसे वे जंगल में जाकर एक दिन शिकार कर आने के जैसा समझते थे।

'इटालियनों को हमारा बर्छा अभी भूला नहीं होगा। वे तो इस बार हमारे मैदान में उतरते ही भाग खड़े होंगे। सुबह को अगर लड़ाई शुरू हुई तो उन सब को काट कूट कर हम दोपहर का खाना घर में खायँगे।' इस पर मुझे विश्वास न करता देख वे कहते—

'तुम अभी बच्चे हो। राजा के लड़के हो इसलिए ओहदा मिल गया—पर इस ओहदे की भी कोई क़ीमत है? असली ओहदा तो लड़ाई के मैदान में बहादुरी दिखा कर लिया जाता है। मैंने अब तक कितने कोड़ी दुश्मनों के सर काट लिये होंगे अथवा बर्छे से गाँथ दिये होंगे। तुमने अब तक कितने मारे हैं?'

'एक भी नहीं !'

'यही तो मैं भी सोचता था—' ज़ोर से हँस कर वे कहते—'तुम्हें अभी तजुर्बा नहीं। तुम मेरे पीछे रहना और देखना—नहीं ठीक ठीक गिनते जाना—मैं चार-बीस चाहे छः-बीस से कम इटालियनों को मार कर नहीं लौटूँगा। तुम्हें गिनना तो आता है न ?'

'हाँ'।

उन्हें विश्वास नहीं हुआ। अरबी में मैं गिनने लगा। वे भी एक लकड़ी ले उसके टुकड़े कर अपनी भाषा में गिनते रहे। बीस पर जब मैं नहीं रुका तो उन्हें आश्चर्य हुआ। मेरी गिनती पर से उनका विश्वास उठ गया। उन्होंने उसी दिन अपनी ज़बान में गिनती सीख लेने के लिए मुझे बाध्य किया।

'तुम नेगुस को बाद में बतलाना—मैंने कितने इटालियन मारे—' फिर थोड़ा सोच कर उन्होंने कहा—'जितनों को मैं मारना चाहता हूँ अबकी शायद उतने इटालियन जुटें ही नहीं। हमारे बर्छे की जिन्हें याद होगी वे तो इस बार हरगिज़ नहीं आयँगे।'

गराजमाच को पूरा विश्वास था कि जिन लोगों को १८९६ की लड़ाई में खदेड़ दिया गया था अथवा जो छिपकर भाग

निकले थे वे ही फिर हमला करने आ रहे हैं। इनके अन्दाज़ से ऐसे लोगों की तायदाद बहुत ही कम थी इसी लिए वे उनसे डर खाने जैसी बात इस लड़ाई में नहीं देखते थे। ये अधिक से अधिक अपना दिमाग़ दौड़ाते तो यही पाते कि खदेड़े गये लोगों के परिवार वाले आयँगे—उनकी भी यदि गिनती की जाये तो भी वे बहुत नहीं होते।

अबीसीनियन लोगों की इटालियन आक्रमण का सामना करने की तैयारी की जाँच करते समय मुझे पता चला कि गराजमाच के जैसा ख़याल रखने वाले बहुत से अबीसीनियन सेना-नायक हैं। अपनी इस धारणा के ख़िलाफ़ कोई भी दलील सुनने के लिए ये लोग तैयार नहीं थे।

४

गराजमाच बिरहान को नेगुस तथा अपने देश के प्रति वफ़ादारी साबित करने का मौक़ा जल्दी ही मिला। सितम्बर का महीना ख़तम भी न हो पाया था उसी समय दूर दूर के इलाक़ों के सरदार अपने सैनिकों के साथ राजधानी में जुटने लगे। राजधानी में इनका पहले नेगुस द्वारा निरीक्षण हो जाता; फिर वे लड़ाई के विभिन्न मोर्चों पर भेज दिये जाते।

आदिस अबेबा की सड़कों पर इन सरदारों और उनके सैनिकों का ताँता दिन भर लगा रहता। साधारण रास्ता

चलने वालों से इन सैनिकों को अलग कर पाना बहुत मुश्किल था, क्योंकि वर्दी दोनों में किसी के भी अंग पर नहीं रहती और बन्दूक़ वा टोंटों से गुँथी पट्टी दोनों ही बाँधे रहते। सैनिकों के मार्च करते समय जैसी 'ठप-ठप' की आवाज़ स्वाभाविक ही हुआ करती है वह भी नहीं होती, क्योंकि जूते किसी के भी पाँव में नहीं होते। ये क़दम मिला कर चलना भी नहीं जानते थे। आगे आगे सरदार की जो रफ़्तार होती उसी के हिसाब से ये भी चला करते। यदि सरदार का टट्टू दौड़ता तो ये सब भी उसी की रफ़्तार में दौड़ते—यदि वह विश्राम लेने लगता तो ये लोग भी विश्राम लेते।

ये सैनिक अपने सरदारों के साथ सीधे राजमहल में नेगुस के पास पहुँचते। वहाँ पर ख़ास इसी सैनिक निरीक्षण के लिए एक स्थायी मंच बना दिया गया था जिस पर नेगुस बैठते और उनके दोनों तरफ़ ओहदे के हिसाब से और लोगों की जगह रहती। कभी कभी विदेशी दूतावास के सदस्य भी यह निरीक्षण देखने जाया करते।

ऐसे मौक़ों पर सरदार और उनके सैनिक वास्तविक युद्धक्षेत्र में किस बहादुरी से लड़ेंगे और अपनी वीरता प्रदर्शित करेंगे—इसी का 'रिहर्सल' किया करते। कभी कभी उनमें इसके लिए आपस में बाज़ी तक लग गई सी दीखती। सरदार मंच के

सामने आकर अपने टट्टू से नीचे उतर आते और तलवार वा बर्छा ले भाँजने लगते। उनके पैंतरे से सामने का एक बिगहा मैदान ख़ाली हो जाया करता। कभी कभी वे उसी जोश में चिल्लाया भी करते—

'कौन आया है हमला करने? इटालियन? उनका सर काट डालो! मत छोड़ो! भागने न पावे! मारो! बोटी काट डालो! बर्छा आर पार कर दो! एक को भी ज़िंदा न छोड़ो! पछाड़ पछाड़ कर उनकी छाती में भाले भोंको!!'

'वह मारा! वह काटा।'

यह चिल्लाते समय मालूम पड़ता जैसे वे हूबहू भूत खेला रहे हों। अपने जोश को वे स्वयं तो रोक ही नहीं पाते, साथ ही दूसरों के लिए भी उन्हें रोक पाना कठिन हो जाता। पहरे के लिए खड़े किये गये संतरियों पर तो भारी मुसीबत आ जाया करती।

गराजमाच बिरहान के अपना पैंतरा दिखाने की जिस दिन बारी थी उस दिन तो ऐसा दीखने लगा मानों दो एक श्वेतांगों की लाशें गिरा कर ही वे शांत होंगे। उस समय मंच के पास कई गोरे चमड़े वाले बैठे थे जिनमें एक इटालियन राजदूत भी था। गराजमाच बार बार अपना बर्छा ताने हुए उसी ओर पैंतरा काटते हुए लपकते और मालूम पड़ता मानों

इस बार वार करके ही रहेंगे। वहाँ पर पहरे के लिए खड़े किये गये सैनिकों को भी उन्होंने एक बार पीछे ढकेल दिया।

'फिरंगी को मार डालो! एक भी यहाँ से बचकर न जाने पाये! अभी पहला वार मैं करता हूँ—'

चिल्लाते हुए वे लपकते और बहुत लम्बी लम्बी छलाँगें मारा करते। उनकी उम्र का ख़याल रखते हुए शायद ही किसी को पहले ख़याल हुआ होगा कि वे उतनी लम्बी छलाँग भी मार सकते हैं। स्वयं नेगुस ने भी इस प्रकार का दृश्य पहले नहीं देखा था। मुसकराते हुए उन्होंने इसका नाम—'युद्ध-नृत्य' दे दिया।

इससे गराजमाच को और भी अधिक प्रोत्साहन मिला। वे बहुत देर तक पैंतरा काटते और उछलते रहे। फिर थक जाने पर नेगुस के सामने झुककर सलाम किया और अपने टट्टू पर बैठ कर आगे बढ़े।

जो लोग आधुनिक युद्ध-प्रणाली का ज़रा भी अनुमान करने में समर्थ थे उन्हें इस तरह की पैंतरेबाज़ी बहुत अजीब सी दीखती। किसी किसी दिन तो सुबह से शाम तक नेगुस के सामने यह पैंतरेबाज़ी चलती रहती। हज़ारों की तायदाद में सैनिक उनके सामने से होकर गुज़रा करते। इन लोगों को नई राइफ़लें नहीं मिलतीं, क़ारतूस भी नहीं दिये जाते—

मुश्किल से प्रति दस सैनिकों के बीच एक टूटी फूटी पुरानी राइफल रहती। इनके खाने पीने की भी कोई व्यवस्था नहीं की जाती। सिर्फ़ हुक्म दिया जाता—

'दुश्मन ने हमला किया है! मोर्चे पर जाकर जुट जाओ।'

सैनिक मोर्चों के लिए प्रस्थान कर जाते। मेशीनगन के ये शिकार बनेंगे, यह बात बिलकुल तय थी। संदेह सिर्फ़ इसमें था कि उनमें से कितने ज़िन्दा घर लौट सकेंगे!

आदिस अबेबा का सारा दृश्य देखने पर कोई भी आने वाले युद्ध को 'भारी ट्रैजेडी' मानने के लिए बाध्य होता।

५

पैंतरा काट कर लौटते समय और एक बार गराजमाच दिखाई पड़े। इस समय भी वे युद्ध के साजबाज में थे। यह साज नवाबशाही के ज़माने से भी पहले का था। इस तरह से सज धज कर शायद तीसरी चौथी शताब्दी के वीर मैदान में जाते होंगे—बीसवीं शताब्दी के लिए तो यह अवश्य ही एक अनोखा दृश्य था।

उनकी तसवीर लेने के लिए मैंने अपना कैमेरा खोला। तुरंत ही दो ओर से गराजमाच के सिपाहियों ने मुझे पकड़

लिया। गराजमाच का भी चेहरा गंभीर हो आया। उन्होंने कहा—

'तलवार और भाला तो मैं फिरंगियों की ओर लेकर लपका था—तुम मेरी ओर क्यों गोली चलाने लगे?'

मैंने अपनी सफ़ाई दी। कैमेरा खोल कर उन्हें दिखाया; फिर भी उन्हें विश्वास नहीं हुआ।

'इसमें अवश्य ही जादू का खेल है—अगर यह पिस्तौल नहीं तो जादू की पुड़िया ज़रूर है।'

आधे घंटे तक मैं उन्हें तसवीर खींचने की कला के बाबत समझाता रहा। अन्त में उन्होंने कहा—

'लेकिन जो काम हमारे बाप-दादों ने नहीं किया वह मैं कैसे कर सकता हूँ?'

अपनी इस दलील को वे अकाट्य समझते थे, पर मैं उनके सामने और भी युक्तियाँ पेश करता गया। कुछ देर तक विचार करने के बाद उन्होंने अपनी शंका खोल कर रक्खी—

'तुम हमें धोखा देने के लिए झूठ कह रहे हो। मैं तुम्हारी सब चालाकी समझता हूँ। तुम यह जादू हमारे इस्तेमाल करने के लिए फिरंगियों के यहाँ से ले आये हो। लेकिन हमारे ऊपर उनका जादू चल नहीं सकता। मैं उससे बचने का सब मंत्र जानता हूँ।'

अपने पास के सिपाही से बर्छा हाथ में लेकर वे मंत्रपाठ करने लगे—

'मैं चढ़ूँ टट्टू पर ! बर्छा मेरे हाथ ! हमारे ख़ुदा यूसू मददगार ! गाला के ख़ुदा बोला उनके पास ! बाइबिल हमारे बाँये हाथ ! यूसू ! बोला ! छूः मन्तर ! छू...छू...छू...! बकरे का गोश्त ! मरियम की पूजा...छू ..'

अब निर्भीक हो कहने लगे —

'यह जाप कर लेने पर हमारे ऊपर किसी भी फिरंगी का जादू नहीं चल सकता। तुम चलाओ अपना जादू !'

मैंने उनका फोटो ले लिया। जब मैं कैमेरा बन्द करने लगा तो उन्होंने ख़ूब ज़ोर से ठहाका लगाते हुए कहा—

'देख लिया न ! मेरा बाल भी बाँका नहीं हुआ। मंत्र जाप कर लेने पर तलवार और भाले बर्छे का वार तक कुछ नहीं बिगाड़ सकता—तुम्हारा यह काला सा बकसा कौन सी चीज़ है !'

मैं फिर उन्हें समझाने की कोशिश करने लगा कि जादू और फोटोग्राफ़ी से कोई ताल्लुक़ नहीं। वे मेरी दलील काटने लगे—

'फिर यह कैसे मुमकिन है कि हमारी सारी फ़ौज, मेरा टट्टू, मैं ख़ुद, ये सामने के पहाड़ सब कुछ इस बकसे के भीतर

आ जायें ! सरासर झूठ है। मैंने आज तक यह बात नहीं सुनीं।'

मैं बिदा लेने लगा उस समय उन्होंने टोका—'और अगर तुम्हारी बात सही है—सचमुच में तुमने अगर सब कुछ इस बक्से में भर लिया है तो हमें अब इसे खोलकर दिखाओ !'

मैंने अपने घर चलने को कहा। वे नहीं आये पर अपना एक विश्वासी सिपाही साथ दिया। निगेटिव धोकर मैंने उसके हाथ में दिया। उसे उसने उलटा पकड़ा। बिना एक शब्द कहे वह वहाँ से चला गया। उस दिन से गराजमाच का मेरे यहाँ आना तो रुक ही गया, साथ ही अचानक मुलाक़ात हो जाने पर भी वे मुँह फिरा लिया करते। दक्षिणी फ्रंट के लिए रवाना होने के दिन वे मुझे अलग ले गये और विश्वासी दुभाषिये के ज़रिये कानाफूसी में मुझसे पूछने लगे—

'तुमने हमें भूत बना कर उस बक्से में भर लिया है। नौकर का मैंने एतबार ही नहीं किया। उसे उसकी नालायक़ी के लिए बाँधकर रख दिया है। अब भी हमें एतबार नहीं हो रहा है। तुम तो फिरंगी नहीं कि हमें धोखा दोगे !'

'आख़िर मामला क्या है ?' मैंने आश्चर्य में आकर उनसे पूछा।

'नौकर ने मुझसे कहा—' वे चारों ओर देख कर और

यह इतमीनान कर कि और कोई नहीं सुन रहा है कहने लगे--'तुमने हमें अँगूठे से भी छोटा बना दिया है। बाल सफ़ेद। मैं चारों ख़ाने चित्त! टट्टू के पाँव आकाश की ओर! हमारे आदमियों के बर्छे हमारे ऊपर तने हुए! भला बताओ तो! ऐसी बेइज़्ज़ती की तो मैं आज तक अपने विषय में कल्पना भी नहीं कर सकता था।'

वे देर तक मुझे समझाते रहे--

'मैं आज तक घोड़े से भी नहीं गिरा--टट्टू की तो बात ही दूर रही। किसी सिपाही ने उँगली दिखाने की गुस्ताख़ी की तो उसका सर खीरे की तरह काट लिया--बर्छा दिखाने की तो बात ही दूर रही। तुमने हमारी यह बेइज़्ज़ती क्यों की?'

वे ग़ुस्से में आकर मुझे डाटने भी लगे--

'अगर तुम हमारे मददगार नहीं होते और फ़िरंगी होते तो अभी तुम्हारा सर धड़ से अलग कर देता। लेकिन नेगुस ने तुम्हें परवाना दिया है--उस पर सिंह की मुहर में उसका मुँह बन्द है--इसलिए मैं तुम्हें माफ़ कर देता हूँ। लेकिन तुम वह बक्सा फेंक दो। अगर नहीं फेंका तो फिर अगली बार मुलाक़ात होने पर हमारी तुम्हारी लड़ाई चलेगी।'

ग़ुस्सा शांत न होता देख मैंने बक्सा फेंक देना स्वीकार कर लिया।

'यह ज़रूर फिरंगियों ने हमारी बेइज़्ज़ती के लिए बनाया था।' जाते जाते उन्होंने कहा।

उनका संदेह मेरी ओर से हटा नहीं। फिर भी उन्हें आगे जाना था। वे अपने टट्टू पर सवार हो आगे बढ़े, पर जब तक मेरी आँखों से ओट न हो गये यह देखते रहे कि कहीं जादू के बक्से में उन्हें फिर से भरने की मैं कोशिश तो नहीं कर रहा हूँ।

आदिस

१

देखते-देखते लम्बी अबीसीनियन बरसात ख़तम हुई। प्रकृति ने अपना चोग़ा बदला। आकाश से काले, मुर्दनी सूरत वाले बादल लोप हुए। हर चीज़ धुली हुई स्वच्छ दीखने लगी; उन सबमें अद्भुत चमक आ गई थी; वे अनवरत चमकती तलवार की भाँति आँखों को चकाचौंध में डालने लगीं।

यूकेलिप्टस के घने कुञ्जों के बीच भी प्रकाश पहुँचने लगा। धरती की चपचपी दूर हुई। सुगंध हलकी के साथ साथ ख़ुश्क बनते जाने से अधिक प्रिय मालूम पड़ने लगी। पाँवों तले रौंदे गये धरती की छाती से चिपटे पत्तों के तह अपनी छाती फुला-फुला कर ऊपर स्प्रिंग की भाँति उठने लगे। कितने हवा के साथ उड़ कर ऊँची छलाँग मारने लगे थे।

पक्षियों के घोंसलों की भी नमी दूर हुई। उन्होंने भी दूर दूर से सूखे तिनके लाकर उनकी मरम्मत की। अब वे

भी बिना पंख फटफटाये तड़के उड़ जाया करते। बिना खटके के वे दूर तक की उड़ान ले सकते थे; रास्ते में आश्रय का स्थान ढूँढ़ने की उन्हें आवश्यकता नहीं थी।

बरसात की नमी के बाद हर पेड़-पौधे, हर जीव में नया प्राण आ गया था। सबकी प्रवृत्ति त्यौहार मनाने जैसी हो रही थी। स्वाभाविक फुरती आ जाने के कारण उनके पाँव, शरीर, हलके हो गये थे। सिर्फ़ हब्शी शरत का दिया हुआ यह नया जीवन उपभोग कर पाने में अपने को असमर्थ देखते थे।

आकाश के काले बादल ज्यों ज्यों खिसकते गये थे, हब्शियों के राजनीतिक आकाश में त्यों त्यों युद्ध के बादल उनका स्थान लेते गये थे। श्वेतांग इन नये बादलों को देख-कर नाचते पर हब्शियों के होश उड़ते जाते। बम की मार उन्हें नहीं लगी थी पर वे इतना अनुमान से जानते थे कि इसकी मार पानी की मार से कहीं भयंकर होती है।

२

अबीसीनिया के युद्धसचिव को भी अब ख़याल आया कि क़वायद सीखना सैनिकों के लिए उपयोगी ही नहीं बल्कि अनि-वार्य होता है। इसी विचार से उन्होंने आदिस अबेबा में चुने हुए हब्शी युवकों को क़वायद सिखाने का बन्दोबस्त किया।

यह क़वायद शहर से बाहर दूर के एक मैदान में कराई

जाती। उसी मैदान में उन्हें युद्ध के आधुनिक हथियारों से भी थोड़ा बहुत परिचित कराया जाता। सुबह से ही उधर से गोली छूटने की आवाज़ आया करती। कभी कभी उधर से मशीनगनें भी दागी जातीं।

एक दिन सबेरे टहलता हुआ मैं भी उधर ही जा निकला। सीखने वाले रंगरूट कई झुंडों में बँट चुके थे और उन्हें तरह तरह की राइफलों और मशीनगनों के पुर्ज़े खोल कर बतलाये जा रहे थे। मेरे पास में ही एक छोटी-सी मंडली को हाथ से फेंका जाने वाला ग्रानाद (एक तरह का बम) दिखलाया जा रहा था।

मंडली के बीच में एक लंबे क़द का यूरोपियन फ्रेंच में ग्रानाद का उपयोग बतलाता और दुभाषिया उसका तर्जुमा कर रंगरूटों को समझाता जाता। फ़ौजी पोशाक में न रहने के कारण मुझे उस मंडली के बहुत निकट जाने में हिचक हो रही थी पर जहाँ मैं खड़ा था वहाँ से अफ़सर की बातें सुन सकता था और उसकी सब हरकतें भी देखता जा सकता था। शरीफ़े की शक्ल की और उतनी ही बड़ी लोहे की एक गेंद दाँये हाथ में पकड़े रंगरूटों को दिखाते हुए वह कह रहा था—

'यह दुश्मन के बिल्कुल नज़दीक पहुँच जाने पर इस्तेमाल किया जाता है। दस-पंद्रह गज़ के फ़ासले से यह अच्छी

चोट करता है। लेकिन इसमें एक सिफ़त भी है। कितने ग्रानाद ऐसे होते हैं जिनमें वक्त दे दिया जाता है। ठीक उसी वक्त के बीच ग्रानाद फेंक देना चाहिए नहीं तो ख़तरे की आशंका रहती है। अगर वक्त के बहुत पहले फेंक दिया गया तो दुश्मन उसे लौटा कर फेंक दे सकता है।'

'तब तो बड़ा ख़तरनाक है।' एक ने आपत्ति की।

'ख़तरनाक कुछ भी नहीं। बड़ी लड़ाई में मैंने हज़ारों ग्रानाद इस्तेमाल किये पर एक बार भी ख़तरा नहीं हुआ।'

ठीक इसी समय व्यवहार में दिखाने के लिए उसने ग्रानाद के मुँह पर का स्प्रिंग हटाया। मेरी निगाह अभी उसकी उँगलियों पर जम भी नहीं पाई थी कि उसी समय ज़ोरों का धमाका हुआ। मुझे ऐसा जान पड़ा मानो मेरे पाँव के नीचे एक-ब-एक कूँआँ हो गया है। धरती ज़ोरों से हिल गई थी। थोड़ा सम्हलने पर मैंने देखा—अफ़सर के पास एक बड़ा सा खड्ड हो गया था। स्वयं अफ़सर धरती पर अचेत पड़ा था। कई हब्शी रंगरूट घायल हुए थे।

मैंने यह बम का धमाका पहले पहल देखा था। चारों तरफ़ खड़े उस मंडली के लोग रोने-चिल्लाने लगे। दूर दूर की जमात के बहुतेरे आदमी जुट आये। मेरा हृदय इस समय भी उस धमाके के आघात से दहला हुआ था।

३

'डॉक्टर ! डॉक्टर !' घेरकर खड़े कई आदमियों ने आवाज़ दी। मैंने समझा, वह आवाज़ मेरे लिए ही दी जा रही है। रंगरूटों को अगल-बगल हटाता मैं अचेत अफ़सर के पास पहुँचा।

जाँच कर देखने पर पता चला चोट थी, पर बहुत संगीन नहीं। लोहे का एक टुकड़ा कनपटी का चमड़ा छीलता तीर की तरह निकल गया था। उस स्थान से ख़ून निकल रहा था। दाँये हाथ की दो उँगलियाँ भी उड़ गई थीं। और दो एक जगह सिवा झुलस जाने के कोई ख़ास बात नहीं हुई थी। जो रंगरूट घायल हुए थे उनकी चोट अफ़सर से कहीं अधिक साधारण थी। ख़ैरियत यही थी कि फेंकते फेंकते ग्रानाड पूरा फट नहीं पाया था। वह खढे से ऊँचे पर फेका गया था। इसलिए उसका लोहा अधिक घाव नहीं पहुँचा पाया था।

पानी से घाव धो डालने पर अफ़सर को होश आया। उन्होंने मुसकराते हुए आँखें खोलीं।

'मुझे तो मामूली झाँई आ गई थी—' वे कहने लगे—'ग्रानाड दुरुस्त तरीक़े से नहीं बनाया गया था।'

हाथ में उस समय तक पट्टी नहीं बाँधी जा सकी थी। वहाँ पर दो उँगलियाँ ग़ायब देखकर एक सेकेंड के लिए उनके ललाट पर सिकुड़न आई पर इस बार भी लापरवाही दिखाते हुए बोले—

'उनके उड़ जाने से भी ख़ास नुक़सान नहीं। मैं बन्दूक़ अभी भी आसानी से चला सकूँगा। अँगूठे के साथ की और दो तो मौजूद ही हैं।'

उनका चेहरा ख़ून से तर होता आ रहा था। उसे उन्होंने पाकेट से रुमाल निकाल कर पोंछा। रुमाल दो बार में ही सराबोर हो गया। इसकी भी उन्हें ख़ास परवा नहीं थी।

'यह तो हुआ ही करता है—' बड़े स्वाभाविक तरीक़े से कहा।

वे रंगरूटों को और आगे सिखाने का क्रम जारी रखना चाहते थे। एक दूसरा ग्रानाड उन्हें फेंककर दिखाना चाहते थे, पर चारों तरफ़ खड़े लोगों ने मना किया।

उठकर खड़े होने का प्रयत्न करते समय वे तलमलाने लगे। दो आदमी मदद के लिए आगे आ रहे थे। उन्हें डाटते हुए कहा—

'कोई ज़रूरत नहीं। मैं घायल थोड़े ही हुआ हूँ कि उठ नहीं सकूँगा। यह तो मामूली सा छिल गया है।'

उन्होंने हाथ में बँधी घड़ी को देखा। उसके शीशे पर ख़ून जम गया था, पर काँटा दिखाई देता था। रंगरूटों को छुट्टी देने का वक़्त आ गया था। उनका क्लास बर्ख़ास्त कर वे घोड़े पर सवार हुए। जैसे कुछ फिर याद आ गया हो उस भाँति रुके। मेरी ओर देखकर मुझे धन्यवाद दिया। मैंने सर झुकाकर उसे स्वीकार किया।

'मुझे भी उसी तरफ़ जाना है—' कहकर मैं भी अपने घोड़े पर सवार हुआ।

'यह बड़ा कट्टर अफ़सर दीखता है!' मैंने मन ही मन कहा। उनका विशेष परिचय प्राप्त करने के इरादे से मैं उनके साथ ही अफ़सरों के बँगले की ओर चला।

'लेफ़्टिनैंट हानसेन!' रास्ते में एक यूरोपियन ने मेरे साथ के अफ़सर को टोका। ख़ून निकलता देख उसे आश्चर्य हुआ था।

'क्या मुझे ऐसी चोट आई है कि लोग रास्ता चलते मुझे टोका करें?' हानसेन ने मुझसे पूछा। मैं निरुत्तर रहा। हमारे सामने अफ़सरों का बँगला था।

४

लेफ़्टिनैंट हानसेन को मैंने अपने साथ अस्पताल चलने की राय दी। जख़्म अधिक न रहने पर भी उसके सेप्टिक हो

जाने का भय था। वे राज़ी हो गये। मुझे रुकने का इशारा कर वे ख़ून से भरे कपड़े उतार डालने के लिए अपने कमरे में चले गये।

बरामदे में टहलते टहलते मुझे एक तरह की गुनगुनाहट सुन पड़ी। यह परिचित सी थी। मैं ड्राइंगरूम की ओर आगे बढ़ा।

'हलो...' मेरी जहाज़ की परिचिता पाउली कमरे के बाहर निकल मेरा हाथ ज़ोरों से झुलाते हुए कहने लगीं— 'तुम इतने दिनों के बाद आज मुझसे मिलने आये हो !'

उनके प्रश्न का मैं उत्तर दूँ इसके पहले ही मेरा साथ छूटने से अब तक के अपने सब तरह के 'ऐडवेंचर' व गिनाने लगीं। हवाई जहाज़ के कप्तान से उनकी अच्छी दोस्ती हो गई थी। इटालियन एरित्रिया की राजधानी असमारा में उनका अच्छा स्वागत हुआ। झुंड के झुंड लोग उनका सौंदर्य देखने के लिए रास्ता चलते इकट्ठे हो जाया करते थे। वहीं उन्हें हवा में शादी करने की सूझी। उन्होंने हवाई जहाज़ से सफ़र करने वाले एक बेलजियन अफ़सर से असमारा और जीबूती के बीच ज़मीन से पाँच हज़ार फ़ीट ऊँचे पर शादी की। वह अफ़सर अबीसीनियन फ़ौज में भर्ती हुआ। उसके साथ ही वे आदिस अबेबा आईं। उनका पति फ्रंट चला गया तब से उन्होंने उसे तलाक सा ही दे दिया था। अब खुले आम कहा करतीं—

"एक आदमी की स्त्री बन कर रहने से न तो रोमांचक जीवन हो सकता है और न जैसा मैं चाहती हूँ, ऐडवेंचर ही किया जा सकता है।"

मोशिये लातूर के बारे में उन्होंने कहा—"जहाज़ में उनकी जो कुछ भी दुर्दशा बाक़ी थी वह हवाई जहाज़ पर पूरी हो गई। अम्बा की चोटियों को देखकर वे इतने भयभीत हो गये थे कि वास्तव में ही एक बार उनका हार्ट फेल होते होते बचा।'

'अब कैसे हैं?' मैंने उन्हें टोका।

'अजी, उनका क्या कहना है? वे तो अब करोड़पति बन गये। सोना बिछाकर उस पर चल सकते हैं, सिर्फ़ मुझे गहना बनाने के लिए उसे देने से इन्कार करते हैं। उन्हें अब काली औरतें ही अधिक पसन्द आती हैं।'

आख़िरी वाक्य कहते कहते वे हँसने लगीं। मैंने इसका कारण पूछा।

'कुछ न पूछो! काली औरतों ने मोशिये की अच्छी ख़ातिरदारी की। एक सूडानी ने उनकी नाक पर अपना दाँत बैठा दिया। मोशिये इससे बड़े ही ख़ूबसूरत बन गये। मालूम पड़ता था जैसे किसी चुहिया ने वहाँ पर अपना बिल खोद रखा है। वे और कभी मिस्र वा सूडान में मुँह दिखाने का साहस

नहीं करेंगे। वे अपने एक इटालियन कारिन्दे को अपना व्यवसाय सौंप यूरोप लौट गये। वहाँ सब जगह उनका अच्छा स्वागत होता होगा। मुझे अफ़सोस है कि लड़कों के साथ उनके पीछे पीछे ताली पीटते चलने के लिए मैं वहाँ नहीं रही।'

हानसेन कपड़े बदल कर बाहर निकले। उनके चेहरे पर दृष्टि जाते ही पाउली ने उनसे पूछा—

'आपकी नाक किसने कतर डाली ?'

'वह कुछ भी नहीं।'

'कुछ भी नहीं, फिर भी आपका सौन्दर्य इसने बढ़ा दिया है। मैं तो अब हमेशा आपके ऊपर फ़िदा...'

'आपको नचाने के लिए मेरी उँगलियाँ अब भी बची हुई हैं।' लेफ़्टिनैंट ने चलते चलते उन्हें उत्तर दिया।

'नहीं, उँगलियों पर नहीं, आपके चेहरे पर मैं फ़िदा हूँ। क्या ही सुन्दर ! क्या ही सुन्दर ! लेफ़्टिनैंट हानसेन को तग़मा मिला है।'

वे हमें सुनाकर कहती रहीं।

५

एक सप्ताह बाद मैं हानसेन से मिलने गया। बरामदे में ही पाउली मिलीं।

'लड़ाई असल में शुरू हो गई। आज अडुआ पर पचहत्तर बम बरसाये गये हैं।' उन्होंने मुझे सूचना दी। उनके चेहरे पर इस समाचार के साथ साथ आने वाली उद्विग्नता वा कौतूहल के बजाय ख़ुशी थी। उसी साँस में उन्होंने कहा—'बग़ल के कमरे में चलो। वहाँ और भी कुछ लोग इकट्ठे हुए हैं। हम लोग आज जलसा मना रहे हैं।'

'जलसा?' मैंने आश्चर्य में आकर पूछा—'लड़ाई शुरू होने के बाबत जलसा?'

'हमारे बहुत पुराने पुराने दोस्त मोर्चों पर भेजे जा रहे हैं, उनके साथ हँसने खेलने का मौक़ा और कभी मिले न मिले इसलिए आज ही उसका भी शौक़ पूरा कर लेना चाहिए।'

पाउली की बातें असंगत नहीं थीं। उनकी ज़बान दैनिक अख़बार और मनोविनोद दोनों का ही काम एक साथ किया करती, इसके प्रमाण मुझे पहले भी मिल चुके थे। अपनी इसी विशेषता के लिए ये आदिस अबेबा में देशी और विदेशी दोनों ही समाजों के बीच काफ़ी ख्याति पा चुकी थीं। इनके श्वेतांग होते हुए भी हब्शी कभी इन्हें अविश्वास की दृष्टि से नहीं देखते थे। गोरों के बीच तो ख़ैर काले लोगों के मामलों की ये सबसे बड़ी विशेषज्ञ मानी जाती थीं।

बगल के कमरे में अबीसीनियन फ़ौज के कई बड़े सेना-

नायक बैठे मिले। इनमें कई यूरोपियन थे और कई यूरोपीय सेनाओं के साथ तालीम पाये अबीसीनियन थे।

उस कमरे में पाउली के पहुँचते ही उसे अपनी ओर ज़बर्दस्ती खींचते हुए एक स्विस अफ़सर ने कहा—

'आओ बीबी, आज हम दोनों आख़िरी बार एक गिलास से शराब पियें।'

'नहीं, आओ हम आख़िरी टाँगों नाचें—' दूसरी ओर से स्वेडिश अफ़सर ने खींचते हुए कहा।

दोनों के हाथ में अपना एक एक हाथ दे पाउली भावुकता दिखाते हुए गाने लगीं—

'पैरिस का हो होटल,
शराब की हो बोतल;
बैठे होवें प्यारे
गोद में हमारे।'

चारों ओर से ख़ूब वाहवाही होने लगी। इसी बीच पाउली ने उन अफ़सरों का हाथ छोड़, दो काले अफ़सरों का हाथ पकड़ा और शुरू किया—

'अफ़सर नाचें मेरे इशारे,
स्वर्ग पहुँचें मेरे सहारे;

लड़ाई रहे दूर किनारे,
मरें वे हमेशा मेरे मारे ।'

इस बार पहली बार से भी ज़्यादा वाहवाही दी गई। नाच, गाना, शराब और रोज़ की तरह उस दिन भी देर तक चलता रहा।

'पाउली ने तो असल में हमें आज पैरिस पहुँचा दिया—' एक अफ़सर ने कहा—'पिछली लड़ाई में भी मैंने ऐसे ही बिदाई ली थी।'

'और ये इटालियन कैसे बेवकूफ़ हैं—बिना अपनी औरतों से बिदा लिये ही बम बरसाने लगे—अजी, उसे भी कोई लड़ाई नाम देता है!' दूसरे ने अपनी राय ज़ाहिर की।

'वह तो क़साई का काम है, असली लड़ाई तो पैरिस वा पाउली के यहाँ शुरू होती है।' इस प्रस्ताव से सब सहमत थे।

६

हानसेन दक्षिणी फ्रंट के लिए रवाना होने वाले थे। वे कमांडर-इन-चीफ़ के यहाँ से आख़िरी हुक्म लाने गये थे। मुझे उनके लौटने की प्रतीक्षा करनी थी। उनके कमरे में पहुँच कर मैं एक दीवान पर लेट गया।

बरामदे में पाउली की एक अबीसीनियन अफ़सर से बातें हो रही थीं—

'इस बार तुम्हें किधर की ड्यूटी मिली ?'

'बतलाना मना है।'

'जैार्जिस !' थोड़ा डाट कर पाउली ने पूछा।

'नेगुस ने ख़ुद मना किया है।'

'फिर तुम मुझसे भी छिपाओगे ? अच्छा तब...'

'नहीं, नहीं, कहे डालता हूँ !'

जैार्जिस को जिस मक़सद से उत्तरी मोर्चे पर भेजा जा रहा था, उसने सब खोलकर बतला दिया।

पाउली का इसी प्रकार का रोब गोरे-काले सब प्रकार के अफ़सरों पर चला करता। नेगुस का सारा कार्यक्रम, उनका अपने जेनरलों को दिया जाने वाला सब हुक्म मक़सद पर पहुँचने के पहले ही पाउली को मालूम हो जाया करता। ये कार्यक्रम कार्यान्वित होने के पहले इटली के रेडियो में सुना दिये जाते वा कभी कभी दूसरे दिन वे वहाँ के अख़बारों तक में छप जाते। इसे देखकर किसी को भी ताज्जुब नहीं होता।

राज्य की ख़बरें वा लड़ाई से सम्बन्ध रखती हुई बातें पाउली के यहाँ खुले आम बिका भी करतीं। इस समय उसके ख़रीददार आदिस अबेबा में इकट्ठे हुए दुनिया भर के अख़बारों के प्रतिनिधि थे। जो जिस प्रकार का दाम देता उसे उस प्रकार की ख़बर मिला करती।

इसी के आधार पर सारी दुनिया इटालो-अबीसीनियन युद्ध में ऊँट किस करवट बैठेगा इसका ठीक ठीक अन्दाज़ा बहुत जल्दी ही लगाने लगी थी।

७

स्वच्छ आकाश की ओर निहारते निहारते आदिस अबेबा वालों की आँखें थक चलीं लेकिन वहाँ पर बम बरसाने वाले इटालियन हवाई जहाज़ नहीं नज़र आये। वास्तविक ख़तरे से ख़तरे की प्रतीक्षा कहीं भयानक होती है; इसी लिए आदिस अबेबा वालों की बेचैनी और भी अधिक बढ़ती जाती।

फिर भी शहर का वायुमंडल रोज़ बरोज़ पलटता ही जाता था। नई नई अफ़वाहों से लोगों के होश हमेशा उड़ा करते। अँधेरा हो आने पर आतंक और भी अधिक बढ़ जाता। इस समय सारे शहर में ही सन्नाटा छाया रहता।

बीच चौक पर सिनेमाघर के सामने एक-आध रोशनी टिमटिमाती रहती। रेडियो पर बाजा भी चलता रहता पर रास्ता चलने वाले बिरले दिखाई देते।

आदमियों के बदले लकड़बग्घों की संख्या बढ़ती जाती। वे निधड़क शहर के बीच चौक तक आ जाते और सिनेमा के बाजे के ताल में अपना राग अलापने की कोशिश करते।

अक्सर ये रोने भी लगते। इसे भारी अपशकुन समझ अपने अपने घरों में बन्द हुए लोगों के कलेजे और भी अधिक काँपने लगते। सब वीरान हो गया सा दीखता।

मुझे भी अपने चारों तरफ़ उदासी ही उदासी दिखाई देती।

शिकार

१

'सबेरा हुआ! सबेरा हुआ!'—लकड़बग्घों ने पहली आवाज़ दी। यह मुर्ग़ों के बाँग देने की पूर्व सूचना थी। मेरी नींद खुलने लगी।

अभी अभी कोई बहुत सुन्दर स्वप्न देख रहा था। शायद मैं इटली में था, या लूसी ही आदिस अबेबा आ गई थी जिसका मतलब मेरे लिए सारी इटली का उठ कर चला आना था। मैं यूकेलिप्टस के जंगल में बैठा उससे बातें कर रहा था।

लकड़बग्घों की आवाज़ मैंने अनसुनी कर देनी चाही। अपना सुन्दर स्वप्न भंग होता नहीं देखना चाहता था। जिधर से आवाज़ आई थी उधर से मैंने बिना आँखें खोले ही करवट बदल ली।

'सबेरा हुआ तो क्या हुआ? सबेरा हुआ तो क्या हुआ?' दूसरे लकड़बग्घों की आवाज़ आई। फिर वे सब के सब एकाएक चुप हो गये। मैंने अपना सपना जारी रखा।

'आज शिकार के लिए जाना है।' मेरे नौकर वहाब ने याद दिलाया। मनबहलाव के लिए उन दिनों मैं अकसर शिकार खेलने जाया करता था। उस दिन हमें रेल से तीन चार स्टेशन दूर जाना था। बहुत देर तक मुझे चारपाई पर लेटा देख नौकर को आश्चर्य हो रहा था।

'घोड़े कसूँ ?' उसने दुबारा पूछा।

अँगड़ाइयाँ लेता हुआ मैं उठ बैठा। और कुछ देर तक अपना सपना जारी रखने की कोशिश की पर वहाब ने घर का दरवाज़ा खोल दिया। उस रोशनी में और अधिक देर तक सपने को सत्य मानते रहने का बहाना नहीं चल सकता था।

इटली में देखे हुए 'रिगोलेटो' ऑपेरा का एक स्वर मन में गूँज रहा था। मैं उसे गुनगुनाता हुआ मुँह-हाथ धोने लगा। फिर तौलिये से मुँह पोंछता बाहर निकला।

दिसंबर महीने का प्रभात था। विषुवत रेखा के पास होने के कारण यहाँ इस महीने में भी अधिक सरदी नहीं रहती। हवा में ठंढक के बजाय अधिक ताज़गी मालूम पड़ती। ओस के कारण सामने की सब चीज़ें गीली हो रही थीं। पक्षी यूकेलिप्टस के ऊँचे दरख़्तों की फुनगी पर जा बैठे थे। वहाँ से ही वे सबको अपनी ओर बुला रहे थे।

'ठहरो आया !' उन्हें उत्तर दे मैं कपड़े पहनने लगा।

कौन सी पोशाक पहनूँगा इस पर मुझे अधिक विचार नहीं करना पड़ा। अनायास ही मैंने ब्रीचिस और बन्द गले का कोट पहन लिया। फिर शीशे में अपना चेहरा देख अपने आपको कह बैठा—

'आज तो पूरे शिकारी दीखते हो।'

मन भीतर से प्रफुल्लित था, इसी लिए सामने की प्रत्येक चीज़ सुन्दर दिखाई देती। वहाब का पीठ पर बन्दूक़ लटकाना पहले अनाड़ी जँचता था। वह भी इस समय सौन्दर्य से ओत-प्रोत होता दीखने लगा।

मेरे घोड़े पर सवार होते ही वह चल दिया। एँड़ लगाने की भी ज़रूरत नहीं थी। वह मचलता हुआ फाटक के बाहर आया। यहाँ भी मैंने उसे अपनी मर्ज़ी से ही रास्ता लेने दिया।

हमें जाना था स्टेशन की ओर पर घोड़ा ले चला उसकी ठीक विपरीत दिशा में। वहाब के टोकने पर मैंने उसे उत्तर दिया—

'अजी, आज रेल को भी जल्दी नहीं पड़ी होगी।'

२

हम जिधर जा रहे थे उधर से ही सूरज निकल रहा था। मुसकराता हुआ। उसकी किरणें छिटक छिटक कर हमारे

पास आतीं और हमारे चेहरों पर हाथ फेर जाया करतीं। उनका हाथ मुलायम और हलका मीठा मीठा सुसुम था।

हम यूकेलिप्टस के जंगल से हो कर जा रहे थे। घोड़े ने पगडंडी का रास्ता लिया था। रास्ते और उसके दोनों ओर गिरे हुए पत्तों की तह जम गई थी। ये ठीक किताब के पन्नों जैसे दीखते। मैं अपने निज के इतिहास की इनके इतिहास से तुलना करने लग जाता।

घोड़ों के टाप हलके हलके पड़ रहे थे। उनके नीचे पत्ते दब जाते पर क़दम आगे बढ़ते ही वे फिर सीना तान कर फूल आते।

चारों तरफ़ शांति थी——पर सब के सब जाग्रत थे। उनकी आपस में बातें बहुत धीमे धीमे चला करतीं——आदमी उसे समझने के क़ाबिल नहीं।

चुपके से मेरे पास आ वहाब ने एक डाल पर बैठा हुआ तीतर दिखलाया।

'बैठा रहने दो।' मैंने कहा।

'उसका गोश्त बड़ा लाजवाब होता है।'

'अभी मुझे भूख नहीं।'

हम आगे बढ़ते जाते थे। मैं अपने चारों तरफ़ की शांति को ही संसार का वास्तविक नियम मान रहा था। उसे भंग

करना उचित नहीं दीखता था। मन में तरह तरह की बातें उठ रही थीं। वहाब मेरे पीछे पीछे आ रहा था। उसके चेहरे पर भी आज एक ख़ास तरह की नरमी थी।

एक स्थान पर जंगल कुछ साफ़ किया हुआ मिला। काटे गये वृक्षों के ठूँठे जड़ अब भी विद्यमान थे। यह स्थान कुछ ऊँचे पर था। यहाँ पर सूर्य का प्रकाश तीखा लगा। घोड़ा रुक गया।

हम लोग यहाँ से काफ़ी दूर तक देख सकते थे। सामने वृक्षों से ढका हुआ हरा पहाड़ नज़र आया। उसकी यह हरियाली कहीं कहीं पर ग़ायब थी इसलिए उसके पर्दे के आडम्बर होने का भी संदेह हो आता।

'यह क्या है?' मैंने पूछा।

'अनटोटो।' वहाब ने उत्तर दिया।

वहाँ की स्मृति जाग्रत हो आई। मुझे जान पड़ा मानों वधस्थल पर ले जाये जाने के लिए कोई मुझे उस दिशा में बझा कर लेता जा रहा है। मैं अपने आप पर झिड़कने लगा——

'तुम्हें पता नहीं! इस जंगल में आदमी नाम के भी जानवर रहते हैं!'

घोड़े को पीछे फिरा कर एक ऐंड़ लगाया। ऊपर से एक चाबुक भी जमाया। वह बेतहाशा भागता हुआ पीछे लौटा।

उसके टापों से ठपाठप आवाज़ निकलने लगी। आसपास बैठे पक्षी सहम कर उड़ने लगे।

स्टेशन पहुँचते पहुँचते घोड़ा पसीने पसीने हो गया। वह मुँह से साँस लेता और बारबार फेन झाड़ता। अपनी ग़लती का उसे फल भोगने के लिए मजबूर किया। इसमें कोई हिचक की बात नहीं थी।

चारों तरफ़ दृष्टि दौड़ा कर लोगों की सम्मति माँगता तो वे इसे जायज़ करार देते नज़र आते।

'दुनिया का नियम ही यही है!' उनकी आवाज़ सुनाई देती।

३

'अभी गाड़ी खुलने में कितनी देर है?' प्लैटफ़ार्म पर पहुँच कर मैंने गार्ड साहब से पूछा।

'आपकी तबीयत हो तो मैं अभी खोल दूँ। दिखाऊँ झंडी?'

'यह कैसे? अभी तो वक्त हुआ नहीं।'

'अजी, हम गाड़ी के वक्त से नहीं चलते, हमारे वक्त से गाड़ी चलती है। चलो अब चलता हूँ। हमारी औरत भी तो बाज़ार करके लौट आई, उसे आज सबेरे सबेरे घर पहुँचना है।'

आख़िरी वाक्य पूरा करते करते गार्ड साहब ने सीटी बजाई, झंडी दिखाई, गाड़ी चलने लगी। प्लैटफ़ार्म के बाहर निकल जाने पर मैंने घड़ी देखी। टाइमटेबिल में दिये हुए वक़्त के आधा घंटा पहले गाड़ी छूट गई थी।

यह अबीसीनिया के और क़ायदों के ही समान था। रास्ते में गाड़ी लड़ जाने की तो कोई गुंजायश थी नहीं, क्योंकि आदिस अबेबा से रोज़ एक ही गाड़ी जाती थी। उसे भी सिर्फ़ पचास मील का रास्ता तय करना पड़ता था। पर इसी फ़ासले में उसे कई बार प्यास लग आती थी और पचास मील में ही वह पूरी तरह से थक भी जाती थी। दिन भर चलते रहने के लिए और तीन सौ मील का रास्ता पूरे तीन दिन में पार करने के लिए हफ़्ते में सिर्फ़ दो गाड़ियाँ रहती थीं।

इस रेलगाड़ी के वक़्त से इस पर एक बार भी सफ़र करने वाले अच्छी तरह परिचित हो जाते थे। जिस दिन गार्ड साहब का अपनी स्त्री से झगड़ा रहता उस दिन उसका बनाया हुआ खाना ग़ुस्से से जला भुना देने के लिए गार्ड साहब जान बूझकर देर लगाया करते। उस दिन उन्हें पूरे हब्शी तरीक़े से प्रत्येक स्टेशन के परिचित लोगों से मिलते जाना याद आ जाता और सुबह के चले चले शाम तक चार स्टेशन पार किया करते।

ख़ैर, मेरा भाग्य प्रबल था। मैं जिस दिन सवार हुआ उस दिन गार्ड साहब का अपनी स्त्री से बड़ा मेल था। इसी लिए गाड़ी बड़ी तेज़ रफ़्तार से आगे बढ़ी।

सामने का दृश्य जल्दी जल्दी बदलने लगा। आदिस अबेबा के पक्के मकान और वहाँ का यूकेलिप्टस का जंगल जल्दी आँखों की ओट हो गया। अब चिड़ियों के घोंसलों से दिखाई देने वाले छिटफुट तुकूल सामने आने लगे। थोड़ी देर बाद कछुए की पीठ के समान चिकना और जगह जगह पर पीठ ऊँची किये मैदान मिलने लगा। आबादी शायद ही कहीं कहीं नज़र आती।

अगले स्टेशन पर गार्ड साहब ने ख़ास तरह से मेरे लिए बूना (काफ़ी) तैयार कराई। चढ़ने उतरने वाले एक भी मुसाफ़िर नहीं थे इसलिए उधर गार्ड साहब को कुछ देखना नहीं था। हम लोग इतमीनान के साथ तीन तीन बार केटली चढ़ा कर नमक मिला बूना पीते रहे। शायद गार्ड साहब की औरत ने जल्दबाज़ी न की होती तो हम लोग हब्शी स्टेशन मास्टर का उस दिन दोपहर को उनके यहाँ खाने का निमंत्रण भी स्वीकार कर लेते।

हमारे ही डब्बे में सवार होकर गार्ड साहब ने इस बार सीटी बजाई और झंडी दिखाई। उनका ध्यान हमारी नई

बन्दूक़ों की ओर गया। वे उन्हें ग़ौर से देखते रहे और बार बार उनकी तारीफ़ करते।

एकाएक हम लोगों की नज़र दूर पर खड़े एक हिरन पर पड़ी। ऐलार्म सिगनल खींच कर गार्ड साहब ने तुरंत गाड़ी खड़ी कर दी और मुझे शिकार के लिए उतरने के लिए कहा। हम लोग उस हिरन के पीछे पीछे दूर तक गये पर शर्तिया निशाना लगने के फ़ासले के वह बाहर ही रहा।

इस समय तक धूप बहुत कड़ी निकल आई थी। चलते चलते पसीना निकलने लगा था। गार्ड साहब को बार बार याद आता—

'अगर इस ओर रेल की पटरी होती तो शिकार के लिए मैं इधर ही गाड़ी दौड़ा ले चलता।'

अब वे हमारी बन्दूक़ की तारीफ़ भूलने लगे थे। उनकी दृष्टि से अगर छः सौ गज़ के फ़ासले पर भी शर्तिया निशाना न लगा सकी तो वह बन्दूक़ ही कैसी ?

पीछे लौटते समय थोड़े फ़ासले पर ही हिरन के तीन छोटे छोटे बच्चे खड़े दिखाई दिये। हम उनके शिकार के लिए निकले हैं यह उन्हें पता नहीं था। हमारे पास के हथियार देख कर भी उन्हें सन्देह नहीं हो रहा था। वे एकटक निर्भीक पर कौतूहल भरी दृष्टि से हमारी ओर देख रहे थे।

गार्ड साहब ने मुझे उधर निशाना लगाने के लिए कहा। पर वे बच्चे इतने सुन्दर दीखते थे कि उनकी ओर बन्दूक़ का मुँह मैं नहीं कर सका।

'इन्होंने तो मेरा कुछ बिगाड़ा नहीं, इन्हें ज़िन्दा रहने दीजिए।' मैंने कहा।

'तब तो आप ख़ूब शिकार करेंगे। हो चुका, चलिए अब!'

गार्ड साहब को मेरी बन्दूक़ के साथ ही साथ मुझसे भी बड़ी निराशा हुई। वे फिर मेरे डब्बे में नहीं आये। देर हो जाने के कारण उनकी स्त्री झुँझलाने लगी थीं। उन्होंने शक्ति भर इञ्जिन की रफ़्तार बढ़ा लेने का ड्राइवर को हुक्म दिया।

४

हडामा स्टेशन पर फिर हमारे पास आ गार्ड साहब कहने लगे—

'आप तो फ़ज़ूल ही बन्दूक़ रखते हैं। आपको शिकार खेलना तो आता नहीं, मुझे दे दीजिए तो मैं कुछ करामात कर दिखाऊँ।'

'आप कौन सी करामात दिखायेंगे?'

'रेलवे लाइन के दोनों तरफ़ एक भी जानवर ज़िन्दा न छोड़ूँ। यहाँ तक कि बिल्ली और कुत्तों तक को भून डालूँ।'

'उससे फ़ायदा?'

'इसी शिकार में तो बहादुरी है।'

मैं टहलता टहलता स्टेशन की प्रतिकूल दिशा में जा रहा था। उधर की लाइन पर मालगाड़ी के कुछ डब्बे खड़े दिखाई दिये। दरवाज़ा खुला रहने के कारण मैंने अन्दाज़ा लगाया शायद उनमें मवेशी भरे होंगे। पर अनुमान ग़लत निकला। उनमें आदमी भरे थे।

इन आदमियों के पास कोई वर्दी नहीं—सब अपनी अपनी निजी पोशाक में थे। उनकी बन्दूकें भी बहुत पुरानी और तरह तरह के टोंटे वाली थीं। पर ये भी हर एक के पास नहीं। जो डब्बे से उतर कर नीचे आये थे उनकी चाल से भी यह अन्दाज़ा नहीं लगता था कि ये सिपाही होंगे।

पर ये सबके सब फ़ौजी सिपाही थे और सीधे लड़ाई के मैदान में भेजे जा रहे थे। इनमें से शायद ही किसी ने पैरेड का मैदान देखा होगा, पर सब के सब वर्षों क़वायद सीखे, ज़िन्दगी ही क़वायद में बिताये हुए इटालियन सैनिकों का सामना करने जा रहे थे।

'ये लोग कहाँ जा रहे हैं?' मैंने प्रश्न किया।

'ओगाडन फ्रण्ट पर'—उत्तर मिला।

इन सैनिकों को देख कर गार्ड साहब को भी अपनी दलील पुष्ट करने की युक्ति सूझी।

'और आपकी बन्दूक़ मिल जाय तो मैं इटालियन लोगों को भी मार भगा सकता हूँ।'

'आप फ़ौज में भर्ती हो जायें, फिर बन्दूक़ आपको वैसे ही मिल जायगी।'

'नहीं, यह हमारे यहाँ का तरीक़ा नहीं। बन्दूक़ और खाने सब कुछ का हमें ख़ुद इन्तज़ाम करना पड़ता है।'

'तब तो आप के लिए लड़ाई जीतना आसान नहीं होगा।'

मेरी बात गार्ड साहब को बुरी लगी। उन्होंने विरोध करते हुए कहा—

'हम क्या इटालियनों से कम बहादुर हैं? हमारे पास बन्दूक़ें नहीं तो क्या और इटालियन लोगों के पास हवाई जहाज़ हैं तो क्या हो गया? मैं उनके हवाई जहाज़ ढेले मार मार कर गिरा दे सकता हूँ।'

मैं हँसने लगा।

'हाँ, हाँ, हवाई जहाज़ चलाने वाले भी तो आदमी होते हैं, उनके भी नाजुक आँख, नाक होते हैं, जहाँ उस पर एक ढेला जमा कि मशीन से उनका हाथ हटा। वे नाचते हुए नीचे चले आयँगे।'

बड़ी देर तक वे अपनी दलील पुष्ट करते रहे। मैंने उनसे अन्त में कहा—

'शायद आपने हवाई जहाज़ अभी देखे नहीं हैं।'

'देखे नहीं तो क्या हुआ? हमारे ढेले की पहुँच के ऊपर वे थोड़े ही उड़ सकते हैं। आदिस अबेबा में भी तो मैंने एक देखा था। वहाँ तक तो मेरा ढेला ज़रूर पहुँच जाता।'

मैं उनकी बातों का कोई ख़्याल न कर आगे बढ़ने लगा। उन्होंने मुझे रोक कर खड़ा करते हुए कहा—

'आप हम हबशियों के लड़ने के तरीक़े से वाकिफ़ नहीं। हमारे यहाँ सब के सब बहादुर होते हैं।'

हमारे पास खड़े कई हब्शी सैनिक आपस में बातें कर रहे थे। वहाब से मैंने उसका सारांश पूछा। बातें बम और हवाई जहाज़ों के बारे में चल रही थीं। इन दोनों का नाम सैनिकों ने पहले पहल सुना था। अपनी कल्पना के अनुसार वे इन्हें भयंकर डाकू समझ रहे थे।

गार्ड साहब ने उन सैनिकों को शत्रुओं के आक्रमण की याद दिला दी। बहुत से सैनिक रेल के डब्बे के बाहर निकल आये। वे बड़ी ऊँची ऊँची छलाँग मारते और पता नहीं साथ साथ कौन सी बात मंत्र की तरह बुदाबुदाते जाते। वहाब से पूछने पर पता चला कि वे अपने शत्रुओं को मैदान में उतरने के लिए ललकार रहे थे।

'यह हब्शी ढंग है।' मैंने मन ही मन स्थिर किया।

५

अबीसीनियन ट्रेन की थकावट दूर करने के लिए मैं अपने हाथ पाँव भी नहीं धो पाया था कि उसी समय बाहर ज़ोरों का कोलाहल सुनाई दिया। यह कोलाहल सामूहिक रूप से आने वाली आफ़त के कारण मचते हुए गोलमाल के समान था। लोगों के स्वर भय से काँप रहे थे और सूखे कलेजे और रुँधे गले से क्षीण पर तीखी आवाज़ निकल रही थी।

मैं बरामदे में चला आया। यहाँ लोगों के चिल्लाने की आवाज़ को मात करती हुई मोटर की आवाज़ सुनाई दी। सब लोग आकाश की ओर देखते हुए बाज़ार लगने वाले स्थान की ओर दौड़ते जा रहे थे। कितने ठोकर खाकर उलट पुलट करते हुए लुढ़क रहे थे।

मोटर की आवाज़ बढ़ती जा रही थी। थोड़ी देर में चाँदी के रंग का चमकता हुआ हवाई जहाज़ भी दिखाई देने लगा। लोगों ने उसकी आवाज़ से ही ठीक ठीक पहचान लिया था कि वह हवाई जहाज़ अपने साथ साथ मृत्यु लेता आ रहा है।

मैं गार्ड साहब को ढूँढ़ने लगा। उनका कहीं भी पता नहीं था। उनका लोप हो जाना जादू के समान हुआ। अवश्य ही वे प्लैटफ़ार्म पर लगी गाड़ी के पहिये के नीचे छिप गये होंगे।

लोगों का अन्दाज़ ठीक था। ठीक सर पर आते जाने वाला हवाई जहाज़ बम बरसाने वाला इटालियन हवाई जहाज़ था। पर उसकी मार से बचने का नहीं बल्कि भली भाँति शिकार बनने का काम सब हब्शी करते जा रहे थे। बाज़ार में एक स्थान पर ही इतने अधिक आदमी इकट्ठे होते जाते थे कि यदि उनके बीच एक भी बम गिरा दिया जाता तो शर्तिया वह अपना पूरा पूरा काम करता और कितने आदमियों के अंग-प्रत्यंग हवा में उड़ा देता।

देखते देखते हवाई जहाज़ ठीक हमारे सर पर आ गया। औरतें छाती पीट पीट कर हाहाकार मचाने लगीं। कितनों के हृदय की गति रुक जाने की आशंका होने लगी। मृत्यु को सर पर नाचता देख मैं भी सन्न हुआ ज़मीन में गंथता जा रहा था। प्रत्येक मुहूर्त ही आकाश से मृत्यु के आ टपकने की आशंका करने लगा।

वहाब को मैंने बाज़ार भेजा था। उसकी चिन्ता अलग ही लगी हुई थी। बाज़ार में खड़े हुए लोग स्पष्ट दिखाई दे रहे थे पर उतने लोगों में किसी को पहचान पाना कठिन था।

भाग्य से हवाई जहाज़ बिना किसी घटना के उपस्थित किये सीधे उड़ता चला गया। हृदय बहुत कुछ हलका हुआ पर जब तक वह आँखों के ओझल नहीं हो गया, रह रह कर

उसके लौट पड़ने का भय हुआ करता और छाती दहल जाया करती।

धीरे धीरे बाज़ार से तितर बितर हो बहुत से लोग अपने अपने घरों की ओर लौटने लगे। सब आपस में उसी भय की चर्चा कर रहे थे। कितनों को अब उसके बारे में तरह तरह का अनुमान करना याद आने लगा। जिस दिशा से वह आया था उसका ख़याल कर कुछ लोग अन्दाज़ा लगाते कि रास्ते में वह ज़रूर किसी बड़े गाँव पर अपना बम बरसा चुका होगा और अब ख़ाली ख़ाली घर लौटा जा रहा था। कुछ का कहना था कि नहीं, वह सिर्फ़ देखने आया था, अब वह अपने पीछे पीछे और भी बहुत से हवाई जहाज़ लायगा।

मैं बाज़ार की ओर चला। सबसे पहले आदमी प्लैटफ़ार्म पर गार्ड साहब अपने कपड़ों की धूल झाड़ते हुए दिखाई दिये। उनके आसपास इंजिन ड्राइवर, क्लीनर और दो चार कुली खड़े थे।

'अजी, यह एक हवाई जहाज़ कौन सी चीज़ है, सैकड़ों एक साथ आ जायें फिर भी कुछ नहीं बिगाड़ सकते—'गार्ड साहब कह रहे थे।

मुझे उनकी, हवाई जहाज़ को ढेला मारकर गिरा देने की, बात याद आई। इस समय भी वे रह रहकर अपनी धूल झाड़ते जा रहे थे।

थोड़ा और आगे जाने पर एक अच्छे बातूनी के इर्द गिर्द खड़ा लोगों का गिरोह दिखाई दिया। टिप्पणी करने के लिए बहुत-सी टुकड़ियाँ बन चुकी थीं। एक बात जिससे सब लोग सहमत थे, वह यह थी कि हवाई जहाज़ आया था वास्तव में हबशी लोगों का शिकार खेलने, पर किसी विशेष अनहोनी रुकावट के कारण इस बार चूक गया।

कितने उसके शीघ्र लौटने की अभी से प्रतीक्षा करने लगे। वे बार बार आकाश की ओर देखा करते। मृत्यु के सर पर मँडरा जाने पर भी वे उतनी आसानी से बच जा सकते हैं इस बात पर सहसा विश्वास कर लेना उनके लिए कठिन हो रहा था।



"दीदी"

(सदोमा)

दीदी

१

"लूसी"

क्रिसमस कार्ड पर लिखे इन दो अक्षरों में मैं उसका चेहरा देख रहा था। वही खिलता हुआ यौवन। चपलता। संसार द्वारा लादी गई चिन्ता के विरुद्ध वही घमासान संग्राम। इतराते, मस्त जीवन को विकसित देख पाने की लालसा। वही खिलती हुई कली।

कितने दिनों से मैंने यह चेहरा नहीं देखा? पेन्सिल के आँके गये दो अक्षर मेरे लिए दो घोड़ों का रथ बन गये। वे मुझे भगा ले चले। अपने नीरस वर्तमान को छोड़ मैं सुखद अतीत की दुनिया में पहुँचा दिया गया।

थोड़ी देर विचरण कर लेने के बाद। यह क्या? मैं दूर खिंचा जा रहा था। कहाँ? फिर इसी वर्तमान की ओर? उसका चेहरा दिखाई दिया। वह कह रही थी—

'मैं आऊँगी, आऊँगी।'

इसमें संगीत भरा था। वही काँपते हुए अतीत का संगीत। दूर जाते समय इसी का तो सहारा रहता है। मालूम नहीं कितनी बार यह स्वर मेरे भीतर गूँज चुका होगा। कभी मैं उसे मना करता, कभी अपने पास बुलाता, और अकसर उसमें सिवा मधुर स्वर के और कुछ समझने की मेरी शक्ति जाती रहती।

दो अक्षरों की डाक मुझे आधी रात को मिली थी। बहुत दिनों का बेसुरा स्वर उन्होंने दुरुस्त कर दिया। अपने घर के बाहर अफ़्रीका के घने अन्धकार में मैं सिर्फ़ उनका ही प्रकाश देख रहा था।

२

दो दिनों बाद हवाई डाक से और एक ख़त मिला। उस पर वियना की मुहर लगी थी। पते के स्थान पर लिखे हुए अक्षर होंठ दबाकर मुसकरा रहे थे। मैं समझ गया—अवश्य ही सुन्दर समाचार है।

यूकेलिप्टस कुंज के नीचे बैठ उसे खोला। कई पृष्ठ थे। हवा के कारण उनके पंख फटफटाने लगे। यह आज़ाद पक्षी के दिल का विस्तार से फैलना था। वह सीकचों के बाहर निकल आया था। स्वतन्त्र।

मेरे नैपल्स छोड़ने के बाद ही वह एक टीरोली जत्थे के साथ भग कर आस्ट्रिया जा पहुँची। वियेना में उसने नर्स का

पाठ्यक्रम पूरा किया। अबीसीनिया आने के लिए रेडक्रॉस में भर्ती हुई। आस्ट्रियन सरकार ने उसे पासपोर्ट तो इटली के भय से नहीं दिया, किन्तु 'पहचान का कार्ड' ले लेने में वह समर्थ हुई जिसके आधार पर वह अबीसीनिया पहुँच सकती थी। और आगे की उसे चिन्ता भी नहीं थी।

मार्सेल से क्रिसमस के लगभग छूटने वाले जहाज़ से उसने यूरोप को तिलांजलि देना तय किया था। हिसाब लगा कर मैं उसके पहुँचने का दिन गिनने लगा। अपने मन की गति से ही जहाज़ की रफ़्तार बढ़ा कर हिसाब लगाया। ग़लत निकला। अफ़सोस।

बूढ़े हुए साल के ख़तम होने में पाँच दिन की देर थी; उसके मेरे पास तक पहुँचने में भी उन्हीं यूकेलिप्टस के पेड़ के समान लम्बे लम्बे दिन और रात की ओट लगी थी।

'इस समय वह कहाँ होगी?' मैंने हिसाब लगाया।

सूडान के सामने लाल सागर में। अम्बा, सोफ़ी, ख़ून। इन सब के दाग़ उसके चेहरे पर होंगे?

मैं सिहर उठा।

३

नया वर्ष आरम्भ होने के दिन वह आई। मैं उसे लेने स्टेशन गया। आदिस अबेबा स्टेशन की टिमटिमाती हुई

रोशनी में वह आँखें फाड़ फाड़ कर मुझे ढूँढ़ रही थी। देखा पहले उसने ही। पुकारा। बुलाया।

अपनी कल्पना में जैसा परिवर्तित हुआ उसका चेहरा मैं समझ रहा था वास्तव में वह उससे भिन्न निकला। मदमस्ती के बदले प्रौढ़ता के लक्षण अधिक स्पष्ट थे। सौन्दर्य के अभिमान के बदले दया और सहानुभूति से भरे भाव। निःस्वार्थ। ऐसे चेहरे दूसरों के सुख के लिए अपने को न्योछावर करने के लिए हमेशा तैयार रहते हैं। एक किनारे कोने में छिनती 'चपलता' के लिए उदासी के साथ साथ उस दुःख को भुला डालने के लिए चुपके चुपके विवेक शक्ति के फुसलाते रहने का खेल।

बाल अब भी लहरदार थे पर पोशाक नर्स की। सफ़ेद अलखला न तो उसके शरीर के माप का था और न वह उसे फबता ही था। मालूम पड़ता था जैसे उस लिवास में वह ज़बर्दस्ती लपेट दी गई है। भूल से वह अबीसीनिया जैसे निर्जन प्रदेश में आ टपकी है, इसमें संदेह करने की गुंजायश नहीं दिखाई दी।

मुझे चकित देख वह मुसकराई। मुँह खुलते ही उसके ऊपरी लिवास का आडम्बर मेरे सामने से लोप हो गया। पर उसके चेहरे पर अब भी गंभीरता थी। पहले की भाँति बाल

खींच वा गालों पर थपकियाँ दे मिलने का साहस नहीं कर सका। वही मुझसे बड़ी हो गई दीखती थी।

'मैं सिस्टर हो गई हूँ।' उसके भीतर का चलता हुआ संघर्ष सतह पर आ गया। विषाद और आनन्द एक साथ ही फट कर टपकने लगा।

मैं जितनी भी ज़बानें जानता था उन सब में उसने मुझे सिस्टर कहने के लिए कहा। यूरोप की सब ज़बानों में मैंने कहा, पर उसे संतोष नहीं हुआ।

'तुम अपने देश की ज़बानों में कहो।'

मैं एक एक कर कहने लगा। वह हँसती रही। शब्दों का उच्चारण उसे विचित्र ढङ्ग का मालूम पड़ता था।

'दीदी—' मेरे मुँह से निकला।

वह जी खोल कर हँसने लगी। कई बार उसने मुझसे वह शब्द कहलवाया। प्रत्येक बार ही वह हँसते हँसते लोट जाती।

'इसमें अजीब गुदगुदी है—' उसने कहा—'मैं तुम्हारी दीदी!'

ख़ुद उच्चारण करने पर उसके लिए हँसी सम्हाल पाना कठिन हो गया। उसकी आँखों से आँसू निकलने लगे। फिर भी हँसना बन्द नहीं हुआ।

४

उसने शीघ्र ही फ्रंट पर जाने की तैयारी की। मेरे परिचित गराजमाच और लेफ्टिनैंट हानसेन दक्षिणी फ्रंट गये थे। वहाँ से ही इन दिनों घमासान युद्ध की ख़बरें आया करतीं। मैंने उधर ही रवाना होने की राय दी। वह मान गई।

मेरे साथ चलने में उसे एतराज हुआ।

'तुम किस लिए जाओगे ?' उसने पूछा।

'लड़ाई देखने।'

'आदमियों के शिकार में कौन-सा सौन्दर्य है ?'

फिर भी यह लड़ाई और लड़ाइयों से निराली है। इसमें बम और तोप का सामना ढाल और तलवार से किया जा रहा है। हवाई जहाज़ों के आक्रमण बर्छों से रोके जा रहे हैं। छिप कर लड़ने वालों का सामना खुले मैदान में आकर पैंतरा बदलने वाले कर रहे हैं। यह...'

'बस बस !' उसने टोका—'ये दलीलें रहने दो। मैं सब अख़बारों में पढ़ चुकी हूँ। मुझे साफ़ खोल कर क्यों नहीं कहते कि अपनी सोफ़ी के देश पर का आक्रमण अपने ऊपर मान रहे हो।'

'चुप ! चुप !' कह कर मैंने बात का रुख़ पलट दिया।

सोफ़ी का ज़िक्र मैंने अख़बार में भेजे लेखों में भी किया था, पर इस समय उसे स्वीकार करते संकोच हो रहा था।

'ख़ैर !' कह कर वह चुप रही।

रवाना होने का दिन आया। सब तरह की व्यवस्था देखते दाखते दोपहर हो आया। वह स्वयं एक छोटे पीपल की हलकी छाया में उसकी सूँड़ पर बैठी यात्रा की सब आख़िरी हिदायतें स्वयं दे रही थी।

धूप तेज़ हो आई। उसके चेहरे पर भी लगने लगी। मुँह लाल हो गया। उस पर पसीने की छोटी छोटी बूँदें जमने लगीं। अपने छोटे रुमाल से वह उसे पोंछती पर कुछ फ़ायदा नहीं होता। चेहरा तुरंत ही फिर से पसीज आता।

सामने मोटर ट्रक पर की बोझाई चल रही थी। दवा और पेट्रोल की पेटियाँ उस पर लद चुकीं। उसने मेरा सामान भी उस पर डाल देने के लिए कहा।

ड्राइवर की बग़ल में दो आदमियों की जगह बनाई गई थी। उसने अपने साथ मुझे वहाँ बैठने के लिए कहा। मैं थोड़ा हिचक रहा था।

'तुम तो मुझसे भी ज़्यादा कट्टर धार्मिक बन गये दीखते हो ! आओ !' उसने मेरा हाथ पकड़ कर भीतर खींच लिया।

उसके रोएँ खड़े हो आये थे। इसे वह न छिपा सकी।

५

हावाश नदी के किनारे वीरान प्रदेश मिला। रास्ते के दोनों तरफ़ सूखी झाड़ियाँ थीं। बहुत दूर दूर पर हलके पत्तों से ढके हुए वृक्ष मिलते। घनी छाया वाले वृक्षों के अभाव में चिड़ियों ने इन्हीं वृक्षों पर अपने घोंसले बना रखे थे।

इस समय की धूप में उनके अपने घोंसलों में विश्राम लेने का वक़् था। उनकी शान्ति हम लोगों के ट्रक की आवाज़ ने भंग की। वे चौकन्ने हो उठे। अपनी ही दिशा में मोटर आती देख वे घोंसलों से निकल वीरान झाड़ियों में शरण लेने के लिए उड़ने लगते। उनकी हालत और भी बदतर हो जाती। एक तो धूप और दूसरे छिपने की भी कम गुंजायश। झाड़ियों में रहने पर उन पर अचूक निशाना लग सकता है।

वहाब ने कई बार मुझे उनकी ओर दिखाया। उसका उत्तर दीदी ने दिया—

'तुम मज़बूत हो इसलिए असहाय जीवों को इस वीरान प्रदेश में भी ज़िन्दा नहीं देखना चाहते। दुनियाँ की यह दलील लाजवाब है।'

आदमी यहाँ भूले भटके भी न मिलते। कहीं कहीं पर संयोग से झोपड़े मिलते भी तो वे भी वीरान दीखते। मुझे

आश्चर्य होता। पर आगे चलते चलते पता लग गया कि लोग हमारी मोटर की आवाज़ सुन कर घर छोड़ जङ्गलों में भागने लगते हैं। कई बार उन्हें दूरबीन से तीन-तीन चार-चार सौ गज़ की दूरी पर लुढ़कते पुढ़कते देखा। उन लोगों ने जीवन में कभी भी मोटर जैसी चीज़ नहीं देखी थी। इसलिए इसकी आवाज़ उनके लिए प्रलय की हुँकार मालूम पड़ती। जो औरतें नदी में पानी लेने गई थीं वे भी घड़ा छोड़ कर बेतहाशा भागने लगी थीं।

हावाश नदी में पानी कम था फिर भी हम लोगों के ट्रक को अँटका रखने के लिए पर्याप्त साबित हुआ। अब ट्रक को ढकेल कर बाहर निकालने के लिए पन्द्रह बीस आदमियों की ज़रूरत थी। आस-पास एक आदमी भी दिखाई नहीं दे रहा था।

दो जबनियों को साथ ले वहाब आस-पास के कई गाँवों में आदमी बटोरने गया। मोटर के आतंक से निश्चिंत करा कर ट्रक के पास तक आदमियों को ले आना आसान काम नहीं था।

बहुत समझाने बुझाने और भोजन तथा पैसे का लालच देने पर लोग आये। बहुत सहमते हुए उन्होंने ट्रक को छुआ। उन्हें भय हो रहा था कि कहीं वह दैत्य हठात् जग कर उन्हें कुचल न डाले। एक बूढ़ा उसका मख़ौल भी उड़ाने लगा—

'अभी तो सों-सों करते हुए हमें कुचलने के लिए हज़रत दौड़ रहे थे, अब वह ताक़त क्यों का.फ़ूर हो गई ?'

दूसरे किनारे ट्रक के आ जाने पर ढकेलने वालों को वादे के अनुसार मज़दूरी दी गई। एक एक को दो दो पैसे मिले। पर यही उनके लिए अगाध सम्पत्ति थी। इतने अधिक मिहनताने की उन्होंने कभी भी कल्पना नहीं की थी।

हावाश पार का प्रदेश दलदल जैसा मिला। यहाँ मच्छरों की भरमार थी। मोटर के सामने के शीशे पर वे इतनी संख्या में आ बैठे कि आगे का रास्ता ही दिखाई न देता। हम लोग सोचने लगे थे कि यदि ट्रक का कोई हिस्सा खुला रहता तो मच्छर हमें अवश्य ही टाँग कर उठा ले जाते।

पर इस प्रदेश में भी आदमी रहते थे। जो इन लोगों की जानकारी रखते थे उनसे पता चला कि वे सिर्फ़ छः महीने उस प्रदेश में रह पाते हैं और मवेशी पाल कर अपनी आजीविका चलाते हैं। फिर छः महीने उनका इलाक़ा पानी से भरा रहता है। उस समय वे दूर के जंगलों में जाकर निवास करते हैं।

सौभाग्य से यह बहुत बड़ा इलाक़ा नहीं था। दस बारह मील जाने पर फिर सूखी भूमि मिलने लगी। पर यहाँ पानी का नामोनिशान भी नहीं। इस इलाक़े के लोग सप्ताह में एक

दिन नदी किनारे ख़ुद पानी लाने और मवेशियों को पानी पिलाने आया करते हैं।

हम लोग इस इलाक़े को भी पार करते गये। इलाक़ा और वहाँ के आदमियों की रहने की अद्भुत प्रणाली देख कर हमें आश्चर्य होता। हम उनकी मुसीबतों से दुनियाँ के और हिस्से में रहने वालों के जीवन से तुलना करने लगते।

'पर इतना होने पर भी तो सभ्य लोगों को संतोष नहीं है'—दीदी कहतीं—'इस वीरान इलाक़े में इतनी मुसीबतें झेलते हुए 'शांति' से रहने देना सभ्य लोगों को अखरता है। अगर ऐसा न होता तो फिर इन लोगों को नष्ट करने के लिए वैसे क़ीमती बम यहाँ लाकर क्यों बरसाये जाते!

'मुझे तो आदमियों की यह प्रवृत्ति बिलकुल ही समझ में नहीं आती।'

६

कलकल करती हुई नदी के किनारे हमारे ख़ीमे लगाये गये। रात अँधेरी थी। टिमटिमाते हुए तारात्रों की ज्योति में जितनी दूर तक हम दृष्टि दौड़ा सकते दौड़ाते किन्तु अपने चारों तरफ़ के धुँधले ऊँचे पहाड़ के पार न पहुँच पाते।

सन्नाटा। चारों तरफ़ निःशब्द। झींगुरों का बीन बाजा एक लय और एक रफ़्तार में चलता। जब वे दम लेने के

लिए चुप होते तो छोटे छोटे मेढ़कों की धीमी धीमी आवाज़ हमारे कानों में आने लगती। कभी कभी मछलियों के छप-छप करने की आहट मिलती। मालूम पड़ता, वे किनारे पर चलते हुए कंसर्ट के लय में पाँव पटक पटक कर नाचने का अभ्यास करने चली हों। छोटे छोटे पत्थर नदी के प्रवाह में लुढ़क चलते, इनसे निकली हुई आवाज़ तबले के ताल का काम किया करती। और इन सबके ऊपर, सबको सुर का ढङ्ग दिखाते जाने वाली कलकल की मीठी मीठी धुन।

दीदी ने अपने तंबू में मुझे खाने के लिए बुलाया। सफ़री मेज़ पर रखी हुई छोटी-सी मोमबत्ती के प्रकाश में तंबू के भीतर की चीज़ें अन्दाज़ से पहचानी जा सकती थीं। थोड़ा-बहुत प्रकाश उसके चेहरे पर भी पड़ रहा था।

इस समय वह मुझे लावण्य से भरा दिखाई दिया। नर्स की पोशाक़ उसने उतार डाली थी। शरीर पर सिर्फ़ हलके आसमानी रङ्ग का गाउन था। हम लोग आमने सामने बैठे। उसके चेहरे से मैं अपनी दृष्टि हटा नहीं पा रहा था। वह मुझे किसी प्रवीण इटालियन कलाकार द्वारा गढ़ी गई माडोना की प्रस्तर मूर्ति सी जान पड़ी।

बिलकुल सजीव। शायद स्वयं मिखाएलेंगेलो ने गढ़ी थी। शरीर की प्रत्येक बारीकी धुँधली पर बिलकुल ही स्पष्ट

दिखाई दे जाती। आँखें स्वप्न देख रही थीं। अंग अजन्ता की चित्रकारी के समान नाज़ुक। रङ्ग में सूर्य की पहली किरण के रङ्ग की हलकी फीकी गुलाबी।

खाने के लिए लिया हुआ मेरे हाथ का चम्मच नीचे गिर गया। कुछ देर बाद काँटा भी रिकाबी पर गिरा। खन्न की आवाज़ हुई। उसने मेरी ओर देखा।

'तुम्हें तो खाना भी नहीं आता! देखो तो, अपने कपड़े कैसे ख़राब कर लिये! तुम्हारे गले में बच्चों की तरह मुझे 'सर्वियेत' बाँध देना पड़ेगा।'

वह ढूँढ़ने लगी। सर्वियेत के अभाव में एक तौलिया मेरे गले से लटका दिया। उसके हाथ छोटे, नरम और बड़े चिकने थे।

दूसरा चम्मच भी मेरे हाथ से छूट कर छप्प से दलिया में गिरा। उसके छींटे मेरे चेहरे पर भी पड़े। वह हँसने लगी।

'तुम निरे बच्चे हो। मुझे अपने हाथ से तुम्हें खिलाना भी पड़ेगा।'

वह स्वयं चारपाई के एक किनारे बैठ मुझे खिलाने लगी।

'और तुम आये हो अफ्रिका! यहाँ के वीरान प्रदेश में!' वह स्वयं आगे कहती गई—'अब तक तुम्हें यहाँ देखता कौन था?'

'ख़ुद।'

'तब तुम जैसे रहते होगे उसका मैं भली भाँति अंदाज़ा लगा सकती हूँ। तुम्हारी शिकारी पोशाक के टूटे हुए बटन देख कर ही मुझे अन्दाज़ मिल गया था।'

शर्म के मारे मैं गड़ा जा रहा था।

'क्या नाराज़ हो गये ?' अपनी ओर देखने के लिए बाध्य करते हुए उसने कहा—'ग़ुस्सा तो तुम में कम नहीं। फिर भी हज़रत को मेरी ही गोद में बैठकर खाना पड़ रहा है। तुम मर्द लोग चाहे जितने सयाने क्यों न हो जाओ, रह जाते हो नादान बच्चे ही।'

मैं चुप रहा। मेरा मुँह-हाथ पोंछकर मुझे मेरे अपने तंबू में ले आई। मैं बिस्तरे पर बैठ गया।

'अब सोते क्यों नहीं ?' उसने हुक्म देते हुए कहा—'अब क्या राजा-रानी की कहानी कह कर तुम्हारे लिए नींद बुलानी पड़ेगी ?'

मैं चुपचाप चादर तानकर सो गया।

७

उसके पाँवों की आहट से नींद टूटी। उसने आस्ते-आस्ते तंबू का दरवाज़ा हटाया। एक हाथ में चाय का प्याला लिये थी इसलिए दरवाज़े को हटाने में उसे असुविधा हो रही थी।

सबेरा हो गया था। अंधकार बहुत दूर क्षितिज के पास जा भाग खड़ा हुआ था। वहीं कुछ कुछ काला और अंधकार सा दीखता। संभव है, पहाड़ रहे हैं।

'उठो!' मेरी सफ़री खाट पर बैठते हुए उसने कहा—'चाय पी लो।'

पिछली रात की ही भाँति उसने चाय पिलानी चाही। मैं झिझका। बाधा देने लगा।

'पछताओगे।' धीरे से मेरे कान में कहा।

'क्यों?'

'तुम्हें पता नहीं—किस दुनिया के रास्ते पर हो?'

'जानता हूँ। फ्रण्ट के।'

'कभी अनुमान करने की कोशिश भी की है। फ्रण्ट कैसा दीखता है?'

'जब असल में ही देखने जा रहा हूँ तो अनुमान करने की क्या आवश्यकता?'

'ख़ैर! देखोगे।' उसने साँस ली।

मैं चुप रहा।

'भोले भाले भाई! फ्रण्ट पर हम लोगों की जान ख़तरे में रहेगी। इटालियन बम सबसे पहले रेड क्रास पर ही बरसते हैं। किसी भी क्षण हम गोली के शिकार बन जा सकते हैं। हवाई

जहाज़ ने मिहरबानी की तो दूसरे ही मिनट हमारा गोश्त कीड़े-मकोड़े घसीट घसीट कर खाने लगेंगे। इसी लिए कहती हूँ—जितने ही मुहूर्त हम बचे हैं, हम क्यों न सुख से उनका उपभोग करें ?'

८

मैदान ही मैदान। जहाँ तक दृष्टि दौड़ती, मैदान ही मैदान दिखाई देता। समूचा अरूसी प्रदेश ही एक बड़ा सा मैदान है। चारों तरफ़ का दृश्य पीले रंग के समुद्र सा दिखाई देता। थोड़ी भी हवा चलने पर उसमें लहरें उठने लगतीं।

सारे मैदान में छाती के बराबर ऊँची घास उग आई थी। उनके विकास में बाधा देने वाला शायद कोई भी सामने नहीं आता था। कभी कभी उनके भीतर से छोटे छोटे हिरन अपने बच्चों के साथ निकलते हुए दिखाई देते। वे अवाक् होकर हमारी ओर ताका करते। उनके निश्चिन्तता से विचरण करते रहने में शायद ही कभी कोई खलल डालने आया करता, इसी लिए वे जल्दी भयभीत भी नहीं होते। हमारे सौ दो सौ गज़ के फ़ासले पर पहुँच जाने पर भी उनका हमारी ओर कौतूहल भरी दृष्टि डालते रहना जारी रहता।

आदमी पन्द्रह बीस मील पर इने गिने दिखाई देते। इनकी दृष्टि भी हिरनों की भाँति होती, पर आदमी होने के

कारण वे आदमी देख कर अधिक भयभीत हो जाया करते। कभी कभी वे ठीक हिरनों की तरह भाग कर घास में जा छिपते।

बाहरी दुनियाँ से अब तक इन आदमियों का कोई ताल्लुक नहीं रहा। सभ्यता के विकास के साथ आई हुई किसी भी वस्तु का व्यवहार तो दूर रहा, उन्होंने शायद ही कभी उनका उपभोग करते किसी को देखा था। यहाँ तक कि रुई के बने कपड़ों से भी वे बहुत दूर तक अपरिचित थे। उनकी औरतें अब भी सब की सब खाल पहना करती हैं। ये खालें अधिकतर हिरन की होती हैं इस कारण दूर से उन औरतों को देख कर कभी कभी उनके हिरन होने का भी सन्देह हो जाया करता है।

इन लोगों के घर घास और मिट्टी के बने होते हैं। उन्हीं में वे अपने पालतू जानवरों के साथ रहा करते हैं। घर के ही आस-पास की भूमि में राई सा एक अन्न छींट दिया करते हैं जिसके उपजते देर नहीं लगती और न उसकी खेती में मिहनत की आवश्यकता होती है। उसी पर उनका गुज़ारा चलता है।

इस प्रदेश के जीवों से बिना किसी प्रकार की छेड़-छाड़ किये हम आगे बढ़ते गये। प्रकृति ने सारी दुनियाँ से अछूता रखने के लिए ही उन्हें गढ़ा था। शायद इसी लिए जीवन

के लिए आवश्यक सामान भी आस-पास में जुटा देना वह नहीं भूली थी।

इस प्रदेश में प्रत्येक आठ दस मील पर पानी के सोते बहते हुए मिलते। उनके पास पहुँचने का रास्ता थोड़ा ढालुआँ रहा करता इसी लिए ड्राइवर उन स्थानों पर मोटर बन्द कर देता। गाड़ी अनायास ही लुढ़कती हुई आगे बढ़ती। सोते के पास पहुँचने के कुछ दूर पहले से ही उसके होंठ चापने की कोशिश करते हुए खिलखिलाने की सी आवाज़ सुनाई दिया करती। पानी एक बालिश्त गहरा रहता।

वाबी नदी के किनारे अरूसी प्रदेश की सीमा ख़तम हुई। नदी में हावाश नदी जितना पानी था और उसके पार करने का भी हमारा ढंग पुराना ही रहा। जहाँ से हम पार कर रहे थे उस स्थान पर नदी के बीच बीच में रेती पड़ गई थी इस कारण इसका पार करना आसान हो गया था।

इन रेतियों पर बतख़ों ने अपना साम्राज्य जमाया था। झुंड के झुंड वे दूर से उड़ते हुए आते और इन रेतियों पर उतरा करते।

सूर्यास्त के थोड़ा पहले तो उनका ताँता ख़तम ही नहीं दिखाई देता। शायद ये भी प्रकृति के सौन्दर्योपासक थे, नहीं तो हरे भरे सुन्दर स्थान ही इन्हें क्यों पसन्द आते?

मेरे बहुत मना करते रहने पर भी वहाब ने बंदूक़ की एक आवाज़ कर उन्हें चौकन्ना बना दिया। वे सहम गये। आदमियों ने बंदूक़ जैसी चीज़ ईजाद की है यह शायद उन्होंने उस दिन पहले पहल ही अनुभव किया। उनके झुंड हमसे सशंकित हो पानी पर उतरने का और कोई दूसरा स्थान ढूँढ़ने के लिए आगे बढ़े।

हम भी आगे चले। अब हमने बाली प्रदेश में प्रवेश किया। इसी प्रदेश के एक सिरे पर इन दिनों घमासान लड़ाई चल रही थी।

अरूसी प्रदेश में मैदान तैयार करते करते शायद प्रकृति थक गई थी इसी लिए उसने बाली को उससे बिलकुल ही भिन्न बनाया है। यहाँ अरूसी की तरह बहुत दूर तक का रास्ता हम एक दृष्टि में ही नहीं देख सकते थे। यह प्रदेश लाजो जैसे तेरह हज़ार फ़ीट ऊँचे पहाड़, दर्रे, बड़े मैदान, नदी, रेगिस्तान, दलदल आदि क़िस्म क़िस्म के कितने टुकड़ों से बना है। ज़मीन यहाँ की काफ़ी उपजाऊ है पर आबादी मकई के पंचगोटिया बाल जैसी। बहुत सी उर्वरा भूमि इस भाँति की दिखाई दी जहाँ झुंड के झुंड घोड़े चर रहे थे। इन्होंने भी हिरनों की तरह छलाँग मारना सीख लिया था। बहुत बार ये हम लोगों के ट्रक के साथ बाज़ी लगाते और बहुत दूर तक आगे आगे दौड़ते चले आते।

लाजो के पहाड़ों में पानी बरस जाने के कारण रास्तों पर फिसलाहट आ गई थी। हमारा वज़नी ट्रक उस पर पैंतरा काटते हुए चलता और कभी कभी हज़ारों फ़ीट नीचे छलाँग मारने की चेष्टा करने लगता। आस-पास की झाड़ियों से डाल पत्ते तोड़कर हम टायर के नीचे लगा देते और उस पर ट्रक कुछ सीधा हो चलता।

सामने का दृश्य पल-पल पर बदला करता। रास्ता जलेबी की तरह पेंच वाले घाटों से बना था। एक स्थान पर मालूम पड़ता पहाड़ यहीं ख़तम हो जाते हैं, पर ज़रा सा घूमते ही पचासों चोटियाँ आगे के रास्ते में एक साथ ही नज़र आने लगतीं। वे यमज भाई-बहनों की भाँति एक क़तार में हमारी अभ्यर्थना के लिए खड़ी रहतीं।

हम फ्रंट की ओर जा रहे थे इसलिए रास्ता फूँक फूँक कर चलना पड़ता था। कभी कभी भय होने लगता, कोई घुमाव हमें अचानक इटालियन लोगों की मशीनगनों के ठीक सामने ला कर न खड़ा कर दे। पहाड़ का प्रत्येक घुमाव ही हमारे लिए नये नये आश्चर्य उपस्थित किया करता इसलिए कोई भी बात अनहोनी नहीं दीखती थी।

शायद इसी से भयभीत होकर ट्रक भी सहम सहम कर आगे पाँव बढ़ाता था।

६

एक सप्ताह की ट्रक-यात्रा के बाद हम लोग गोरे पहुँचे। आगे जाने का और रास्ता नहीं था। पता लगाने पर ज्ञात हुआ उन दिनों इटालियन उस स्थान से सिर्फ़ तीस-चालीस मील की दूरी पर थे।

गोरे गाँव सूर्य की अन्तिम किरणों में रँग रहा था। घास के झोपड़ों में ख़ालिस सोने की चमक थी। उन पर आँखें नहीं टिकाई जा सकती थीं।

दीदी को भोजन तैयार करने के लिए कह मैं दो जबनिया और वहाब को साथ ले गाँव की ओर चला। यह गाँव नदी किनारे ऊँची भूमि पर बसा था। बस्ती अबीसीनिया का ख़्याल रखते हुए बड़ी ही कही जा सकती थी। वहाँ लगभग तीन सौ झोपड़े होंगे।

हम लोग सारे गाँव की परिक्रमा कर आये, उसका हर एक रास्ता छान डाला पर एक भी आदमी दिखाई नहीं दिया। कहीं कोई मवेशी भी नहीं। सिर्फ़ दो एक मुर्ग़ियाँ कहीं कहीं फुदकती हुई दिखलाई पड़ीं। प्लेग और कालेरा के डर से छोड़े हुए गाँव से भी इस गाँव की हालत बदतर हो रही थी।

अँधेरा हो जाने पर हम लोग ट्रक की ओर लौटे। गाँव की सीमा के बाहर कुछ झाड़ियाँ थीं। उनके बीच किसी के बन्दूक़ भरने की आवाज़ आई। घोड़ा भी दबाया गया पर सिर्फ़ 'पुट' की आवाज़ निकली। बन्दूक़ फिर से भरी जाने लगी।

'मत मारो! मत मारो!' वहाब चिल्ला उठा—'हम तुम्हारे ही दल के हैं। तुम्हारे ही भाई हैं।'

दिखाई दे जाने पर झाड़ियों के भीतर से दो पहरेदार बाहर निकले। उनके हाथ में पुराने ढङ्ग की बन्दूक़ें थीं।

उनसे गाँव और फ्रंट की ख़बर मिली। तीन-चार दिन पहले एक इटालियन हवाई जहाज़ गाँव के ऊपर से उड़ गया था। उसी दिन से हब्शी सरकार की ओर से गाँव वालों को हुक्म दे दिया गया था कि वे सूर्योदय से सूर्यास्त तक अपने घरों में न रहें। लोग बड़े तड़के उठते, उसी समय थोड़ा बहुत खाना पका लेते, और उसे साथ लेते हुए दूर के खेत वा झाड़ियों में जा छिपते। धूप, वर्षा, भूख से रोज़ाना झुलस कर बहुत रात गये वे घर लौटते।

फ्रंट का बयान करते हुए उन्होंने कहा कि वह वहाँ से बहुत कम दूर रह गया है। कुछ मील आगे जाने पर ही तोपों की आवाज़ सुनाई देने लगती है। अभी हाल में देजाजमाच

(जेनरल) बयाना की बीस हज़ार फ़ौज मोर्चे पर पहुँच गई है और उसने इटालियन लोगों का आगे बढ़ना रोक दिया है। कहीं कहीं से शत्रुओं की असकारी फ़ौज के पीछे हटने की भी ख़बरें आने लगी थीं।

उन पहरेदारों को हम लोग अपने साथ ट्रक की ओर ले चले। उन्हें भय हुआ, हम उन्हें कोर्ट मार्शल करने जा रहे हैं। वे मेरे पावों पर लोट कर मुझसे माफ़ी माँगने लगे। बहुत समझाने बुझाने पर उनका भय दूर हुआ।

उस रात हम लोगों के रहने की व्यवस्था एक बालम-बरास (लेफ़्टिनैंट) के घर में की गई। उन्होंने जहाँ तक उनसे बन पड़ा, हम लोगों की ख़ातिरदारी में कुछ उठा नहीं रखा पर हब्शी पद्धति के अनुसार आख़िर आख़िर तक कमी के लिए माफ़ी माँगते रहे। सबसे बड़ा अफ़सोस उन्हें यह था कि अपनी ख़ातिरदारी में हम लोगों ने उन्हें उनका एक मात्र हिरन काटने नहीं दिया।

१०

गाँव वालों की चहल-पहल और जानवरों के हाँके जाने की आवाज़ से नींद टूटी। झोपड़े का फूस कई स्थानों पर अलग हो गया था। उनके बीच से एक बड़ा सा चमकता हुआ तारा

दिखाई देता था। शायद 'सुकवा' था। वह अभी भी बहुत ऊँचे पर था। उसमें बड़ी चमक थी।

मैं उधर से मुँह फेर करवट बदल और एक नींद लेना चाहता था उसी समय दीदी ने जगाया।

'अभी हवाई जहाज़ नहीं आते'—मैंने अन्यमनस्कता दिखाते हुए कहा।

'क्योंकि यह तुम्हारे जैसे बच्चों के नींद लेने का वक्त है--' उसने मेरी चादर खींचते हुए कहा--'लेकिन बुतरू! इटालियन इसका ख़याल नहीं रखते।'

'तब आकाश में मेघ घिरे रहेंगे'--मैंने बहाना किया--'उस हालत में तो इटालियन हवाई जहाज़ हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकेंगे।'

'बुतरू--मेरे बुतरू' करते हुए उसने गुदगुदाया और उठ बैठने के लिए मुझे बाध्य किया।

जल्दी जल्दी तैयार होकर हम लोग झोपड़े के बाहर आये। अभी भी थोड़ा बहुत अँधेरा था पर पास से गुज़रने वालों का चेहरा स्पष्ट देखा जा सकता था।

मेरी सबसे पहली दृष्टि औरतों के एक झुंड पर पड़ी। सब की सब बोझ से इस प्रकार लदी थीं कि उनके क़दम बड़ी मुश्किल से आगे बढ़ते थे। एक जो उनके बीच में चल रही थी

उसके सर पर तो बोझ था ही, साथ ही वह एक बच्चा गोद में लिये थी और दूसरे को पीठ पर बाँध रखा था। फिर भी उसे एक हाथ से एक और बच्चे को सहारा देना और दूसरे से एक गाय खींच कर लेते चलना पड़ता था। वह अपनी ज़बान में बार-बार इटालियनों के साथ साथ अपने भाग्य को कोसती जाती।

मर्दों की संख्या बहुत कम थी पर जो थे उनके सर पर टूटी हुई बाँस की पिटारियाँ और तेल, खटमल और बदबू से भरे ओढ़ने के सामान लदे थे। उनमें कोई मवेशियों को टिटकारी देता और कोई ज़बर्दस्ती उन्हें खींचे आगे बढ़ता।

गाँव वाले बम के भय से अपनी सारी सम्पत्ति साथ लिये झाड़ियों और खेतों की ओर जा रहे थे। जिस बम से ये नष्ट किये जाते शायद उसकी क़ीमत इन लोगों की सम्पत्ति से अधिक होती।

हम लोग भी आगे बढ़े। बहुत दूर आगे निकल जाने पर सूरज निकलता हुआ दिखाई दिया। उसकी शक्ल हमें झुँझलाये हुए बूढ़े जैसी मालूम पड़ी। वह आज बिना किसी भूमिका के अथवा पूर्वाकाश पर रंग बिरंगी कूची फेरे ही निकल आया था।

कुछ दूर पर खेत में कुछ औरतें दिखाई पड़ीं। उनकी संख्या दस बारह के लगभग रही होगी। वे झुकी हुई थीं इससे अन्दाज़ा लगता कि वे या तो खेती के सिलसिले में काम कर रही

होंगी अथवा कुछ चुन रही होंगी। एक औरत मेड़ पर बैठी अपने बच्चे को दूध पिला रही थी।

पिकनिक का सारा सामान दीदी साथ लाई थी। वह दो पत्थर जोड़ चाय बनाने की तैयारी करने लगी। मैं पास के सोते से पानी लाने गया। लौटते समय एकाएक बहुत बड़ी बाढ़ आने जैसी गंभीर आवाज़ सुनाई दी। फिर कर देखा, सोता अब भी शांत था, वहाँ बाढ़ की कोई गुंजायश नहीं थी। खेत में काम करने वाली औरतों की ओर निगाह पड़ी। वे तन कर खड़ी हो गई थीं और आकाश की ओर देख रही थीं। दीदी के पास पहुँच कर मैं भी उसी ओर देखने लगा। संदेह करने की कोई गुंजायश नहीं रह गई। दूर से सफ़ेद चील की तरह उड़ कर आते हुए इटालियन हवाई जहाज़ दिखाई दिये। अब हम उन्हें गिन कर यह भी जान गये कि वे आठ थे।

बिना एक शब्द बोले वह मेरा हाथ पकड़ पास की एक झाड़ी में खींच ले गई। बच्चों को नहलाने के पहले जिस प्रकार जल्दी और उनके आपत्ति करने की परवा न कर उनकी कमीज़ खींच ली जाती है उसी प्रकार उसने मेरी सफ़ेद कमीज़ निकाल ली। फिर अपने पास ही चुपचाप लेट जाने का हुक्म दिया।

हवाई जहाज़ हमारे सर पर आ गये। मैं समझ रहा

था कि वे उड़ते चले जायँगे। उनके निशाना लगाने के उपयुक्त इस स्थान पर मुझे कोई चीज़ दिखाई नहीं दे रही थी। पर मेरी धारणा निमू'ल निकली। हवाई जहाज़ चक्कर लगाते हुए ठीक हम लोगों के सर पर मँडराने लगे। जिस स्थान पर औरतें काम कर रही थीं वहाँ पर एक तीखा कानों का परदा फाड़ डालने वाला धमाका हुआ। बहुत सी धूल उस स्थान पर उड़ती हुई नज़र आई। थोड़ी देर में उस धूल को गहरे नीले रंग के धूएँ ने ढक दिया। शायद उस स्थान पर जलाने वाला कोई बम फेंका गया था।

औरतें चीत्कार करती हुई इधर उधर भागने लगीं। पर वे जिस ओर मुड़तीं उधर ही उन्हें नया बम गिरता हुआ दिखाई देता। उनमें कई ज़मीन पर लोटने लगीं। इस समय धूल और धुएँ के कारण उनके चेहरे हमें दिखाई नहीं देते थे; सिर्फ़ भय के कारण निकला हुआ उनका चीत्कार सुनाई दे रहा था।

जो औरत थोड़ी देर पहले बच्चे को दूध पिला रही थी उसकी हलचल कुछ अधिक स्पष्ट रूप में दीख पड़ती थी। बच्चे को बाँयें हाथ से उठा वह सर पर एक गठरी रखने की चेष्टा कर रही थी, ठीक इसी समय उससे थोड़ी ही दूर पर बड़े ज़ोरों का धमाका हुआ। इस बार हमें महसूस हुआ मानों

हमारे पास ही बम फटा है; पर नहीं, उस औरत से थोड़ी दूरी पर धूल ताल के बराबर ऊँची उड़ती दीखने लगी। बच्चा उस औरत के हाथ से छूट कर नीचे आ गया; स्वयं औरत चार छः क़दम आगे जा कर लुढ़क गई। वह स्थान भी धूल से इस प्रकार भर गया कि वहाँ घिरनी आ गई सी मालूम पड़ती थी। हमें और कुछ दिखाई नहीं दिया।

सर पर देखा, हवाई जहाज़ बहुत नीचे उतर आये थे। मुश्किल से दो ढाई सौ गज़ की ऊँचाई पर वे रहे होंगे। अपने काम का नतीजा उन्हें बहुत ही स्पष्ट दिखाई दे रहा होगा; शायद उन औरतों का चीत्कार भी मोटर की आवाज़ छेद कर उनके कानों तक पहुँच पाता होगा। शायद धूल और धूएँ को छेद कर भी वे ऊपर से बहुत कुछ देख पाते होंगे।

अब हवाई जहाज़ों से 'तर्र...तर्र...' की आवाज़ होने लगी। मेशीनगन से गोलियाँ छोड़ी जा रही थीं। जहाँ पर वे गोलियाँ ज़मीन में घुसतीं वहाँ थोड़ी धूल उड़ती और पहली झलक में वह पानी के बड़े बुलबुले सा दिखाई देता। मेशीन-गन की इस आवाज़ ने औरतों के चीत्कार की आवाज़ दबा दी।

यह कांड लगभग दस मिनट तक जारी रहा। हम लोग अवाक् हो वास्तविक पिशाच-लीला अपनी आँखों के सामने देखते रहे। मुँह से एक भी शब्द निकालना कठिन हो रहा

था। दीदी का चेहरा पसीने की बूँदों से भर गया। दूर से उड़ कर आती हुई धूल उस पर बैठती जा रही थी।

हवाई जहाज़ों के आगे का रास्ता लेने पर हम लोग झाड़ी के बाहर निकले। सबसे पहले दूध पिलाती हुई औरत के पास पहुँचे। वह अचेत पड़ी थी। उसके सर में मिट्टी के चक्के की चोट लगी थी। बच्चा आकाश की ओर मुँह किये हाथ-पाँव हवा में उछाल उछाल कर दम साधते हुए चीत्कार कर रहा था। दीदी ने उसे अपनी गोद में ले लिया।

औरतों की जमात एक जगह पर इकट्ठी हो गई थी। सब की सब छाती पीट रही थीं। पास पहुँच कर देखा, दो औरतें बरसाती कीड़ों पर मूसल की मार लगाने के समान पिच गई थीं। अङ्ग अङ्ग छिटक कर दूर जा गिरे थे। चेहरा पहचान में नहीं आ सकता था। शायद उन्हें देख कर उनके आदमी होने का भी क़यास नहीं किया जा सकता था।

जिन्हें सिर्फ़ चोट आई थी वे अपने को भाग्यशाली समझ रही थीं। सफ़ेद कपड़े की कमी रहने के कारण दीदी ने मेरी कमीज़ और अपना गाउन फाड़ कर उनकी पट्टी बाँधी। बिना मुँह से एक शब्द निकाले वह यंत्रवत् यह सब काम करती जा रही थी।

बम का भय हम दोनों के भीतर से जाता रहा। हम जिस समय अपने ट्रक के पास पहुँचे, सूरज ठीक हमारे सर पर आ गया था।

११

ट्रक के पास आ कर देखा, हमारे साथियों के सिवा और भी बहुत से आदमी उसे घेर कर खड़े थे। ट्रक बहुत बड़े रेडक्रास का चिह्न लगे तिपाल से ढका था, यह चिह्न कितनी भी दूर से दिखाई दे जाता। फिर भी ट्रक नष्ट करने के लिए बारह बम फेंके गये थे। संयोग से उनमें से सात फटे नहीं। एक का निशाना थोड़ा बहुत लगा था और उससे ट्रक का पिछला हिस्सा जलने लगा था। पर पूरा जल पाने के पहले ही आग बुझा ली गई थी।

दवा और पेट्रोल की पेटियाँ पहले से ही झाड़ियों में छिपा कर रख दी गई थीं—यह अच्छा हुआ था। उन्हें कोई नुक़-सान नहीं पहुँचा और न हमारे साथ आया कोई व्यक्ति ही घायल हुआ। वे लोग उस दिन की बमवर्षा से बच जाने के उपलक्ष में ईश्वर को बधाई दे रहे थे।

धीरे धीरे और लोगों के साथ साथ गाँव के दोनों पहरे-दार भी आये। वे इस समय आँखें मींच रहे थे। उनकी आँखों से आँसू का बहना बन्द नहीं हो रहा था। गैस का गोला उनसे काफ़ी दूर पर फटा था; फिर भी उसका असर उन तक पहुँच गया था।

गाँव का हाल चाल पूछने पर पता चला कि वहाँ कोई आदमी था ही नहीं कि उसे चोट आती। गाँव पर छोटे बड़े मिला कर पचासों बम बरसाये गये थे पर उनसे सिर्फ़ एक मुर्ग़े की टाँग टूट पाई थी। एक झोपड़ा भी जलने लगा था पर पहरे वालों ने ठीक समय पर पहुँच कर उसे बुझा दिया। उसी बुझाने के सिलसिले में उन्हें महसूस हुआ कि उनकी आँखें चौपट होती जा रही हैं। फिर भी इस समय वे ज़रा ज़रा देर के लिए खोल कर उनसे देख सकते थे।

वे औरतों के झुण्ड के पास गये। मैदान वाली लाश उठाकर वहाँ ला रखी गई थी। उसे देखकर वे अपनी आँखों का दर्द भूल गये। हमारी ओर देखते हुए उन्होंने कहा—

'हम लोग जंगली हैं सही, पर आज तक औरतों पर आक्रमण करना लड़ाई के क़ानून में जायज़ है—हमने कभी नहीं सुना था। अच्छा होता यदि हम इसे देखने के पहले ही अन्धे हो जाते।' दीदी ने उनकी आँखों में दवा डाल दी।

१२

गैस और बम से घायल हुए लोगों की संख्या दिनों दिन बढ़ती जा रही थी। हवाई जहाज़ों का प्रायः ही साधारण जनता के ऊपर आक्रमण हुआ करता। फ्रंट पर की लड़ाई भी घमासान रूप धारण करती जा रही थी। इन सब बातों का परिणाम होता

कि दीदी का काम बढ़ता जाता। घायल हुई गाँवों की जनता तो उसके पास आती ही साथ ही फ्रंट पर से भी बहुत से घायल सिपाही उसके पास भेजे जाते। युद्ध के इस मोर्चे पर पहले एक स्वेडिश रेडक्रास काम किया करता था पर इटालियनों द्वारा वह नष्ट कर दिया गया था; उसके बाद इन आस पास के इलाक़ों में रेडक्रास की तो बात ही दूर रही, एक डाक्टर भी नहीं रह गया था।

दीदी मुश्किल से चार घण्टे सो पाती नहीं तो उसका सारा समय नया रेडक्रास केन्द्र क़ायम करने की व्यवस्था और घायलों की दवा करने में जाता। हम लोगों ने बम-वर्षा के वक़्त छिपने के लिये एक बड़ी सी खाई खोद ली थी और उसे बालू भरे बोरों से ढक रखा था। हमारे साथ ही साथ वहाँ पर उपस्थित घायल भी उसमें आश्रय लिया करते। वह स्थान बहुत जल्दी भरता जा रहा था।

हवाई जहाज़ वैसे प्रायः ही आया करते और उस समय ऊपर का सब काम छोड़ कर तुरंत हमें खाई में चले जाना पड़ता। यह समय एक तरह से दीदी के लिए विश्राम का हुआ करता। नहीं तो दिन में जब तक सूर्य आकाश में वर्तमान रहता, उसे एक मिनट की भी फ़ुर्सत नहीं होती।

पर इतना होने पर भी मेरी हिफाज़त के सिलसिले में उसने ज़रा भी तबदीली नहीं की। मेरे खिलाने पिलाने सुलाने

का सिलसिला पहले की ही तरह रखा। यह मुझे बड़ा ख़राब मालूम होता। कभी कभी उसी कारण मैं उस पर चिढ़ भी जाता और कह बैठता—

'मैं तो घायल नहीं—मेरी इतनी हिफ़ाज़त की क्या ज़रूरत ?'

'तुम घायल न हो जाओ इसी लिए तुम्हारी हिफ़ाज़त की ज़रूरत है।' वह उत्तर देती।

कभी कभी जब मैं अधिक देर तक नाक-भौं सिकोड़ता रहता और उसके सामने दूसरा बहुत सा काम पड़ा रहता तो वह कहती—

'तुम्हें साथ लाकर मैंने भारी झंझट मोल लिया। कैसी विपत्ति है ?'

कभी कभी मुझे घर लौट जाने की सलाह देती और बतलाती कि युद्ध मेरे उपयुक्त नहीं। ठीक यही दलील मैं उसके बारे में साबित करने की चेष्टा किया करता तो वह कहती—

'मेरी जवानी बीत चुकी है, अब मेरे सामने उपयुक्त अनुपयुक्त का सवाल रहा ही नहीं। फिर मेरे यहाँ आ जाने से किसी एक आदमी का भी भला हो जाता है तो मेरा यहाँ रुके रहना ही उपयुक्त है।'

'पर तुम कितनों की जान बचाओगी ? फ़्रंट पर तो

हज़ारों मरते हैं, घायलों की संख्या भी हज़ारों में रहती है पर तुम्हारे पास तो उनमें से मुश्किल से दस-पाँच पहुँच पाते हैं।'

'मैं जानती हूँ, पर दस पाँच नहीं, एक की भी जान बचा सकी तो भी मेरा यहाँ रहना सार्थक है!'

काम के बोझ से तथा घायलों की हालत देख देख कर उसका चेहरा सूखता जाता था। गोरे गाँव में रेडक्रास का केन्द्र स्थापित करने के बाद वह बहुत दुर्बल हो चली थी।

'और तू घायल हुई अथवा बीमार पड़ेगी तो तुझे कौन देखेगा?' मैं पूछा करता।

'तुम—' कह कर वह हँस देती—'पर वह मौक़ा ही नहीं आयगा।'

शरीर के दुर्बल होते जाने के साथ उसके चेहरे पर एक विशेष प्रकार का तेज भी आता जाता था। कभी कभी दया और करुणा की वह साक्षात् मूर्ति सी मुझे दिखाई देती। उसे देख कर इटालियनों की राक्षसी करतूत की भी याद आती। मैं इन दोनों भावों का विश्लेषण करने लगता। पहले तो वह ध्यान-पूर्वक सुनती रहती—पर इटालियनों पर का क्रोध जब मेरे भीतर से उबलने लगता तो वह मेरी पीठ पर हाथ फेरती हुई कहती—

'यह भावुकता का स्थान नहीं; यह लड़ाई है भाई।'

संहार

१

एक दिन शाम को एक ओर से अस्पष्ट आवाज़ में चिल्लाते हुए मेरे परिचित बूढ़े गराजमाच बीरहान आये। अपने शरीर का सारा कपड़ा उन्होंने नोच कर फेंक दिया था। अब अपनी लँगोटी भी नोच कर फेंकने जा रहे थे! उन्हें दो आदमी दोनों तरफ़ से पकड़े हुए थे।

'हमें कोढ़ हो गया। हमें मार डालो। कोढ़ी बन कर मैं जीना नहीं चाहता।' वे चिल्ला रहे थे।

उनके हाथ-पाँव जल रहे थे। उस जलन से उन्हें असह्य वेदना हो रही थी। वे छटपट कर रहे थे और बार बार पकड़ रखने वालों को गाली देते और झटका दे कर उनसे छुटकारा ले भागना चाहते।

'हमें मार डालो भाई!' हमारे पास आते वक्त वे चिल्लाने लगे—'क्या काठ के उल्लू की भाँति हमें पकड़े हुए

हो ! मैं अब जी नहीं सकता। मुझे कोढ़ हो गया है। हाय यीसू ! हाय ख्रिस्टूस ! मैं जल्दी मरता क्यों नहीं ?'

उन्हें सांघातिक गैस लगा था। हाथ-पाँव में बड़े बड़े फोड़े निकलते आ रहे थे। वेदना उत्तरोत्तर बढ़ती ही जा रही थी।

दीदी उन्हें एक इंजेक्शन देने के लिए आगे बढ़ी।

'डायन ! हट सामने से !' गराजमाच चिल्लाते हुए उससे कहने लगे—'मैं जब वैसे ही मर रहा हूँ तो फिर हमारी बाँह में और सुई क्या चुभाने आई है !'

वास्तव में ही वहाँ पर खड़े लोगों को दीदी की करतूत समझ में नहीं आ रही थी। वह चुपचाप अपना काम करती गई। गराजमाच बहुत देर तक चिल्लाते रहे। इंजेक्शन का असर होने पर उनका चिल्लाना बन्द हुआ। दीदी ने उनका मुँह ढक देने के लिए कहा।

लोगों ने समझा बूढ़े बहादुर गराजमाच की मृत्यु हो गई। अबीसीनियन पद्धति के अनुसार वहाँ पर खड़े सब हब्शी छाती पीट पीट कर रोने लगे।

२

घायलों का निरीक्षण करते हुए हम दोनों मौन आगे बढ़ते गये।

अब घायलों के रखने का सिलसिला बिलकुल ही बदल गया था। रेडक्रॉस की निशानी पहचान में आ जाने पर उस पर बम अवश्य ही गिरते थे इसलिए उसका न देना ही कम ख़तरनाक समझा जाता था। गाँव के हलक़े के बाहर की झाड़ियों में खड्ढे खोद रखे गये थे, उन्हीं में नीचे चटाई बिछा कर घायलों को रख दिया गया था। धूप और पानी से बचने के लिए पत्तों से ढके हुए दो ख़ीमे लगा दिये गये थे जिनमें संगीन तरह के घायल रखे गये थे।

इन ख़ीमों में प्रवेश करते ही ख़ून और दवा की दुर्गंध से नाक फटने लगती। जिन चटाइयों पर वे लिटाये गये होते वे भी वर्षा के कारण ज़मीन के पसीजने से गीली हो चली थीं। उस गीलेपन के मिल जाने से गंध गुमसायन होने लगी थी। दो क़दम से आगे जाने की हिम्मत नहीं हो रही थी। मैं रुक गया।

'आओ! और आगे आओ।' दीदी ने कहा—'मेरे पास तो दवा और बची नहीं। आजकल तो इनका इलाज मैं सिर्फ़ सहानुभूति दिखला कर किया करती हूँ।'

बात वास्तव में सच थी। घायलों को दवा की अपेक्षा अधिक आराम मानवीय सहानुभूति से मिलता है।

एक का पूरा शरीर ढका था। मैंने उससे पूछा—

'चोट कहाँ पर लगी है ?'

वह घायल रोने लगा। रोने की आवाज़ से यह भी अंदाज़ मिला कि वह युवक है। उसने मेरे प्रश्न का बिना उत्तर दिये दीदी को अपने पास बुलाया।

दीदी ने उसके माथे पर हाथ फेरते हुए कहा—

'तुम अच्छे हो जाओगे।'

उसकी चादर ज़रा सा खोल कर दिखाते हुए मुझसे फ्रेंच में दीदी ने कहा—

'मस्टर्ड गैस ने इसके सारे शरीर की खाल खींच ली है। आज शाम तक भी यह ज़िन्दा रह सका तो बहुत हुआ।'

इस युवक की असह्य पीड़ा देख उसके बग़ल के घायल भी कराहने लगे थे।

उस ख़ीमे के एक किनारे पर एक औरत का पाण्डु रंग का चेहरा देख मैं सिहर उठा।

'अचेत—?' मैंने दीदी से पूछा।

'ख़त्म—' उसने धीमे से कहा और साथ के आदमियों को उसे बाहर उठा ले जाने का इशारा किया।

जिन घायल हब्शियों में अब भी थोड़ी ताक़त बच रही थी वे अपनी छाती पीट पीट कर मुर्दे को बिदाई देने लगे। पचासों घायल एक साथ कराहने लगे थे। यदि वे बदक़िस्मती

से कुछ अधिक सभ्य रहते और कल्पना करने की कुछ अधिक शक्ति उनमें होती तो उस समय के भय से ही कितनों के प्राण-पखेरू उड़ जाते।

धीरे धीरे हम आगे बढ़े।

३

डेरे की ओर न लौट दीदी विपरीत दिशा में जाने लगी।

'और कहाँ ?' मैंने टोका।

'इन घायलों के परिवार के यहाँ। वे ही इन्हें खाना पहुँचाया करते हैं; पर रास्ते में यदि इटालियन हवाई जहाज़ उन्हें देख लेते हैं तो एक पग भी आगे नहीं आने देते। यही देखना है कल उनमें से कितने बाक़ी बचे।'

रास्ते में हमें उधर से लेफ़्टिनैंट हानसेन आते हुए मिले। उनका चेहरा सूखा हुआ था।

'चारों तरफ़ के हब्शी फ़्रंट कमज़ोर हो गये हैं। अब यहाँ के आदमियों के भूने जाने के सिवा और दूसरा चारा नहीं। डिवीज़न-कमांडर कई बड़े अफ़सरों के साथ आदिस अबेबा भग गये।'

उन्होंने हम लोगों को भी प्रस्थान करने की सलाह दी। उनका कहना बहुत दूर तक दुरुस्त था। अब सिर्फ़ वर्षा और

कीचड़ ही इटालियनों का रास्ता रोके थी नहीं तो वे कब के इस गाँव को पार कर आगे बढ़ गये होते।

अभी हम कुछ निश्चय नहीं कर पाये थे उसी समय दक्षिण दिशा से हवाई जहाज़ों का एक जत्था आता दिखाई दिया। आज यदि उनकी संख्या बहुत अधिक नहीं होती तो उसमें हमें कोई विशेषता नहीं दीखती।

आज तीन-तीन मोटर के एक साथ ही पैंतीस हवाई जहाज उड़ते चले आ रहे थे। उनकी ओर देख कर हानसेन थोड़ी देर चुप रहे पर सर पर आ जाने पर कहा—

'संहार—'

असल में उस दिन वास्तविक संहार शुरू हुआ। दूर पर गाँव के झोपड़ों से पहले धूआँ निकलता दिखाई दिया। हवाई जहाज़ फिर भी उसके ऊपर मँडरा ही रहे थे। आग की लपटें ऊँची ऊँची निकलती दिखाई देने लगीं। थोड़ी देर में जब सब कुछ जल कर ख़ाक हो गया तो हवाई जहाज़ आगे बढ़े।

पर अब तक सिर्फ़ झोपड़ों का संहार हुआ था। इससे उन्हें संतोष नहीं हुआ। उन्हें उन झोपड़ों से निकल कर कोई भागता भी नज़र नहीं आया। अन्दाज़ से अब वे चारों तरफ़ की झाड़ियों पर बम वर्षा करने लगे। कई हवाई जहाज़ अभी अभी जहाँ पर हम लोगों ने घायलों को देखा था, ठीक

उसके ऊपर उड़ने लगे। नये खोदे गये खड्ढे शायद उन्हें दिखाई दे गये।

एक हवाई जहाज़ डुबकी मारता बिलकुल नीचे आ गोलाबारी करने लगा।

दूसरी ओर की झाड़ियों पर भी इसी भाँति बम वर्षा की जाने लगी। छिपे हुए लोग छाती पीटते बाहर निकल आये। उन्हें मशीनगन की गोलियों से भूना जाने लगा।

हानसेन ने अपना निचला होंठ दाँतों से कस कर दबा रखा था; इस समय वह एक-ब-एक ढीला हुआ।

'वाह बहादुर!' उन्होंने कहा—'शाबाश!' हलकी रूखी मुसकान भी उनके चेहरे पर दिखाई दी।

दीदी का चेहरा फीका पड़ गया। काटने से भी शायद ही उसके शरीर से ख़ून निकल पाता। वह एकटक हवाई जहाज़ों की ओर देख रही थी। उसकी छाती की धड़कन बढ़ती जा रही थी।

'इसका नाम है वास्तविक संहार—' हानसेन ने विमानों की ओर देखते हुए उनसे कहा—'देखना एक कीड़े को भी इस इलाक़े में ज़िन्दा नहीं छोड़ना।'

इस बार लगभग बीस मिनट तक यह संहार-लीला चलती रही। चारों तरफ़ से—झाड़ियों तक—से जब आग की लपटें निकली दिखाई देने लगीं तो हवाई जहाज़ वापस लौटे।

'तुम घायलों के पास चलो।' दीदी ने हम से कहा। वह स्वयं गाँव वालों को देखने चली।

रास्ते में हानसेन ने कहा—

'फ़ौज को तितर-बितर करने के लिए तो हवाई आक्रमण समझ में आते हैं; पर साधारण जनता पर के ऐसे आक्रमण की मैं कल्पना तक नहीं कर सकता था।'

उनका चेहरा बहुत गम्भीर होता जा रहा था।

४

मारे गये आदमियों के ख़ून से ख़ास तरह की गंध निकलती है। इससे सर में चक्कर आने लगता है, पाँव थर्राने लगते हैं, कलेजा सूखता जाता है। इस गंध के सामने दिमाग़ ख़ाली हो जाता है, सोचने की शक्ति काम नहीं करती। दिमाग़ को संचालित करने वाली शक्ति नष्ट होने लगती है।

हमें इसका थोड़ा बहुत तजुर्बा था, इसी लिए इसकी गंध पाने पर दूर से ही पाँव आगे न बढ़ते। अपने ऊपर ज़बर्दस्ती चलने का बोझ लादते हुए हम लोग घायलों के तम्बू तक गये।

तम्बुओं की धज्जी धज्जी उड़ गई थी। तिपाल के टुकड़े ख़ून में सन गये थे। खाई में आदमियों के ख़ून से खिल्ली भर कीचड़ हो गया था। उसी में स्थान स्थान पर एक समय जीवित आदमियों की खोपड़ियाँ वा छिन्न भिन्न हुए अंग दिखाई

देते। कई खोपड़ियों की खाल भी उड़ गई थी। वे कापालिकों द्वारा उठा लाई गई जैसी दीखती थीं। कई कीचड़ में थोड़ा गँथे आकाश की ओर निहार रहे थे। एक आदमी का भी सब अंग इकट्ठा कर लेना मुश्किल था।

ज़्यादा लाशें टेण्ट से बाहर की खाइयों में थीं। शायद घायलों ने बम-वर्षा से बचने के लिए टेण्ट के बाहर आ जाने का प्रयत्न किया था, किन्तु टेण्ट के दरवाज़े पर ही उनके अंग-प्रत्यंग छिन्न-भिन्न कर दिये गये थे। उनके अङ्ग के कई टुकड़े दूर दूर जा गिरे थे।

खाई के बिलकुल नज़दीक तक पहुँचने की मेरी हिम्मत नहीं हुई। अभी उससे पाँच-सात गज़ के फ़ासले पर ही बदबू से नाक फटती जा रही थी। काले ख़ून से चबोत कर सनी एक खोपड़ी मेरे दायें तरफ़ दिखाई दी। मुझे झाँई सी आने लगी। मैं पीछे हट कर जा खड़ा हुआ।

हानसेन खाई में निहार रहे थे। थोड़ी देर वे वहाँ अवाक् हो खड़े रहे। तुरंत जैसे बिजली लग गई हो उस भाँति—'ई...ई...ई...' करते हुए मेरे पास आये। भय के कारण उनकी आँखें बड़ी बड़ी हो आई थीं। सर के बाल उड़ने से लगे थे। ललाट पसीने पसीने हो रहा था।

'हिश...हिश...हिश...' थोड़ी देर तक वे करते रहे।

कोई सर्दी से काँप रहा हो उस भाँति वे दीख रहे थे। शायद भीतर से बहुत दिनों के ज़बर्दस्ती चाँप रखे गये भाव एक-ब-एक फट कर निकल रहे थे। चाँपने वाला ढक्कन ढीला हो चला था।

'हु···हुर्रा·· हुर्रा···हुर्रा···' कर वे एक-ब-एक ठहाका लगाने लगे। मैं बड़ा भयभीत हो गया।

हवाई जहाज़ों के मोटर की फिर आवाज़ सुनाई देने लगी। शायद अभी बम-वर्षा करने वाले हवाई जहाज़ आगे किसी गाँव तक गये थे और अब लौटे आ रहे थे।

हानसेन उन मोटरों की आवाज़ की नक़ल करने लगे। जब वे विमान हमारे सर पर आ गये तो वे पुनः 'हुर्रा···हुर्रा ·· हुर्रा···' करते हुए पैंतरा काटने लगे। यह निश्चित था कि अब मिनट आध मिनट में ही वे गोली के निशाना बन जायँगे।

संयोग से इस समय तक दीदी के कुछ सहायक हमारे पास पहुँच गये थे। उनमें से एक ने, जिसने पहले बहुत से बम से घायल हुओं की चिकित्सा की थी, कहा—

'लेफ्टिनैंट पर बम के धमाके का असर हुआ है।'

'नहीं, यह तो पागलपन के लक्षण हैं', उसके साथी ने कहा।

'बम फटने के आघात से लोग पागल भी तो हो सकते हैं।' पहले ने उत्तर दिया।



सर्वनाश का उपहास

(कोराज़ियो)

मैंने उन्हें लेफ़्टिनैंट को पकड़ लाने का हुक्म दिया। लेफ़्टिनैंट बड़ी देर तक कूद-फाँद करते रहे। पकड़ने के लिए आगे बढ़ने वाले लोगों से थोड़ी देर तक हाथापाई भी उन्होंने की। अच्छी बात यह थी कि उनके हाथ में इस समय बन्दूक़ नहीं थी, नहीं तो इस समय उन्होंने अपने आदमियों पर ही उसे चला दिया होता।

पाँच आदमी बड़ी मुश्किल से उन्हें क़ाबू में कर पाये। हवाई जहाज़ अब सर पर आना ही चाहते थे।

विमानों का एक झुण्ड जिधर दीदी गई थी उधर से गुज़रने लगा। इस बार सिर्फ़ दूर पर ही कुछ धमाके हुए।

जिधर दीदी गई थी उस तरफ़ की ही हवा चल रही थी। मुझे उसमें गैस की बू महसूस हुई। गैस मास्क की याद आई। उसका मास्क मैं ढोता चलता था इसी कारण वह मेरे ही पास रह गया था। मैं उसे ले कर जिस दिशा में वह गई थी उधर दौड़ कर जाने लगा।

लेफ़्टिनैंट को पकड़ रखने वालों ने मुझे भी 'पागल हो गया' क़रार दिया। अच्छी बात हुई कि वे मेरे पीछे पीछे दौड़े नहीं।

५

सर पर उड़ते हुए हवाई जहाज़ों की ओर मेरा ध्यान नहीं था। उनकी ओर देखने की न तो इच्छा ही हो रही थी और न हिम्मत ही पड़ रही थी। सिर्फ़ उनके मोटरों की आवाज़ से कानों के पर्दे फटते जा रहे थे और उससे जो तकलीफ़ होती महसूस करता हुआ आगे दौड़ता जा रहा था। कभी कभी दूर पर धमाके सुनाई देते। मैं उसी आवाज़ की ओर दौड़ता जा रहा था।

उन झाड़ियों और मैदान में बम से बहुत से खड्ढे बन गये थे। मैं छलाँग मार कर उन्हें पार करने की कोशिश करता। एक बार ठीक अन्दाज़ न लगा पाने के कारण उसमें लुढ़क भी गया। मिट्टी फुलकी हो आई थी, इसलिए विशेष चोट नहीं आई। उठ कर फिर नष्ट हुए समय का बदला ले लेने के ख़्याल से और भी तेज़ी से दौड़ने लगा।

रास्ते पर बहुत से फटे हुए बम के टुकड़े पड़े थे। एक को हाथ में उठा कर देखा। वह इस समय भी गरम था। उसे वहीं एक झाड़ी पर पटक आगे बढ़ा। कई बम ऐसे दिखाई दिये जो अब तक फटे नहीं थे। वे ठीक काले महादेव से दीखते। इन्हें देख कर मैं चौंक जाता। उनकी फ्यूज़ मुझे ठीक उनकी आँखों सी दिखाई देती। मुझे भय होता

कहीं वे वास्तव में ही शिव की तीसरी आँख तो नहीं। उन आँखों ने मेरे देखते देखते ही सैकड़ों को जला भुना कर ख़ाक कर दिया था।

एक बम की आँख खुली हुई सी दिखाई दी। मैंने समझा—वह मेरी ही प्रतीक्षा कर रहा है। मैं भय से चीख़ उठा। पर उसी मुहूर्त उस बम के आगे भी निकल गया। फिर कर और एक बार उसकी ओर देखा—अब वे आँखें आधी खुली हुई दिखाई दीं। उसके आक्रमण के दायरे के बाहर मैं निकल आया था इसलिए हिम्मत बाँध कर कहा—

'तुम जितनी ही बड़ी बड़ी आँखें क्यों न करो मैं डरता नहीं। बहुत करोगे तो जान ले लोगे! और तो नहीं कुछ! मैं तैयार हूँ।'

सर के ऊपर से मोटरों की आवाज़ का आना बन्द हुआ। शायद हवाई जहाज़ आँखों के ओझल हो गये थे। मुझे इस समय भी आकाश की ओर देखने की हिम्मत नहीं हो रही थी। यदि ऊपर देखता तो उस मैदान के किसी न किसी जीवित जाग्रत बम से टकरा जाता।

और फिर......

इतनी दूर तक सोचने की इस वक्त मुझे फ़ुर्सत नहीं थी।

सामने की प्रत्येक चीज़ किसी व्यक्ति-विशेष के किसी न किसी अंग के समान दिखाई देती।

'यह तो वह चीज़ नहीं जिसे मैं ढूँढ़ने निकला हूँ'—मैं अपने मन से कहता।

पाँव सरपट आगे बढ़ाये लिये चलते।

६

अचेत। काठ से अकड़े हुए अंग। पीला पड़ता हुआ चेहरा। ठीक मुरझाती हुई अधखिली कली के समान। आँखें बंद।

ख़ून का कहीं भी कोई दाग़ नहीं। फिर भी उसे साँस लेने में तकलीफ़ हो रही थी। मैंने समझ लिया—उसे गैस लगा है।

देरी के लिए अपने आप पर क्रोध आने लगा। मन अपने आपको कोसने लगा। इस भयानक अपराध के लिए अपने आपको सारी ज़िन्दगी क्षमा करने के लिए तैयार नहीं था।

कपड़े के बने फ़ौजियों के बोतल से पानी ले उसका सर धोया। उसकी दी हुई दवा पाकेट से निकाल उसके जिस किसी अंग में ज़हर लगने का सन्देह हुआ लेपने लगा। धूप से उठा कर उसे छाया में ले आया।

यह गैस शायद कोई वैसी भयानक नहीं थी। थोड़ी देर तक माथा ठंढा करने पर ही उसने एक बार आँखें खोलीं। पर पलकें उसी निमेष बंद भी हो गईं। मैं फिर से उनके खुलने की एकटक प्रतीक्षा करने लगा।

होश आने पर बैठा देने का उसने इशारा किया। आँखों के सामने की झाँईं दूर हो जाने पर वे खुलीं। मुझे चिन्तित, अवाक् और रुआवनी सूरत का बनता जाता देख वह मुसकराई।

उसने मुझे अपनी ओर खींच लिया। कसकर अपनी छाती से दबाया। बाँहों पर हलका तमाचा लगाते हुए कहा—

'तुम यहाँ क्यों आये? नासमझ! शैतान! मेरे बेबी।'

मैंने उसकी स्पष्ट नीली आँखों में देखा। वे डबडबाई, छलछल कर रही थीं पर साथ ही उनमें मुसकान भरी थी।

दो बूँदें मेरे गालों पर टपक आईं। उसकी आँखों के समान ही बड़ी बड़ी। अंगारों के समान उनमें गरमी थी।

—

षष्ठ खण्ड

वापस

१

वसंत। कलियों के खिलने का मौसिम। किसलय पत्तों के निकलने के दिन। मंजरियों के जन्म लेने की ऋतु। इनके ऊपर स्वच्छ आकाश। हवा में ठंढक लिये शहद की सुगंध।

प्रकृति ने छोटे तिनके से लेकर बड़े बड़े वृक्षों तक को भरपूर सजा दिया था। चमकीले रङ्ग की सुनहली, नील, हरित पोशाक पहने वे बिलकुल ही नये दीखते थे। दो सप्ताह पहले जिनके हाड़ हाड़ निकले दिखाई देते थे उनमें भी इस समय नया प्राण आ गया। उनके चमड़े स्निग्ध बन गये, जगह जगह से उनमें टहनियाँ निकलने लगीं, उन टहनियों में छोटे छोटे बड़े नाज़ुक कलियों से दीखने वाले पत्ते लगने लगे।

संहार किये गये घायलों की क़ब्र को भी सजाना प्रकृति नहीं भूली। उन पर बड़े ही सुन्दर हज़ारा गेंदे के समान दीखने वाले फूल खिल आये थे। मालूम पड़ता अभी अभी

किसी ने अंजलि चढ़ाई है। आसपास के पौधे हरे भरे बन गये। ऊसर दीखने वाली भूमि में घास उग आई और वह अब ऊपर उगती आ रही थी।

गराजमाच की क़ब्रगाह कुञ्जों से घिर गई थी। एक स्थान पर पत्तों के झोंझ में पक्षियों का एक जोड़ा बैठा था। नर कहीं से दाना चुग लाया था, उसे ही वह मादा के मुँह में डाल रहा था।

इन रास्तों पर मैं बहुत सहमता हुआ पाँव रखता। कुछ पक्षियों ने आसपास अंडे दे रखे थे; मेरी असावधानी होने पर उनके समय के पहले फूट जाने का डर था। जिस रास्ते से दीदी की खोज में दौड़ता गया था, उस पर भी डीभी उग आई थी। बम के घाव ने पृथ्वी को जहाँ जहाँ बकोट खाया था उस पर हरे रङ्ग का मलहम चढ़ गया था। खड्ढों का गहरा ज़ख्म अब भरता आ रहा था।

लाखों रेडक्रास एक साथ काम करके भी इस प्रदेश का स्वरूप इतनी जल्दी नहीं बदल सकते थे। यहाँ इस समय तक मृत्यु का निशान तक मिटा दिया गया। उसके स्थान पर आया उत्सव, उत्साह और नया जीवन। अब तो यहाँ मधुमक्खियों के बीन बाजे के आधार पर भ्रमरों का नाच चलने लगा। उस पर कठफोरवा पक्षी तबले का ताल दिया करते।

पेड़-पौधे चँवर डुलाते। अब तो यह दुनिया रास, रंग, लीला, त्योहार, मौज, आनन्द की दुनिया बन रही थी।

फिर भी सब जीवों से अभागे आदमी ही दिखाई दिये। प्रकृति की उस मजलिस में राजा बनकर बीच में बैठने के बजाय वे अपने भाग्य पर रोते दीखते। सिर्फ़ उनके ही चेहरे ऐसे थे जिन पर मुर्दनी छाई थी। प्रकृति के और जीवों से उनका संबंध-विच्छेद हो गया सा दीखता था।

इस बीच हब्शियों के नये जत्थे भी इस हलक़े में पहुँच गये थे। युद्ध के मोर्चे के नज़दीक आते जाने के कारण अब वे यहीं खाइयाँ खोदने लगे। इस बार भी न जाने क्यों मुझे उन खाइयों की शक्ल क़ब्र सी दीख रही थी। फावड़ा चलाते समय वे ऐसे दीखते मानों क्रोध में आकर अपने आप पर का ग़ुस्सा वे ज़मीन पर उतार रहे हों।

'यहाँ की ज़मीन कितनी सख़्त है!' एक उनमें से कह रहा था।

'अच्छा ही तो है'— दूसरे ने उत्तर दिया—'जब हम इसके नीचे रहेंगे तो चील जल्दी हमारा मांस नहीं नोच पायँगी।'

'इस तरफ़ देखो!' एक तीसरी तरफ़ से आवाज़ आई— 'यहाँ की ज़मीन कितनी फुलकी है! मालूम पड़ता है यहाँ पहले से ही किसी ने खड्ढा खोद रखा है।'

वह हाल में बम से हत्या किये गये गाँव वालों की क़ब्र पर फावड़ा चला रहा था। थोड़ी सी मिट्टी हटाने पर ही एक लाश दिखाई देने लगी। उसकी पहली झलक पाते ही फावड़ा चलाने वाला अपना हथियार छोड़ कर भागा। जब उसे कोई खदेड़ता नज़र नहीं आया तो आसपास के सब हब्शी इकट्ठे हो उस खड्ढे में झाँकने लगे।

मुर्दा अभी सड़ नहीं पाया था इसलिए तुरंत ही पहचान में आ जाता था कि वह आदमी का है। बिना एक शब्द बोले हब्शी उसे काली मिट्टी से ढकने लगे। उनके चेहरे पहले की अपेक्षा भी अधिक स्याह हो गये। थोड़ी देर बाद वे रुआवनी सी सूरत बना कर बैठ गये।

उन्हें भूख लगी। चारों तरफ़ उन्होंने दृष्टि दौड़ाई। बड़ा ही सुन्दर दृश्य। पर निर्जन। यह सुन्दर दृश्य ही उन्हें कटावना सा लगने लगा।

'भाई, गाँव से कुछ खाने के लिए लाओ, नहीं तो मेरी हालत तो अब तब हो चली है।' एक बूढ़े ने कहा।

कई नवजवान गाँव की तरफ़ आगे बढ़े। मेरा भी रास्ता उधर की ही ओर जाता था इसलिए मैं भी उनके साथ हो लिया। कुछ दूर जाने पर हमें कुछ हब्शी औरतें खेतों में काम करती हुई मिलीं।

उन औरतों का क्षुधाग्रस्त चेहरा देख कर ही हब्शी युवक उनसे कुछ बोल नहीं सके। दोनों अवाक् हो कुछ देर तक एक दूसरे का मुँह देखते रहे। चारों तरफ़ का दृश्य हँस रहा था पर इन आदमियों की आँखें भरती आ रही थीं।

'बहुत दिनों से खेतों में नहीं कमाया—' हब्शी युवकों ने ही शांति भंग की—'आओ, हम तुम्हारी मदद करें।'

औरतों के हाथ के हथियार उन्होंने ले लिये। औरतों की आँखों से आँसू टपकने लगे। इन हब्शियों में भी जिन्हें हम बहुत दूर तक असभ्य की श्रेणी में गिनते हैं, इतनी भावुकता होगी इसकी किसी ने कल्पना भी नहीं की थी।

'फ्रंट पर क़ब्र खोदने के बजाय इन खेतों में काम करना कितना प्रिय है।' एक युवक बोल उठा।

पता नहीं इस समय उन हब्शी औरतों को क्या याद आया कि वे और अधिक देर अपना भाव न रोक सकीं। वे उन युवकों से लिपट कर चिल्ला चिल्ला कर रोने लगीं।

२

मार्च का महीना ख़तम होते न होते हब्शी मोर्चे टूटने लगे। इन दिनों इटालियन बम की मार से ज़्यादा ज़बर्दस्त भूख की मार सैनिकों को लग रही थी। हब्शी व्यवस्था के अनुसार जिस इलाक़े में फ़ौज लड़ा करती वहीं से उसके लिए

रसद भी जुटाई जाती। पर इन दिनों ये इलाक़े अत्यन्त ही दरिद्र हो गये थे। पिछली बार युद्ध लग जाने के कारण खेती ठीक से हुई नहीं और जो हुई भी वह भगदड़ तथा बमवर्षा से नष्ट हो गई। उससे भी यदि कुछ हब्शी किसानों ने बचा रखा तो वह भी इस समय तक ख़तम हो चुका था। अब उनके अपने निज के खाने के लिए ही कुछ नहीं बचा था। दूसरे इलाक़ों से जहाँ से अन्न ढो कर लाने की बात सोची जा सकती थी वहाँ अब तक खेत काटने लायक़ हुए ही नहीं थे।

हब्शी मोर्चों पर के सैनिक भूख के मारे तितर-बितर होने लगे। सैकड़ों की तादाद में वे दूर-दूर के इलाक़ों में छिपकर भागने लगे। उन्हें इन दिनों स्वाभाविक ही खेतों में काम न कर पाना खटकने लगा था। उसके लिए वे व्याकुल थे। फ्रंट पर लड़ने की अपेक्षा उन्हें अपने गाँवों में शांति से दिन काटना कहीं अधिक प्रिय था।

धीरे धीरे हम लोगों के साथ की भी रसद चुक चली। दीदी की दवाएँ भी बमवर्षा से जितनी बच पाई थीं इस समय ख़तम हो गईं। इसके लिए हब्शी सरकार के पास एक महीना पहले से ख़त लिखा जा रहा था पर उन ख़तों के मुताबिक़ कार्रवाई होने की तो बात दूर रही उनका उत्तर तक नहीं आता था। जो हरकारे भेजे जाते वे हब्शी प्रथा के अनुसार गुम हो जाते। व्यर्थ ही हम उनके लौटने की प्रतीक्षा किया

करते। अन्त में हमें यहाँ तक सन्देह होने लगा कि शायद हमारे ख़त नियत स्थान पर कभी पहुँच ही नहीं पाते होंगे। हब्शी हरकारों के लिए काग़ज़ का मूल्य बहुत ही अदना सा होता है, इसलिए संभव है उन्होंने उसे रास्ते में ही फाड़ दिया हो और अब वे कहीं इतमीनान के साथ बैठे तज पीते और गाँव वालों को 'फ़िरंगियों' की करामातें सुनाते होंगे।

और कोई उपाय न देख हम लोग स्वयं ही दक्षिणी फ्रंट के हब्शी सैनिक केन्द्र के लिए रवाना हुए। हमारे भाग्य से वह अधिक दूर नहीं था। पैदल कुल तीन दिन के रास्ते पर था। हम लोगों की ट्रक बम के द्वारा बहुत पहले नष्ट हो गई थी इसलिए आधुनिक ढङ्ग से यात्रा करने की बात हम सोच भी नहीं सकते थे।

इन दिनों हब्शी सैनिक केन्द्र बाली प्रदेश के सारार नाम के एक गाँव में था। हब्शियों के कई बड़े बड़े जेनरल और गवर्नर उस स्थान पर थे। पर सारे दक्षिणी फ्रंट का कमांड रास दस्ता के हाथ में था। यह रास दस्ता अबीसीनियन सम्राट् का दामाद लगता था, इसी लिए सैनिक उसे आपस में बातचीत करते समय 'जमाई बाबू' जैसा एक शब्द व्यवहार किया करते।

हम लोगों के विदेशी और उसी कारण बहुत 'ऊँचा' ओहदा रहने के कारण इस बड़े रास (गवर्नर) के पास पहुँचने में हमें कोई कठिनाई नहीं हुई।

३

'जमाई बाबू' की उपाधि सचमुच ही रास दस्ता के उपयुक्त थी। यदि किसी लखनवी की उन पर निगाह पड़ी होती तो उन्हें नवाब वाजिद अलीशाह के ख़ान्दान का पहचान लेने में वह एक क्षण भी विलम्ब नहीं करता।

कोमल काट। गुलगुल। भावुक। रसीली मदमाती सुन्दरियों को रिझाने वाली आँखें। उन्हें एक बार ही देख कोई भी कह उठता—

'यह चेहरा तो सुन्दरियों के बीच रहने के लिए, उनके साथ दाव-पेंच खेलने के लिए, उन्हें फूलों से बमबॉर्ड करने के लिए बनाया गया है। इन्हें भला लड़ाई से क्या ताल्लुक़!'

बात भी सच थी। इस स्थान का वायुमंडल अब तक जिसे मैं लड़ाई समझता और आँखों से देखता आ रहा था उससे बिलकुल ही भिन्न था। मुझे इस पर विश्वास करने के लिए बारबार आँखें मलनी पड़तीं। पर इस स्थान पर पाउली को देख कर और कुछ अधिक सोचने की आवश्यकता नहीं थी। उसकी हरकतों से मैं आदिस अबेबा में ही परिचित हो चुका था। वही इन दिनों जमाई बाबू को 'रिझाया' करती। इटालियनों के साथ लड़ाई चल रही थी इसी लिए शायद विशेष कर इटालियन शराब ही इनकी मंडली में अधिक ढला करती।

फ्रंट की ख़बरें जितनी दूर यहाँ से थीं उतनी शायद ही दुनिया के किसी कोने से रही होंगी। जमाई बाबू के इर्द-गिर्द जेनरलों के बदले ज़नख़ों की जमात रहा करती। औरतों पर की हार-जीत को ही वे फ्रंट की वास्तविक हार-जीत क़रार दिया करते।

ये सबसे ज़्यादा चिढ़ते जब इनके सामने कोई हब्शी मोर्चे की चर्चा छेड़ता। ये साफ़ कहा करते—

'इससे हमें क्या ताल्लुक़! तुम किस दुनिया की सड़ी-सड़ी गन्दी बातें किया करते हो, यही तो हमारी समझ में नहीं आता।'

जो ऊँचे हब्शी ओहदेदार थे उन्हें यदि कोई फ्रंट का निरीक्षण करने की सलाह देता तो वे कहते—

'हम तो नेगुस (सम्राट्) के पीछे पीछे चलने वाले हैं। वे फ्रंट से जितनी दूर होंगे हम भी उतनी ही दूर रहेंगे।'

जब उन्हें बताया गया कि नेगुस स्वयं उत्तरी फ्रंट पर सैनिकों को प्रोत्साहित करने गये हैं, अब आपको दक्षिणी फ्रंट पर वैसा ही करना चाहिए तो उन्होंने उत्तर दिया—

'हमें इसके लिए फ़ुरसत कहाँ? और दर असल यह तो हम लोगों का काम भी नहीं। यह काम तो हमारे जेनरलों का है। उनके ही ऊपर हम लोगों ने जिसे आप लड़ाई कहते हैं उसका सारा भार रख छोड़ा है।'

इन जेनरलों को भी देखने का हमें शीघ्र ही मौक़ा मिला।

४

जैसा अब तक अपनी कल्पना में मैं जेनरलों को देखता आ रहा था उसके अनुसार मेरा अनुमान था कि उनके सामने फ्रंट के नक़शे बिछे रहते होंगे। अपनी तथा शत्रु की शक्ति, दाँव-पेंच को उन्हें पूरी वाक़फ़ियत रहती होगी। आलपीनों की गोटियाँ बना बना वे सब तरह के सैनिक पहलू पर विचार करते होंगे और उसके अनुसार अपनी फ़ौज को पीछे हटने, आक्रमण करने वा रुके रहने की हिदायत देते होंगे। इसी के आधार पर फ्रंट की वास्तविक लड़ाई चला करती होगी।

पर अबीसीनियन जेनरल इस भाँति के नहीं थे। उनमें दो सबसे ऊँचा ओहदा रखने वाले बहुत ही अधिक धार्मिक प्रकृति के थे। लगभग एक सप्ताह से उनकी बहस फ्रंट की किसी घटना से सम्बन्ध रखते हुए विषय पर नहीं बल्कि बाइबिल में लिखी गई घटना पर चल रही थी। जब आपस में वे इसका निर्णय नहीं कर पाये तो उस इलाक़े के सब से बड़े धार्मिक गुरु को बुला कर उसका निर्णय कराने लगे थे।

मैं जिस समय उनके पास पहुँचा वे दोनों एक धार्मिक गुरु के दोनों बग़ल बैठे बाइबिल में कही गई बाढ़ की घटना का ख़ुलासा करा रहे थे। देजाजमाच (जेनरल) बयाना का कहना था कि ज्यों ज्यों बाढ़ आती गई छः सौ वर्ष के बूढ़े नोआ

का बनाया हुआ सिर्फ़ आर्क पानी के ऊपर आसमान में उठता गया। देजाज मकोनेन, जो कुछ अधिक बूढ़े थे, इस बात को इसी रूप में मानने के लिए तैयार नहीं थे। उनका कहना था कि तब तो बूढ़े नोआ के लिए शौच जाने की कहीं जगह ही नहीं रह जाती। इसलिए ईश्वर ने यह तरकीब लगाई थी कि उस नोआ के आर्क के चारों तरफ़ की दो बिगहा भूमि भी सूखी रह जाये और वह भी आर्क के साथ ही साथ पानी के ऊपर उठती चली जाये।

पता नहीं धर्मगुरु ने इसका क्या फ़ैसला सुनाया। पर इतनी बात थी कि उनके फ़ैसला देने में ही कई दिन की देर लग जाने की संभावना थी। कई दिन तक इस पर और भी तर्क चलने की गुंजायश रह गई थी। इतनी बात निश्चित थी कि जेनरलों को और भी एक सप्ताह तक इस मामले से छुटकारा और कोई बात सोचने के लिए नहीं मिल सकता था।

इस हालत को देखकर मुझे आश्चर्य हो रहा था कि इटालियन अब तक और भी आगे क्यों नहीं बढ़ सके। शायद इसका कारण यह था कि साधारण सैनिक और औसत दर्जे के हब्शी अफ़सर न तो बाइबिल के वैसे भक्त थे और न उन्हें पाउली जैसी ललनाओं की तरफ़ निहारने का ही कभी मौक़ा मिला था।

मामला यहीं तक रहा हो ऐसी बात नहीं थी। हमारे सामने एक कम्पनी-कमांडर ने अपनी कम्पनी के नष्ट होने की ख़बर दी और एक विशेष मोर्चे पर कमज़ोरी की बात बतलाई तो एक जेनरल ने अपने पास खड़े सिपाहियों को हुक्म दिया—

'इस कम्पनी कमांडर का दिमाग़ ख़राब हो गया है। इसे यहाँ से बाहर धक्का देकर निकाल दो।'

कम्पनी-कमांडर ने रास दस्ता के पास इसकी फ़रियाद करने और अपनी बात दुहराने की गुस्ताख़ी की। वहाँ की मजलिस के लोगों की नाक फ़ुट पर से ताजे आये आदमी को पचास गज़ की दूरी पर से देख कर पहले से ही फटने लगी थी। उन्होंने उस कम्पनी-कमांडर को बाँध कर आदिस अबेबा के पागलख़ाने में भिजवा दिया।

एक दिन रास दस्ता के दरबार के एक ज़नख़े ने सिर्फ़ इटालियन विमानों के आक्रमण करने का नाम सुन लिया था, उसी से उसके होश ऐसे गुम हो गये कि दो दिन तक भय के मारे वह टेंट लपेट कर झाड़ियों के बीच पड़ा रहा। तीसरे दिन लौटने पर वह अपनी बहादुरी और इटालियनों के साथ पाला पड़ जाने, उन्हें हरा डालने, पीछे हटा देने, मार डालने तक की बड़ी अनोखी अनोखी कहानियाँ कहने लगा। दरबार के लोगों ने चारों तरफ़ से उसकी वाहवाही की। उसे

अबीसीनियन फ़ौज की बहादुरी का सब से बड़ा इनाम दिया गया।

स्वयं पाउली ने उसे अनाज का एक बहुत बड़ा ढेर इनाम में दिलवाया। एक हफ़्ते बाद पता चला कि वह ढेर बोरों में बन्द कर इटालियन लोगों की लाइन में घुसने के सही रास्ते पर पहुँच गया था।

अपनी आँखों से इस प्रकार का दक्षिण का अबीसीनियन जेनरल हेड क्वार्टर देखने वाले हँसा करते। पर जिन्हें इसके कारण कुछ भी झेलना पड़ा था उनके मुँह से एक शब्द नहीं निकल पाता। वे मूक हो जाया करते।

५

जेनरल हेड क्वार्टर की मजलिस के सामने हाज़िर होने पर हम लोगों को भी डाट सुननी पड़ी। स्वयं रास दस्ता ने दीदी से कहा—

'तुम्हारा काम बिल्कुल ही ठीक नहीं हुआ। बैटेलियन क्यों नष्ट हुई? घायल क्यों मरे? तुम्हें तो बाँध के हमें अपने घर में रखना चाहिए। फ़्रंट पर तुम क्या ख़ाक छाना करती हो?' वे कुछ इटालियन शराब और अधिक पाउली के नशे में थे।

'यदि मैं नहीं होती तो एक भी घायल नहीं बचता।' दीदी गुनगुनाती हुई कहने लगी।

'वही तो मैंने कहा—' दस्ता ने उसकी बात अनसुनी कर और बीच में ही काटते हुए कहा—

'फ्रंट पर लोग क्यों मरते हैं? वह भी तुम्हारे रहते! अगर तुम उन्हें बचा ही नहीं सकतीं तो दवा-दारू किस लिए सीखा? तुम्हें तो बँधवा के आदिस अबेवा के हाजत-घर में बंद कर रखना चाहिए। लेकिन तुम विदेशी हो इसलिए हमें उतनी दूर तक अख्तियार नहीं! अफ़सोस!'

'मेरे लिए वही सबसे बड़ा इनाम होगा—' दीदी ने अपना जख्मी हाथ दिखाते हुए कहा—'घायलों को बचाने की कोशिश में मैं स्वयं गैस से घायल हुई, उसका तो आपने जैसा बताया वही समुचित इनाम होगा।'

दीदी के हाथ की सूजन दूर नहीं हुई थी। उस पर दस्ता की दृष्टि पड़ी। उसे देख उन्होंने कहा—

'मूर्ख कहीं की! जब अपनी ही दवा नहीं कर सकती तो फ्रंट पर आई ही किस लिए थी? अभी यहाँ से चली जा।'

यह दक्खिणी फ्रंट के सिपहसालार का हुक्म था। इसके ऊपर और कुछ चल नहीं सकता था। रेडक्रास को एक रत्ती भर की भी मदद मिलने की उम्मीद नहीं थी। हम लोगों

के आदिस अबेबा लौटने में जितनी रसद आदि की ज़रूरत थी उसके दिये जाने में भी आनाकानी होने लगी।

'हम लोग अजीब आदमियों के पाले पड़े हैं।' दीदी कहा करती। हम उन पर क्रुद्ध होते। मन ही मन उन्हें गालियाँ देते। उन्हें मनुष्यता से बहुत नीचे दर्जे का क़रार देते। कभी कभी अपने आपको भी उनके बनिस्बत कोसने लग जाते पर चारा कुछ भी नहीं था। हम लोगों की तबियत बहुत अधिक ऊबती जा रही थी।

६

जो लोग सैकड़ों आदमियों की हत्या अपनी आँखों देख चुके होते हैं उनका दृष्टिकोण ही बदल जाता है। मनुष्य का रक्त उनकी आँखों के सामने अनवरत नाचता रहता है, जिसे भुलाने की चेष्टा करने पर भी वे नहीं भुला सकते और उसी के प्रकाश में अन्यमनस्क रूप से संसार की और बातें देखा करते हैं। रक्त के रंग के सामने उन्हें दुनिया का और सब रंग बिलकुल फीका जँचता है। वे और किसी रंग को समझ पाने के नाक़ाबिल हो जाते हैं।

इसमें भी ख़ूबी यह रहती है कि रक्त से भली भाँति परिचित हो जाने के कारण वह उन्हें जितना भयानक नहीं दीखता उतने ख़ूँख़ार और भयानक उन्हें दुनिया के और रंग

दिखाई देते हैं। उनकी बुद्धि के अनुसार उस भयानक ख़ून-ख़राबी के कांड का सारा अपराध उस और रंग का ही रहता है।

हम लोगों की दृष्टि में रास दस्ता की मजलिस बड़ी ख़ूँख़ार दीखने लगी। उतना रक्तपात क्या उनके उसी ऐश-आराम के लिए चल रहा था? बार बार मन में प्रश्न उठा करते। जब जब उनके नाच-रंग की आवाज़, जिसे वे ही नहीं बल्कि सारी दुनिया ही 'मधुर' नाम दिया करती है, हमारे कानों में पड़ती तो हम चौंक उठते। अक्सर हम लोगों की रात भर की नींद तक हराम हो जाया करती।

आधी रात को दीदी ने मुझे जगाते हुए कहा—

'सुन रहे हो?'

'क्या?'

'वही—'

एक तरफ़ से नाच-गाने और दूसरी ओर से शराबी जुआरिओं की आवाज़ आ रही थी। इसमें एक तरफ़ मजलिस के लोग और दूसरी ओर कुछ चुने हुए जेनरल थे।

'मुझे तो ये नरपिशाच से भी गये-गुज़रे दीखते हैं।' दीदी ने कहा—'शायद साक्षात् भूतों का तांडव नृत्य देख कर भी मुझे इतना भय नहीं लगता। चलो, हम कूच करें।'

'इसी वक्त?'

'और क्या ? हर्ज ही क्या है ? दुनिया की कोई भी दूसरी जगह क्या इस हत्यारे स्थान से अधिक सुन्दर नहीं होगी ?'

उसी वक्त हम लोगों ने अपने साथ के दो विश्वासी आदमियों को जगाया। सामान कुछ अधिक बाँधना नहीं था। वहाँ से आदिस अबेबा का रास्ता घोड़े से लगभग आठ दिन का था। लेकिन हम लोगों के घोड़े फ्रंट की ड्यूटी रहने के कारण अब भी बहुत थके और कई घायल थे।

हमारे नौकर बिना हमसे राय लिये ही जेनरलों के अस्त-बल के दो चुने हुए घोड़े खोल लाये। और लोग उस समय ऐसे मस्त हो रहे थे कि उन्हें उसका पता शायद हफ़्ते बाद भी चलता, इसमें भी सन्देह था। हम लोगों ने स्वयं भी कोई एतराज़ नहीं किया।

७

पव फटने के बहुत पहले ही हम लोगों ने डेरा कूच कर दिया।

'बड़ी भयानक है।' रास्ता चलते चलते मेरे मुँह से नकला।

'क्या भयानक है ?' उसने पूछा।

'यह लड़ाई।'

'तुम इसमें कौन सी चीज़ भयानक पाते हो ?'

'क्यों ? तकलीफ़, खून-ख़राबी, मृत्यु···'

'नहीं भाई, तुम निरे बच्चे हो।' उसने मुझे बीच में ही टोका—'यह तो मैं अस्पताल में भी देख चुकी हूँ। वहाँ हज़ारों ही तकलीफ़ सहते थे, डाक्टर का बहाया हुआ कितना ही ख़ून रोज़ देखा करती थी और कितनों की ही मृत्यु होती थी। यह दृश्य तो मनुष्य बहुत बार देखता है। इससे भी भयानक चीज़ें होती हैं जो आदमी सिर्फ़ लड़ाई में देखता है।'

'कौन सी ?'

'तुम मर्द हो, पता नहीं तुम्हारे मन में क्या ख़याल आयें, पर मेरे मन में तो आता है कि मनुष्य जिस पशु-भावना से प्रेरित होकर, अपनी मनुष्यता को तिलाञ्जलि दे दूसरे पर वार करने के लिए हथियार उठाता है, वह खून-ख़राबी और मृत्यु की अपेक्षा हज़ार गुनी भयङ्कर है। यह तभी संभव होता है जब मनुष्य पहले अपनी हत्या भीतर ही भीतर कर चुकता है। इस आत्महत्या की कल्पना से ही मैं काँप जाती हूँ। पर इसी आत्महत्या के बाद लोगों को बहादुरी और साहस के तमग़े मिलते हैं। यह दलील मैं बिलकुल ही नहीं समझ पाती।'

'इतना समझते हुए तुम फ़्रंट पर क्यों गईं ?' मैंने टोका।

'यह सवाल जान बूझ कर मैं अपने आपसे नहीं करना चाहती। पर इतना जानती हूँ कि हमारे रेडक्रॉस की वैसी उपयोगिता नहीं, ख़ास कर के इस अबीसीनियन युद्ध में। फिर भी फ़्रंट पर गई। न जाने क्यों ? मैं जानती हूँ कि मेरी मलहम-पट्टी से मनुष्य की वास्तविक तकलीफ़, युद्ध का वास्तविक ख़ूँख़ारपना दूर नहीं हुआ। ये सब काम तो हमारे हाथ यन्त्र के समान किया करते थे। मनुष्य के हृदय का वास्तविक घाव तो अब भी अछूता ही रहा।'

उसके चेहरे पर निराशा की रेखाएँ आ जमीं।

—

आख़िरी मंज़िल

१

खुला मौसिम। विस्तृत मैदान। बिखरे हुए खेत। ऊँचे ऊँचे स्वच्छ नीले चँदोवे से ढके पहाड़। खिले यौवन सी लहराती हुई हरियाली। इनके ही बीच से हमारा रास्ता जाता था।

'हँसो, हँसो ! गाओ गाओ !' हवा हमारे कानों में गुद-गुदाया करती।

हमारे रोंयें सिहर उठते।

'नहीं।' बद्ध, रुग्ण हृदय उसे उत्तर देता—'हम इसके योग्य नहीं।'

कभी कभी पीले पड़े, आँसू पोंछते गाँव दिखाई देते। हमें आदमियों की याद आ जाती।

'कितने भद्दे हैं ! बदसूरत।' हम मन ही मन कह उठते।

और आगे बढ़ते। आँखों के सामने वही अठखेलियाँ खाता हुआ जाग्रत जीवन का निमंत्रण।

'हमें स्वीकार नहीं।' हृदय कहता—'हम उसके योग्य नहीं।'

हवा हँस दिया करती—

'यह कैसी मूर्खता? तुम तो अभी भी अपने को मृत्यु से घिरा समझ रहे हो! अंधे कहीं के। आँखें खोल कर देखते क्यों नहीं! तुम्हारे सामने तो जीवन है!'

हम चौंक जाते। आँखें मींज कर साफ़ करते। सामने देखते।

'वही तो! नहीं तो! हाँ, हाँ वही! तुम देखते नहीं—पतझड़ के ज़माने में तुमने जिनकी ठठरियाँ देखी थीं आज वे ही शृंगार कर सामने आ रही हैं, तुम उन्हें पहचान भी नहीं पाये? इसी का तो नाम जीवन है!'

हम मौन धारण किये ही आगे बढ़ते चलते। आदमी होने की हैसियत से अब भी अपने को नीच समझते। प्रकृति के बीच अपने स्थान का हक़दार अपने को नहीं मानते—चाहे पशुओं को मान लेने के लिए भले ही तैयार हो जाते।

'हम हँस नहीं पाते; हमारे हृदय में घाव हो गया है।' दीदी कभी कभी अपने भावों का विश्लेषण कर कहती—'यह घाव तो हज़ार रेडक्रॉस भी अच्छा नहीं कर सकते।'

हम आगे बढ़ते। मौन। पानी के उछलते हुए झरने को देख कर हम और अपने को नहीं रोक पाते। मनुष्य की स्मृति भूल जाती। घाव की पीड़ा सुदूर अतीत की घटना बन जाती। हम अपने आपको भूल जाते।

'कितने सुन्दर हो! कितने सुन्दर हो!' पता नहीं किसे संबोधन करती हुई दीदी की बुदबुदी सुनाई देती। हमारी चार आँखें होतीं। पानी के छींटों से हम गीले होने पर हँसते।

'किसे देख कर और क्यों?'

इसका हमें स्वयं ही पता नहीं रहता।

२

यूकेलिप्टस की परिचित तेज़ सुगंध ने हमारे आदिस अबेबा पहुँचने की सूचना दी। इस गंध के लिए हम लोगों का मन बहुत दिनों से उद्विग्न हो रहा था। इसमें हमें अपने निजी घर आ पहुँचने जैसा आनन्द अनुभव होता।

सभ्यता से परे के प्रदेशों में रहते रहते हमारी तबियत ऊब सी गई थी। मनुष्य की कीर्ति देखने के लिए हम उतावले हो चले थे। चहल-पहल, घर्र-घर्र, हरहर, पटपट आदि की आवाज़ जो सभ्यता का डङ्का बजाया करती हैं उनकी मधुर तान सुनने के हम बड़े इच्छुक हो गये थे।

घोड़े की सवारी में लगभग दस दिन लगे। थकावट बहुत अधिक महसूस होती पर सभ्य समाज का आकर्षण हमें बड़े वेग से चुम्बक की तरह अपनी ओर खींचे लिये आता। उसी के ज़ोर से आख़िरी दिन हम लोगों ने लगभग सोलह घंटे तक घोड़े की सवारी की।

चाँदनी रात थी। ठंढक। चारों तरफ़ का दृश्य दूध में स्नान कर रहा था। रंग-बिरंग की छाया हमें परिचित शक्ल जैसी महसूस होती। मधुर। थकावट आने पर भी वह महसूस नहीं हो रही थी।

एक पहर रात बाक़ी बची होगी उस समय हम शहर के किनारे पहुँचे। लोगों के झुंड हमें वहाँ से ही मिलने लगे। शहर में प्रवेश करने पर भी देखा—रास्तों पर काफ़ी चहल-पहल थी। सारा शहर ही जाग उठा था। लोग दिन भर का खाना तैयार कर हवाई जहाज़ों की बमवर्षा से बचने के लिए शहर के बाहर के जङ्गल और पहाड़ी गुफ़ाओं की ओर भागे जा रहे थे।

बीच शहर में पहुँच कर देखा—बहुत से घरों के ताले बन्द। जिस मकान में हमें टिकना था उसमें भी ताला लगा था। फ़्रंट का जीवन व्यतीत करते करते हवाई जहाज़ों के बम से होने वाले आतंक के हम परे पहुँच चुके थे।

थकावट इतनी ज़्यादा थी कि और अधिक विचार करने की क्षमता हम लोगों में शायद ही बच रही थी। हम लोगों ने बरामदे में अपना बिस्तरा डाला। उस पर लेटते न लेटते हमें नींद आने लगी।

नौकरों ने भी घोड़ों के बोझ हलके कर दिये। वे सड़क पर दिल खोल कर तीन चार बार लोट गये। फिर देह झाड़ कर एक किनारे जा खड़े हुए।

मुहल्ले का चौकीदार हमें सतर्क करने आया। पर उसे स्वयं ही भागने की जल्दी पड़ी थी इसलिए बिना अधिक झमेले के ही वह वहाँ से चला गया।

जिस चहल-पहल और गुलज़ार बाज़ार के लिए हम उतने परेशान हो रहे थे वह बिलकुल शांत हो गया। सन्नाटा छा गया। पर हमारे सोने का वक़्त रहने के कारण हमें यह खटका नहीं।

नौकर खर्राटे लेने लगे। हम लोगों के भी मन ही मन—'जो होना होगा होगा'—कहते ही नींद आ गई।

३

इटालियन विमानों की भयानक भनभनाहट ने हमारी नींद तोड़ी। पलक खोल कर देखा—धूप काफ़ी निकल आई

थी। विमानों का एक जत्था सफ़ेद चीलों जैसा उड़ता चला जा रहा था। पलक बन्द करते ही उनका रङ्ग काला पड़ता दिखाई दिया। बड़ा ही भयावना। मृत्यु की शक्ल का।

अभी भी थकावट के मारे शरीर चकनाचूर हो रहा था। हम लोगों ने करवटें बदल लीं। मैंने चादर से अपना शरीर भली भाँति ढक लिया। फिर से नींद बुलाने की चेष्टा करने लगा।

इस समय बग़ल के घर से किसी के रोने की आवाज़ आई। हम लोग चौंक पड़े। और सोने का प्रयत्न करना व्यर्थ था। एक छः वर्ष का बच्चा रोता हुआ सड़क पर आ गया। वह कुछ बिलबिला रहा था। ज़बान गुजराती सरीखी मालूम हुई। मैंने उसे पुकारा। वह आया।

दीदी ने उसे अपनी गोद में बैठा लिया। टीरोली ज़बान में उसे प्यार की बातें कहने लगी। बच्चा चुप हो गया पर अवाक् हो हमारी ओर देखता रहा।

विमान हमारे बरामदे से दिखाई दे रहे थे। वे ठीक हमारे सर पर आ कर मँडराने लगे। बच्चा दीदी की गोद में मुँह छिपा कर चिपकता जा रहा था। दीदी उसे चादर से ढकने का प्रयत्न कर रही थी। हवाई जहाज़ों की ओर देख उसने कहा—

'आदमी के नाते एक बार प्यार तो कर लेने दो ! फिर हमारी जान ले लेना। बच्चे को बचा देना।'

एक बार बच्चे की ओर देखा। भय से उसकी आँखें बन्द हो गई थीं। पर हवाई जहाज़ आँखों के ओझल हो गये।

बग़ल के घर से किसी स्त्री के रोने की आवाज़ आई। अब तक वह शायद विमान के मोटरों की भनभनाहट के कारण हमें नहीं सुनाई पड़ी थी। बच्चा उसी ओर मुँह फिरा फिर से रोने लगा।

उसे लिये हुए हम लोग बग़ल वाले घर में आये। साड़ी पहने एक स्त्री अभी अभी बच्चे को ढूँढ़ने के लिए चौकठ के बाहर पाँव रख रही थी। वेष-भूषा से ही पता चल जाता था कि यह बहुत ग़रीब परिवार था। स्त्री शायद बीमार भी थी।

उसकी ओर दृष्टि पड़ते ही बच्चा दीदी की गोद से कूद अपनी माँ की छाती से चिपक गया। माँ सिसकने लगी। बच्चे को जिस प्रकार दीदी ने धीरज बँधाया था उसी भाँति वह अपनी माँ को बँधाने की चेष्टा करने लगा।

'चुप ! चुप !'

विमान लौटकर फिर सर पर मँडराने लगे।

अपना मुँह माँ की गोद में छिपाते छिपाते एक झाँकी उसने दीदी की ओर लगाई। उसकी आँखें कह रही थीं—

'दीदी, तू क्यों नहीं इन विमानों को लौट जाने के लिए कहती !'

विमान लौट गये। पर उसकी माँ का भय दूर नहीं हुआ। उसे उनके फिर लौट आने की आशंका हो रही थी। वह बिलख रही थी।

बच्चा रुँधे गले से अपनी तोतली बोली में उससे कहता रहा—

'चुप··! चुप रह माँ !'

———

सज़ा

१

फ्रंट की थकावट अभी मिट भी नहीं पाई थी कि हम लोगों की रवानगी का परवाना काट दिया गया। इतनी जल्दी हमें हब्शियों के देश से विदा लेनी पड़ेगी इसकी हमें आशा नहीं थी। गाड़ी नव बजे सुबह खुलने वाली थी और हमें उसमें सवार कराने वाले दूत आठ बजे हमारे पास आये। किसी परिचित से विदा लेने का भी उन्होंने हमें मौक़ा नहीं दिया। इसका कारण था कि हम दोनों के ही ऊपर बड़े भयानक इल्ज़ाम लगाये गये थे।

हब्शी सरकार यों किसी भी विदेशी के बाबत विशेष पूछताछ नहीं किया करती, पर दीदी के मामले में वह अपनी यह आदत भूल गई। उसकी बाबत पूरी जाँच-पड़ताल की गई। उसका 'इटालियन' होना सिद्ध हो चुका था; इतना ही नहीं, उस पर जासूस होने के भी इल्ज़ाम लगाये गये। स्वभावतः

इसमें पाउली का हाथ दीखता था। यदि हब्शी सरकार को अधिकार होता तो शायद दीदी को मृत्यु-दण्ड दिया जाता किन्तु विदेशियों के बाबत उसे यह अधिकार ही नहीं था। अधिक से अधिक सख़्त दण्ड देशनिकाले का वह दे सकती थी; और उसने वही दिया।

हमारे ऊपर अँगरेज़ कौंसल की कृपा हुई। जितने विदेशी उस आफ़त के देश में उस समय रह रहे थे, उनमें सब से ख़राब हालत भारतीयों की थी। हवाई हमलों के वक्त दूसरे देशों ने अपने देशवासियों को अपने अपने दूतावास में शरण लेने का इन्तज़ाम किया था किन्तु भारतीयों को अँगरेज़ी दूतावास में ये सुविधाएँ प्राप्त नहीं थीं। इसी की फ़रियाद अँगरेज़ी राजदूत के सामने करने की मैंने गुस्ताख़ी दिखाई थी जिसके कारण मैं भयानक अपराधी क़रार दे दिया गया। दूतावास के सिपाही अपने आलसी स्वभाव से लाचार थे जिस कारण मुझे भी दीदी के साथ ही रवाना होने का मौक़ा मिल गया।

हम लोगों के निरपराध रहते भी जो सज़ा मिली थी उसके कारण हमें क्रोध आ रहा था पर उसकी कहीं भी फ़रियाद नहीं की जा सकती थी। उसका पालन करने के सिवा हमारे सामने दूसरा चारा नहीं था।

स्टेशन पर आते समय रास्ते किनारे के किसी मकान से रेडियो की आवाज़ सुनाई दी। किसी इटालियन केन्द्र से कहा जा रहा था—

'अब हम हब्शी राजधानी से कुल सौ मील के फ़ासले पर रह गये हैं।'

'तब तो उनके यहाँ आ पहुँचने में अधिक देर नहीं है?' दीदी कहने लगी—'हमें निकाल बाहर करने वाले ख़ुद ही शीघ्र यहाँ से बिदाई लेने वाले हैं।'

उसके आख़िरी वाक्य में प्रतिशोध नहीं बल्कि अफ़सोस भरी आह थी। उसके सामने इस समय भी ऊँचे ओहदे वाले अमहारा नहीं बल्कि साधारण श्रेणी के हब्शियों का चेहरा नाच रहा था। इन निरपराधियों की ही इन दिनों सभी फ़्रंट पर निर्दयता-पूर्वक बलि दी जा रही थी।

गाड़ी खुलने के थोड़ी देर पहले ही हम स्टेशन पहुँच गये। 'हब्शियों की हुकूमत रहते रहते शायद आज आख़िरी गाड़ी यहाँ से छूट रही है।' स्टेशन मास्टर एक सज्जन से कह रहे थे। अगली गाड़ी दो दिनों बाद छूटती। उस समय तक इटालियनों के आदिस अबेबा तक पहुँच जाने की सब लोग संभावना करने लगे थे।

२

मुसाफ़िरख़ाने से जब वह अपनी पोशाक बदल कर बाहर निकली, मेरे लिए भी उसे एकाएक पहचान लेना कठिन हो रहा था। दीदी के बदले अब वह पूरी पूरी फिर से लूसी बन गई थी। वही चुलबुलापन। वही चपलता। जीवन को हलका मान कर वही सर्वदा मुसकराते चलने वाला स्वभाव।

पहरेदारों के लिए उसे पहचान पाना और भी सख़्त था। उसके रेल के डब्बे में आ कर बैठ जाने पर भी वे थोड़ी देर तक मुसाफ़िरख़ाने के दरवाज़े पर पहरा देते रहे। गाड़ी खुलने तक उसके एकाएक उस प्रकार बदल जाने पर उन्हें ताज्जुब होता रहा।

गाड़ी खुलते ही उसके लिए अपने स्थान पर बैठे रहना कठिन हो गया। वह कभी एक खिड़की से आदिस अबेबा के यूकेलिप्टस कुञ्जों को देखती और कभी दूसरे किनारे जा दक्खिनी फ्रंट से आने वाले रास्ते निहारा करती। छुट्टी मनाते वक्त जब बच्चे अपने घर के लिए रवाना होते हैं शायद इस समय उनकी चपलता भी वह मात कर रही थी।

हमारे सामने के बेंच पर एक और यूरोपियन सज्जन बैठे थे। शायद वे कोई व्यापारी रहे होंगे। मेरी शक्ल सूरत, वेष-भूषा में उन्हें इस समय भी शायद कुछ विशेषता दिखाई पड़ी

जिससे उन्होंने अन्दाज़ा लगाथा कि मैं किसी फ़्रण्ट से लौट रहा हूँ। बिना किसी प्रकार की भूमिका के उन्होंने पूछा—

'कहिए, फ़्रण्ट का मौज कैसा रहा?' वे मुसकरा रहे थे।

मेरा सारा अंग जल उठा। अंगारे पर पाँव पड़ने के जैसा महसूस करता हुआ मैं उठ कर एक आइने के सामने जा खड़ा हुआ। बहुत दिनों के बाद अपना चेहरा देखा। रुग्ण। दाढ़ी बढ़ आई थी। गाल चिपक गये थे। आँखें धँस गई थीं। बालों का रंग लाल हो गया सा दीखता। कानों के भीतर पता नहीं कहाँ की धूल इस समय तक छिपी सौगात के रूप में चलती आ रही थी।

मुझे अपने आपको पहचानना मुश्किल हो रहा था। चाहे और जो हो, इस चेहरे को देख कर मुझे विश्वास नहीं हो रहा था कि मौज में मैं रहा हूँ। मैं अपने आप ही कहने लगा—

'ये अन्धे हैं। इन्हें ख़ून-ख़राबी सूझती ही नहीं! कहीं संहार का ही नाम तो ये लोग मौज नहीं दिया करते।'

सामने बैठे व्यक्ति पर बड़ी चिढ़ हो रही थी। उसकी नासमझी पर, उसकी मुसकराहट पर जी-जान से मैं जलता जा रहा था।

'समूची यात्रा में उससे और एक शब्द भी नहीं बोलूँगा।' मैंने मन ही मन तय किया।

सौभाग्यवश और किसी यात्री ने वह प्रश्न मुझसे नहीं दोहराया। मुझे चुप देख उस यूरोपीय यात्री ने भी समझ लिया कि मैं उसकी ज़बान से बिलकुल अपरिचित हूँ।

३

शाम होते होते पासा पलटने लगा। रेल की गति के साथ ही साथ सब भयानक बातें पीछे छूटती जा रही हैं, वे अतीत की घटनाएँ बनती जा रही हैं—महसूस होते रहने के कारण मेरा मन हलका होता जा रहा था। पर वह स्थिर, शांत बनती जा रही थी।

हब्शी क़ानून के अनुसार रेल सूर्यास्त के बाद आगे नहीं जाती थी। हावाश स्टेशन पहुँचने पर वह रुक गई। हम लोगों ने स्टेशन के होटल में डेरा डाला। अँधेरा हो आया। लेटने की तबियत हम दोनों में किसी की भी नहीं थी। कई प्रसंग मैंने उसके सामने छेड़े किन्तु तार की ज़बान में उसका उत्तर दे वह चुप हो जाती। बड़ी देर तक वह उसी प्रकार रही।

'तू चुपचाप क्यों ?' उसके कंधे पर हाथ रखते हुए मैंने पूछा—'हँसती क्यों नहीं ?'

मेरा हाथ उसने हटाया नहीं, पर कहने लगी—

'मैं हँसना ही भूलती जा रही हूँ।'

'ऐसा भी कभी संभव है ?'

'अब संभव दीखता है। मैं अपने आपसे ही अपरिचित बन गई हूँ। सब सुनसान दीखता है। हँसी में भी भयानकता के सिवा और कुछ दिखाई नहीं देता।'

'भयानकता?'

'तुम्हें आश्चर्य क्यों होता है? जो थोड़ा भी झेल चुका होता है उसे तो आश्चर्य नहीं होना चाहिए।'

'लेकिन उसे अब हमें भूल जाने की कोशिश करनी चाहिए।'

'यदि भूलना संभव हो!'

वह अपनी चारपाई पर बैठ गई। सामने हावाश के दर्रे की घनी अँधियारी थी। अँधियारा होने के पहले जो दृश्य सामने देखा था उससे पता चल गया था कि यह स्थान दनकालियों के देश की सीमा पर स्थित है। उस दृश्य पर इस समय काले पर्दे का पड़ जाना ही अधिक सुहावना बन गया था। पर मैं मन ही मन इस पर्दे के भीतर यमराज का घर देखने लगा। एकाएक किसी युवती का सुन्दर चेहरा सामने आया। सोफ़ी! मैं काँप उठा। कहीं वे दीदी का भी कच्चा मांस...! भय से सारा अङ्ग सिहर उठा।

'इस संसार में सिर्फ़ कापालिक ही हँस सकते हैं'—वह धीरे धीरे कहने लगी—'नरमुंडों के बीच रहते हुए वे ही हँसने

के क़ाबिल हो सकते हैं। और वे हँसा भी करते हैं। बलि देते समय ही तो वे सबसे अधिक हँसते हैं। हमारी इस दुनिया में अनवरत बलि चढ़ती रहती है इसी लिए लोगों को हँसी भी सूझती है। हमारे मनुष्य-समाज का तो क़ानून ही बन गया है कि यदि हम अपने पड़ोसी का सर पहले नहीं ले लेते तो वह अगले क्षण हमारा सर माँगने के लिए हमारे दरवाज़े पर आ खड़ा होता है।'

वह अपने हाथों का तकिया बना लेट गई। देर तक चुप रही। उसे थका जान सोने के लिए छोड़ मैं उठ कर अपने कमरे में जाने लगा। मेरे उठने की आहट पा वह चौंक सी गई।

'नहीं, जाना नहीं—' उसने मेरा हाथ पकड़ अपने गालों पर रखते हुए कहा—'मुझे बड़ा भय लगता है। अभी जाना नहीं। अकेले में पता नहीं सर के भीतर कहाँ कहाँ के शैतान घुस कर ऊधम मचाने लगते हैं। मुझे डर लगता है वे कहीं मेरा गला न घोंट डालें। मृत्यु से अब बड़ा भय लगता है। मैं मरना नहीं चाहती। जीना चाहती हूँ।'

मैं बैठा रहा। उसके गाल धधक कर अँगारे की तरह हो रहे थे। सर भी बड़ा गरम था। मैंने समझा यह सब थकावट के कारण है। उसे नहा लेने की मैंने सलाह दी।

'नहीं, इस समय पानी देख कर भी डर लगता है। उसका

रंग ख़ून के समान है। अँधेरे में कोई भी गीली सी चीज़ मुझे ख़ून सी मालूम पड़ती है।'

उसका चेहरा अँधेरे में दिखाई नहीं देता था। सुबह को मुसाफ़िरख़ाने से निकलते समय जैसा उसे देखा था इस समय भी उसी प्रकार की उसे अपनी कल्पना में देख रहा था। उसकी इन बातों और उस चेहरे के अन्तर का ठीक ठीक अर्थ नहीं समझ पाया।

उसका ध्यान बँटाने के लिए मैं उसे इटली में घटी बहुत सी विस्मृत बातें, कई घटनाओं की याद दिलाने लगा। उसका सारा अंग सिहर उठा। रोओं का खड़ा होना मैं भी महसूस करने लगा।

'वह कापालिकों का देश है! उसकी याद न दिलाओ! मैं उसे भूल चुकी हूँ। उनकी करतूत तो तुमने देख ही ली। उनके बीच रहने के बजाय मैं दनकालियों के बीच रहना कहीं अधिक पसन्द करूँगी।'

थोड़ी देर चुप रह उसने कहा—

'लेकिन जीना हर हालत में चाहती हूँ।' उसके शब्दों में रूखी हँसी थी। 'मूर्ख!' उसके मुँह से निकला। अपने आप पर शायद उसे चिढ़ भी थी।

'वह भी आदमी हो कर! कितना भयङ्कर! हुश...'

जड़ैया आ जाने की भाँति उसके अङ्ग काँपने लगे।

४

'बेबी! तुम जा रहे हो? मुझे छोड़कर! न, वहाँ न जाना ··नहीं मानोगे?'

वह स्वप्न देख रही थी। दबे पाँवों उसके कमरे में मैंने प्रवेश किया।

'तुम चले गये? लौट आओ! लौट आओ! देखते नहीं वहाँ गोले बरस रहे हैं!'

'चांडाल! वहाँ न बरसाना! न बरसाना!' वह दाँत पीसने लगी—'घायल! घायल कर दिया! मैं अभी अच्छा किये देती हूँ! नहीं—यह तो ज़हर! ज़हर लगा है! इसका नतीजा?'

'मृत्यु? नहीं, मत मारो! उसे छोड़ दो! मेरी जान ले लो! उसे छोड़ो! छोड़ो! छो...'

इस बार वह चिल्लाने लगी।

मैंने लालटेन की धीमी की हुई बत्ती उसका दी। उसकी चमक से उसकी नींद खुल गई।

दृष्टि मेरी ओर गई। उसे विश्वास नहीं हुआ। अवाक् हो देखती रही। मानो मुझे पहचान पाना ही उसके लिए कठिन हो रहा था।

वह उठी। पास आ कर उसने निहारा।

'तुम ! जाओ ! जाओ ! अपने कमरे में जाओ !' कहते हुए मुझे अपनी ओर खींचती गई—'तुम्हें जाने का मज़ा चखाती हूँ।' कहती हुई मुझे बाहर खींच लाई।

इस समय तक पौ फटने लगी थी।

५

तीसरे दिन दोपहर को गाड़ी हब्शियों की सीमा के बाहर आ गई। वह कई घंटे फ्रेंच सोमाली प्रदेश में दौड़ती रही। धूप के कारण उसके काठ, लोहे जलने लगे थे। उन पर बहुत सी धूल भी जम आई थी जो होठों पर फिफरी की तरह दीखती।

सामने का दृश्य अब भी वैसा ही उचाट और रूखा सूखा था। वे ही बिना पत्ते और प्राण की झाड़ियाँ। नरमुंड की तरह बिखरे हुए पत्थर। सूखी ठठरियों की तरह खड़ी तलमलाती हुई पहाड़ियाँ। श्मशान। ध्वंसलीला की आराधना करने वाले कापालिकों की पूजास्थली।

जब बाहर दृष्टि दौड़ाते तो यही दृश्य। आँखों के विश्राम ले सकने का तिलमात्र भी स्थान नहीं। तबीयत अधिकाधिक परेशान होती जा रही थी।

'हमारी इस यात्रा का कहाँ अन्त होगा ?' मैंने साहस कर पूछा।

'जहाँ होना है वहीं।'

'इसका तो कहीं अन्त ही नहीं दीखता।'

'होगा! अवश्य होगा!' उसने खिड़की के बाहर दिखाते हुए कहा—'यह देखो, अब गाड़ी बालुओं के मैदान के बीच से हो कर दौड़ रही है, अब जीबूती अधिक दूर नहीं।'

बालुओं का मैदान एक क्षण के लिए आशामय लहरों से भरा दिखाई दिया। पर तुरंत ही अपनी भूल हमें मालूम हो गई। यह सिर्फ़ मरीचिका थी। आँखों के टिकने का यहाँ भी कोई स्थान नहीं दिखाई दिया।

'जीबूती में ही तो हमारी यात्रा का अन्त नहीं। वहाँ से हम और आगे किधर जायँगे?'

'जिधर दो आँखें जायँगी।'

'सच?'

'और क्या?' उसके मुँह पर रूखी हँसी की रेखाएँ थीं। मैं चौंक सा गया। व्यग्र सा होने लगा। खिड़की के बाहर फिर से दृष्टि दौड़ाई। वहाँ एक क्षण के लिए आँखें स्थिर हो गईं। विश्राम का एक स्थान दीखने लगा।

सामने था समुद्र का किनारा।

समुद्र-किनारे

१

ममता-रहित सूर्य इस प्रदेश को बारहों महीने झुलसाया करता है। धरती सात बजे सुबह से ही तप कर तवा बन जाती है। यहाँ के जीव जन्तु सदा भूख प्यास से तड़पते अपनी सूखती हुई आयु के दिन गिनते रहते हैं। पौधे पनपने के पहले ही भुन भुन कर मर जाते हैं।

जीबूती की शक्ल ही फ्रेंच सोमाली तट पर फोड़े की तरह की दीखती है। सूर्य की किरणें उस पर अनवरत नश्तर लगाती हैं और किनारे पर का उथला समुद्र अपनी लहरों से पिचकारी भर भर कर उस पर नमक छिड़का करता है। अपनी इस काली करतूत को छिपा रखने के लिए ये हमेशा ही आँखों को चकाचौंध में डाल रखने वाली सफ़ेद वर्दी धारण किये रहते हैं। थोड़ी दूर पर का गंभीर समुद्र यह कांड देख देख कर रात-दिन गहरे स्वर में रोता रहता है।

ऐसे स्थान पर हम लोगों जैसे मारे मारे फिरते चलने वाले लोगों के आश्रय मिलने की आशा ही क्योंकर की जा सकती थी ?

स्टेशन के तपते हुए प्लैटफ़ार्म पर पाँव रखते ही देखा सफ़ेद अफ़सरों की हुकूमत में खड़े काले सोमाली सैनिकों का एक जत्था हमारी ही प्रतीक्षा में डटा है। हमारे पासपोर्ट जाँचे गये। मेरा तो तुरंत ही लौटा दिया गया। किन्तु उसका एक अफ़सर ने रख लिया। हज़ार पूछने पर भी उसने हमें कारण नहीं बताया। बाहर उनकी मोटर खड़ी थी। उस पर वे हमें अपने साथ पुलिस की चौकी तक ले आये। यहाँ हम एक दूसरे अफ़सर के हवाले कर दिये गये।

'आपके ऊपर तो इटालियन सरकार ने कई इल्ज़ाम लगाये हैं—' उसने दीदी की ओर नीचे से ऊपर तक देख कर कहा—'हमारा काम तो सिर्फ़ आपको उनके हवाले कर देना है। परसों उनका एक जहाज़ आयगा उसी से आपको हमें रवाना कर देना है।'

'यह कभी नहीं हो सकता—' दीदी ने दृढ़तापूर्वक कहा—'उन जल्लादों के बीच रहने की अपेक्षा यहीं इन बालुओं के ढेर पर भूना जाना मैं अधिक पसंद करूँगी।'

'आपके पसंद करने से तो कुछ नहीं होगा। इस भूमि पर तो हमें आपको एक मिनट भी नहीं टिकने देना चाहिए।'

'ऐसा क्यों?' मैंने पूछा।

'क्योंकि इनका पासपोर्ट दुरुस्त नहीं है।'

'उसमें कौन सा ऐब है?'

'यह बताने के लिए मैं मजबूर नहीं।' उस अफ़सर ने अपना प्रभुत्व जतलाते हुए कहा—'हमारी यही कम भलमनसाहत नहीं है कि आपको यहाँ हमने प्रवेश करने दिया। नहीं तो अब तक आप हब्शियों के देश में ही इटालियनों द्वारा गिरफ़्तार कर लिये जाते।'

ऐसे मौक़ों पर बहस से कोई भी लाभ नहीं होता। हम चुप रहे। अफ़सर उठ खड़ा हुआ।

'अब आपको हमारे साथ हमारे रक्षाविभाग के दफ़्तर में चलना होगा।'

'वहाँ क्यों?' मैंने टोका।

'क्योंकि इटालियन जहाज़ में सवार करा देने तक इनकी रक्षा का भार उसी विभाग के ऊपर रहेगा।'

'ये मेरे भार से तुम्हें बरी कर देना चाहते हैं।' दीदी ने मेरी ओर देख रूखी हँसी के साथ कहा।

उसकी बात वास्तव में ही सच निकली। जेल का ही

नाम वह अफ़सर सभ्य भाषा में रक्षाविभाग बता रहा था। पर दीदी का चमड़ा गोरा था। ऐसे लोगों के लिए गवर्नर के क़िले के ही एक भाग में व्यवस्था थी।

उस क़िले के फाटक तक मैं भी गया; पर उसके आगे जाने से संतरियों ने मुझे रोक दिया। अकेले उसे वे भीतर ले जाने लगे।

मैंने उसकी ओर देखा। आँखें नहीं टिक सकीं। मेरी दुर्बलता देख वह कहने लगी--

'भाई मेरे! जो आदमी मनुष्यता के नाते कुछ भी करता है उसके लिए सारी पृथ्वी भर में कहीं भी रक्षा पाने वा शरण लेने का स्थान नहीं रहता। हमने तो वही महान् पाप किया है; फिर इसका दण्ड तो भुगतना ही पड़ेगा। अफ़सोस क्यों करते हो?'

मेरा हाथ ऊपर उठा कस कर दबाते हुए उसने कहा—

'आडियो! (विदा)'

'नहीं, नहीं!' मैं पाँव पटकने लगा।

उसने मुझे अपनी ओर खींच लिया। छोटे बच्चे की भाँति बड़ी देर तक छाती से चिपकाये रहने के बाद कहा—

'आडियो नहीं; ओरिवुआर (पुनः मिलने तक)।'

चले बिना मोटर का दम बड़ी देर से हुकहुक कर रहा था।

'मैं बेशर्म हूँ ! माफ़ करना !' कहते हुए उसने मेरा माथा चूम लिया।

'फिर ओरिवुआर' उसने दोहराया।

उसकी ओर मैं और देख नहीं पाया। दैत्य की भाँति बड़े वेग से मोटर उसे खींचती भीतर चली गई।

२

मैं बड़ी देर तक भटकता रहा। चारों तरफ़ निर्जन। वीरान। सुनसान। इस ऊजड़ स्थान से अधिक अकेलापन शायद कोई जहाज़ के टूट जाने पर समुद्र के बीच अकेले गर्दन ऊँची किये चट्टान वाले टापू पर भी नहीं करता होगा।

जिधर से निकलता उधर ही समुद्र दिखाई देता। सोता हुआ। अफ़ीम के नशे में अथवा थक कर अंदाज़ लगाना कठिन था। शायद वह भी एकान्त जीवन से ऊब गया था। कभी कभी वह लम्बा निःश्वास छोड़ा करता जिससे पता चलता वह मरा नहीं है। शायद किसी मार्मिक पीड़ा के कारण आहें ले रहा था।

कछार पर बहुत सी नावें खड़ी थीं। सबकी सब ख़ाली। उनकी शक्ल ऊँट की रीढ़ जैसी दीख रही थी। मैं उसकी एक हड्डी पर जा बैठा। सामने देखा। पूर्णिमा का चाँद

अभी थोड़ी देर हुए निकला था। वह भी अकेला। आस-पास में एक भी तारा बातचीत करने के लिए नहीं। बिचारा अकेलेपन के कारण कैसा अधीर बन रहा होगा। दूर पर क्षितिज के पास अलग और भी एकान्त में ले जाकर समुद्र चुचकारी दे देकर उसे धीरज बँधा रहा था।

मैं बड़ी देर तक नाव की पटरी पर लेटा रहा। स्वप्न देखने लगा। पर अतीत में खाये हुए रसगुल्ले से इस समय मुँह मीठा नहीं हुआ। दर्शनशास्त्र की शरण ली। अकेले-पन का नियम सारे संसार, सारे ब्रह्मांड में लगता हुआ देखा। चाँद, समुद्र, कछार, मेरी नौका तक की शक्ल और भी उदास बन गई। इस उदासी से अपना पीछा न छुड़ा सकने के कारण मुझे झपकी आने लगी।

३

नाव हिली। मैंने समझा शायद समुद्र करवट बदलना चाहता है। मैंने भी करवट बदल ली। लहरें नाव को चटाचट थप्पड़ लगाने लगीं। और कोई चारा न देख मुझे उठ बैठना पड़ा।

ज्वार आया था। समुद्र जगा। चाँद, क्षितिज, कछार मेरी नौका के साथ ही साथ सब हिलने लगे। हुँकारी भर भर कर समुद्र अपनी लहरों को किनारे पर भेजता। वे बहुत दूर तक जा

पहुँचतीं। अपने सामने के सूखे कीचड़ भरे मैदान को वे पार कर चुकी थीं। अब वे क़िले की दीवार पर आक्रमण करने लगीं। बार बार उमङ्ग और जोश भर कर वे उस पर आघात करतीं किन्तु टुकड़े टुकड़े हो उन्हें तितर-बितर हो जाना पड़ता। वे वापस आतीं, फिर से तैयारी करतीं और पुनः उनका आक्रमण होता। अपनी नई उमङ्ग में वे 'मार डालूँगी! मार डालूँगी—' कहती हुई आगे बढ़तीं किन्तु दीवारों की मज़बूती के कारण उन्हें छाती के बल गिरना पड़ता। बड़े ज़ोर का चपेटा लगता। उनके 'इश ..इश...हिश ...हिश ...' की आह निकालते न निकालते उनकी हड्डी हड्डी चूर हो जाती।

अपने सबसे आगे के सैनिकों की यह पराजय देख समुद्र दूर पर सफ़ेद, नंगी, चमकती लपलपाती हुई तलवार ले भाँजता हुआ पैंतरा बदलने लगता। वहाँ से सैनिकों की भाँति मार्च करते हुए क़तार बाँधे दल के दल हिलोरे क्रोध से काँपते हुए आगे बढ़ते। रास्ता न मिलने के कारण वे अक्सर आपस में ही टकरा जाते, कुछ धक्कामुक्की में पिस भी जाते, कुछ मसल जाते, लेकिन बाढ़ आगे बढ़ती ही आती। संग्राम आरम्भ हो गया था।

समुद्र अपनी हुँकार और युद्ध की उमङ्ग के कारण अंधा बन गया था। उसे इस समय अपना-पराया कुछ भी नहीं

सूझता था। अभी कुछ घंटे पहले जिस खिले हुए पर उदास गोल चाँद को वह धीरज बँधा रहा था इस समय उसके भी टुकड़े टुकड़े कर निगल जाना चाहता था। इस समय उसने माँ दुर्गा का भयावना रूप धारण किया था। इसकी सहस्रों जिह्वाएँ लपलपा रही थीं।

वह उग्र रूप धारण कर लड़ाई के मैदान में एक एक ताल कूद जाता। उसके ताल ठोकने की आवाज़ बिजली की कड़क से भी अधिक भयानक बन रही थी। वह इस समय सारे ब्रह्मांड को ही जीवित जाग्रत बना रहा था।

४

किनारे से बहुत दूर गहरे समुद्र में कोई विशाल काला सा दैत्य आ कर खड़ा हो गया। कई धारियों में पर सीधी क़तार में उसकी आँखें लगी थीं। वे छोटी-छोटी थीं पर उनमें चमक थी। सबसे ऊपर मस्तूल पर वाली आँख बड़ी और हरे रंग की थी। यह आसमान तक पहुँच रही थी। नीचे की आँखों में कितनी पीली पड़ गई थीं पर कई अब भी लाल थीं।

यह समुद्री जहाज़ अभी मेरे नाव पर सोते-सोते वहाँ दूर पर आकर टिक गया था। उसकी अगवानी के लिए जेटी के किनारे से कई स्टीमर गये। किनारे पर कुछ कोलाहल भी हुआ। एक शब्द जो बार-बार कानों में पड़ता वह था—

'इतालियानो ! इटालियन !'

मैं चौंक पड़ा। यह नाम सुनकर ही मुझे लुत्ती सी लग जाती है। इस समय तो सारे शरीर, मेरे रोयें रोयें तक में बिजली दौड़ गई। नाव मैंने खोल दी। वह आप से आप क़िले की ओर बढ़ी।

'हाँ, हाँ, उधर ही चलो।' मैंने उसे हुक्म दिया। जब वह तलमलाने लगी तो मैं डाँड़ हाथ में ले उसे खेने लगा। मैं क़िले के पास पहुँचता जा रहा था।

दूर से मुझे एक गाना सुनाई दिया। सुन्दर मेलोडी। मैंने पहचान लिया, उसके सिवा दूसरे और किसी का यह कंठ-स्वर हो नहीं सकता। नाव तेज़ी से खेने लगा। स्वर और भी स्पष्ट सुना।

'हाँ, हाँ, आता हूँ !' मैंने भी चिल्लाकर उत्तर दिया। ठीक इसी समय नाव अटक गई। नीचे बालू थी। मैं कूद पड़ा। क़िले की ओर दौड़ा। पाँव लदफदा रहे थे। क़दम रखते समय 'फचाक-फचाक' आवाज़ होती। थोड़ी दूर पर जाकर रुका। कोई तो नहीं। कहाँ वह मेलोडी, कहाँ वह गाना, कहाँ वह। मुझे धोखा हुआ।

किनारे और क़िले की दीवार पर आघात करने वाली लहरें कह रही थीं —

'लौट जाओ! लौट जाओ!' वे मुझे असल में ही धक्का देकर पीछे लौटाने लगीं।

मैंने पीछे फिर कर देखा। दूर पर का समुद्र कह रहा था—

'इधर आओ! इधर आओ!'

नाव बह गई थी। तैर कर उसे पकड़ा। चढ़ते समय भय हुआ मेरे भार से वह करवट होती जा रही है और शायद अब उसमें पानी भर आये। उसकी माँग की ओर से चढ़ा। खेने वाला एक डाँड़ नीचे गिरा। फिर से कूद कर उसे लिया। नाव घूम गई थी।

'अब किधर?' मैंने उससे पूछा।

'इधर आओ! इधर आओ!' बीच समुद्र पुकार रहा था।

'यह पुकार तो मेरे लिए ही है!'

नाव उधर ही भँसने लगी।

५

बादल, कुहासे और अंधकार ने एक क़तार में खड़े हो मेरा रास्ता रोक दिया। हवा को इधर-उधर चल फिर कर मुझे भटका कर बहा ले जाने का शायद इसके पहले और कोई सुन्दर अवसर ही नहीं मिला था। छोटी फुहिया तक भी इस मौक़े को कब चूकने वाली थी?

मैंने दैत्य की आँखों का निशाना बनाया। पर वे बिलकुल पीली पड़ीं, देखते देखते लीप पोत हुई और कुछ ही देर में लोप भी हो गईं। रास्ता रोकने वालों को धक्का देता उन्हें पीछे हटाता मैं अन्दाज़ से आगे बढ़ने लगा। मुझे जल्दी थी। सारे शरीर की ताक़त लगा मैं नौका खेने लगा। शायद बहुत दूर निकल गया।

'इधर आओ! इधर आओ!' समुद्र की आवाज़ अब भी उतनी ही दूर पर सुनाई देती।

'किधर?' मैंने पूछा।

वही पुराना उत्तर। और भी ताक़त लगा कर खेने लगा। पसीने पसीने हो गया। हाथों के छाले बहुत दर्द करने लगे। मैं रुका।

आहट।

'झक्...झक्...छिप्...छिप्...'

मेरे पीछे से कोई छोटा अगिनबोट आ रहा था। उसकी धुँधली, आँसुओं से लिपी-पुती हुई आँख भी दिखाई पड़ी। वह मेरे पीछे नहीं बल्कि बग़ल से थोड़ी दूर पर निकल रहा था। अभी वह सामने नहीं आ पाया था पर पास अवश्य ही आता जाता था। अब कुछ आदमियों जैसी आवाज़ भी सुनाई देने लगी।

'मैं नहीं जाऊँगी ! मुझे छोड़ दो ।'

उसी की आवाज़। भूल की कोई भी गुंजायश नहीं। बहुत ही करुण। ठीक उसके हृदय के समान दर्द भरा। फिर वही आवाज़...।

'उह...' आवाज़ मेरे गले से निकल नहीं पाई थी, उसी समय ज़ोरों से 'झप्...'।

'क्या ?' मैं एक क्षण के लिए पत्थर बन गया।

'अच्छा हुआ। बला टली।' अफ़सर कह रहा था।

अगिनबोट घूमा। जिधर से 'झप्...' हुई थी ठीक उसी पर से। पता नहीं क्या बरबराता हुआ मैं उस ओर लपका। अगिनबोट पीछे लौट गया। उसकी रोशनी ओझल हुई। आवाज़ बन्द।

आदमियों द्वारा खेले जाने वाले भयानक नाटक का कहीं भी निशान नहीं।

६

'कहाँ ?' मैं ज़ोर से चिल्ला उठा।

आवाज़ लहरों में टकरा कर नष्ट हो गई। कोई प्रतिध्वनि तक नहीं। सिर्फ़ सुनाई देता—

'इधर आओ ! इधर आओ।'

'दीदी !'

'ही ही' लहरों ने उत्तर दिया।

'इधर आओ! इधर आओ!' दूर पर समुद्र की पुकार। यह मुँह बाये, लम्बी जीभ निकाले मुझे ग्रास कर लेने के लिए दौड़ी आती हुई पुकार थी।

मेरे भीतर की आवाज़ बन्द हो चुकी थी। समुद्र वा आकाश वर्षा के कारण और नहीं दिखाई दिये। लहरें जीभ ऐंठ ऐंठ कर कराहने लगीं।

वही पुकार। हवा की सिसक। फूही का टिप टिप।

चारों तरफ़ समुद्र का हाहाकार।

